लोक हितकारी विज्ञान माला
अंतरिक्ष यान की कहानी

अंतरिक्ष यान की कहानी

यू. ग्लास्कोव एवं यू. कोलेसनिकोव

अंतरिक्ष यान की कहानी

सम्पादन एवं प्रस्तुति

डा. संजीव शर्मा

विज्ञान लोक, दिल्ली-110032

अंतरिक्ष यान की कहानी

अंतरिक्ष के भावी अन्वेषकों को

"वैज्ञानिक तथा स्कूली छात्रों के बीच ज्ञान-वार्ता" पुस्तक-माला की एक प्रथम पुस्तक में, जिसमें उस अज्ञात का वर्णन किया गया है जिसकी खोज तथा अध्ययन अभी आपको करना है, लिखा है : "भविष्य में आपको चन्द्र उपग्रह का अध्ययन करना है, जिसकी सतह पर चषक ही चषक हैं।...इसी प्रकार भविष्य मे आपको मंगल ग्रह पर उतरना है, शुक्र ग्रह की वाष्पित भट्ठी मे प्रवेश करना है, विशाल ग्रहो के उपग्रहों पर अनुसंधान स्टेशनों का निर्माण करना है तथा वृहस्पति और शनि ग्रहों के अदृश्य वायुमंडल को समझना है, सूर्य, निकट-सौर और अन्तर-तारकीय आकाश, उसके पश्चात् असख्य, एक के बाद एक तारो का, जिनकी सूर्य के साथ काफी समानता तथा भिन्नता भी है, अध्ययन करना है।... वस्तुतः आप स्वयं ही अन्तरिक्ष-यात्रियों से मिलने के लिए उतावले हो जायेंगे, क्योंकि यह कहना शायद ही आवश्यक हो कि अंतरिक्ष की खोज कितनी आकर्षक है ।"

लेकिन इस खोज को आरम्भ करने से पूर्व आपको इसके लिए आवश्यक सभी तकनीकी उपकरणो का भली प्रकार अध्ययन करना होगा और उनके ज्ञान मे पूर्ण दक्षता प्राप्त करनी होगी। यह सब ज्ञान न केवल वर्तमान अन्तरिक्ष-यानो और स्टेशनों पर कार्य करने के लिए आवश्यक है, अपितु नये, अभी अज्ञात, तारों व ग्रहों पर उतरने के उद्देश्य से यानों के निर्माण के लिए भी आवश्यक है।

रॉकेट द्वारा अंतरिक्ष-यात्रा

अनेक कृत्रिम स्पुतनिक—विभिन्न प्रकार के कार्य करने वाले स्वचलित उपकरण—हमारे ग्रह के चारों ओर उड़ान कर रहे हैं। अन्तरिक्ष में इन्हें रॉकेटों द्वारा पहुंचाया गया है। मानव द्वारा भेजे गये स्वचलित उपकरण सौर-विन्यास के ग्रहों तक तथा उनसे भी दूर जाते हैं। ये सब पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण सीमा के बाहर उसी बल—अर्थात् रॉकेट द्वारा भेजे गये हैं।

अन्तरिक्ष यातायात वाहन—रॉकेट—की कहानी हम उसके शक्तिशाली इंजन से आरम्भ करेंगे। इसके कार्य का नियम कठिन नहीं है। रॉकेट इंजन का क्षेप-बल उसके द्वारा उन गैसों के निष्कासन से बनता है जो ईंधन के दहन होने के परिणामस्वरूप बनती हैं। समय की इकाई में गैस की जितनी अधिक मात्रा निष्कासित होगी, अभिक्रिया बल—इंजन का क्षेप-बल—उतना ही अधिक होगा। समय की इकाई मे रॉकेट से निष्कासित होने वाली गैसों के द्रव्यमान को परिवर्तित करके, या गैस के प्रवाह की गति को नियन्त्रित करके, क्षेप-बल पर नियंत्रण रखा जा सकता है।

रॉकेट का ईंधन दो प्रकार का होता है : द्रवित तथा ठोस। इसी आधार पर रॉकेट इंजनों को दो मूल ग्रुपों में विभाजित किया गया है। आइए, पहले हम द्रव-नोदित रॉकेट—द्र० नो० रॉ०—की बनावट को समझें।

ईंधन के दहन के उत्पाद, क्षेप बनाते है। दहन कक्ष—रॉकेट के इंजन का मुख्य भाग है। बहुत अधिक क्षेप-बल प्राप्त करने के लिए केवल दहन ही पर्याप्त नहीं है, अपितु एक प्रबल और अपेक्षाकृत निरंतर प्रज्वलन, दीर्घकालीन विस्फोट की भाँति, आवश्यक है। शायद आप सब ने देखा होगा कि एक खपच्ची की शान्त ज्वाला, ऑक्सीजन के प्रवाह में किस प्रकार फुलझड़ी की द्युति के समान ज्वलित हो उठती है। इस स्कूली
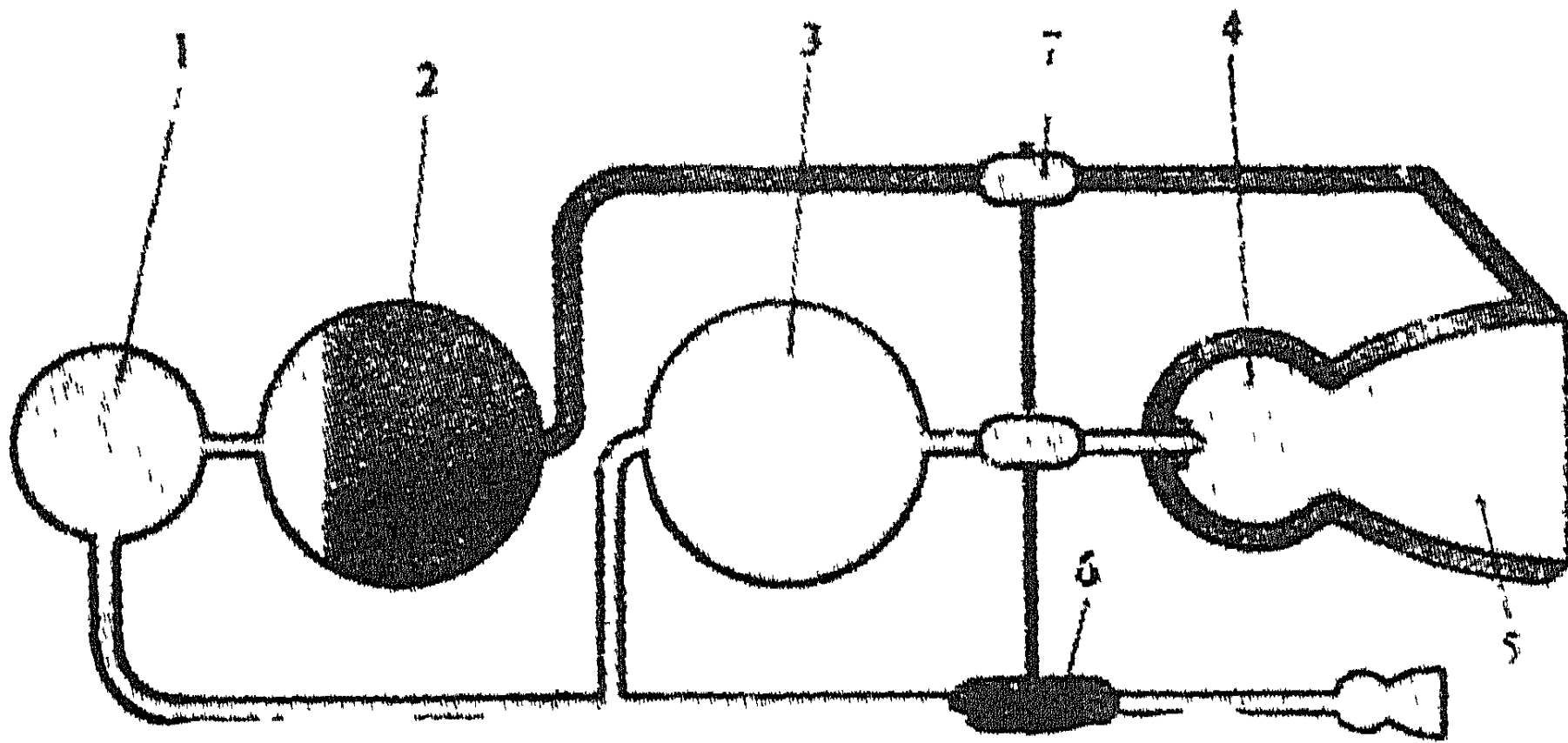
द्रव नोदित रॉकेट के इंजन का आरेख

1. सम्पीडित गैस 2. ईंधन 3. उपचायक 4. दहन कक्ष 5. तुड
6. टरबाइन 7. पम्प
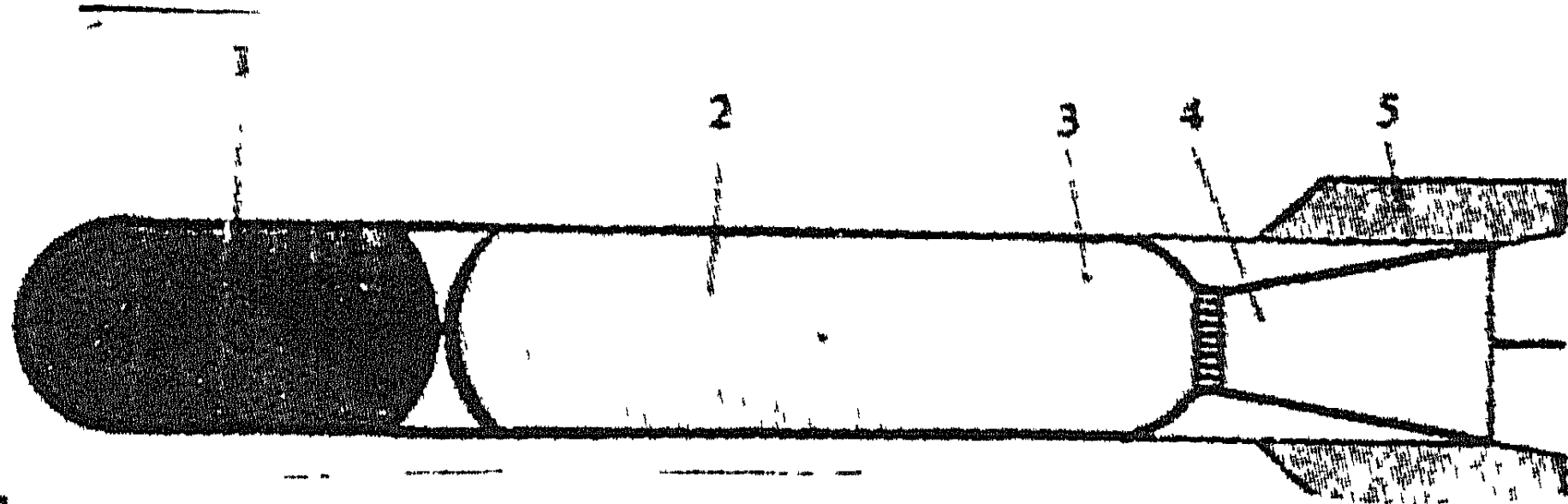
ठोस नोदित रॉकेट के इंजन का आरेख
1. आवश्यक सामग्री 2. बारूद 3. दहन कक्ष 4. तुड 5. स्थायीकारी

प्रयोग से स्पष्ट हो जाता है कि रॉकेट इंजन में दो टैंक क्यों होते हैं : एक ईंधन के लिए; दूसरा उपचायक के लिए। अधिकांशतः, उपचायक के रूप में द्रवित ऑक्सीज़न प्रयुक्त की जाती है, और ईंधन के रूप में— तेल के आसवन के उत्पाद, या नाइट्रोजन एवं हाइड्रोजन के यौगिक।

ईंधन और उपचायक दहन कक्ष में अपकेन्द्री पम्पों द्वारा भेजे जाते हैं, या अक्रिय गैसों द्वारा निष्कासित किये जाते हैं। पम्पों को चालू करने के लिए गैस टरबाइन का प्रयोग किया जाता है। टरबाइन के लिए आवश्यक गैस, गैस-जनित्र में पदार्थों के विघटन या दहन के फलस्वरूप बनती है। कभी-कभी ये पदार्थ स्वयं ईंधन और उपचायक ही होते हैं।

लाल-तप्त गैसें दहन कक्ष के बाहर अभिक्रिया तुंड में से निष्कासित की जाती हैं। कक्ष और तुंड की दीवारें दोहरी होती है। इनके बीच के अवकाश में इंजन के कार्य के समय ईंधन का शीतन घटक भर जाता है। इस प्रकार की शीतन "कमीज़", इन भागों को गलित होने से बचाती है।

हमने कहानी का आरम्भ हालाँकि द्र०नो०रॉ० से किया है, तथापि ठोस नोदन रॉकेट—ठो०नो०रॉ०—का निर्माण सर्वप्रथम हुआ था। द्वितीय विश्व महायुद्ध के समय सोवियत सघ ने "कात्यूशा" नामक बहु-स्फोट वाले तोप के गोले प्रयोग किये थे। इनकी अभिक्रिया बारूद, इसी प्रकार के इंजन से युक्त थी।

ठो०नो०रॉ० बहुत पहले से ज्ञात नोदक रॉकेटों का प्रत्यक्ष वंशज है। इसकी बनावट काफी सरल है। इसमें ईंधन—विशेष रॉकेट नोदक—सीधा दहन कक्ष में ही रखा जाता है; और, कक्ष के साथ ही तुड होता है। यही इसकी संपूर्ण बनावट है।

इसकी बनावट सरल होते हुए भी, अंतरिक्षयानिकी में ठो० नो० रॉ० का प्रयोग द्र० नो० रॉ० की अपेक्षा कम प्रचलित है। ठोस ईंधन वाले काफी विशाल आकार के इंजन बहुत अधिक क्षेप बना सकते है, लेकिन इनकी कार्य-अवधि काफी कम होती है। कभी-कभी इनका उपयोग—स्टार्ट के बाद—शक्तिशाली रॉकेट वाहकों की गति को त्वरित करने के लिए किया जाता है। यह सच है कि इस प्रकार की उड़ान मे G-बल (गुरुत्वीय-बल) अत्यधिक हो जाता है जिसके कारण मानवयुक्त यान कक्ष में भेजने के लिए ठो० नो० रॉ० को प्रयुक्त करने में कठिनाई उत्पन्न हो जाती है जिससे अंतरिक्ष-यात्रियों के लिए काफी समस्या पैदा हो सकती है। अंतरिक्ष-यानों पर नोदन इंजनों का उपयोग, उदाहरणतया, मृदु अवतरण या संकटकालीन स्थिति में रक्षा के लिए किया जाता है। लेकिन इसका सविस्तार वर्णन हम अंतरिक्ष-यान के अध्याय मे करेंगे।

रॉकेट का हृदय—रॉकेट का इंजन: अंतरिक्ष में अंतरिक्ष-यान और कक्ष स्टेशन, अन्तरग्रहीय उपकरण और पृथ्वी के कृत्रिम स्पुतनिक रॉकेटों द्वारा भेजे जाते है जिनमें शक्तिशाली रॉकेट इंजन होते हैं। ये बहुत अधिक क्षेप उत्पन्न करते हैं। लेकिन अंतरिक्षीय तकनीक में विशाल बल वाले उपकरणों के अतिरिक्त निम्न क्षेप वाले नियन्त्रण इंजनों का उपयोग काफी प्रचलित है। ये शक्तिशाली इंजनों की प्रतिकृतियाँ हैं। इनके कार्य का नियम यद्यपि अपरिवर्तित रहता है, तथापि नियन्त्रण इंजनों की अपनी विशेषताएं होती है: ईंधन अंतःक्षेपण का विन्यास इनमें कम जटिल होता है; इनमें नोदक और उपचायक का पम्पन नही किया जाता, बल्कि सपीडित निष्क्रिय गैसों द्वारा टैंकों से निष्कासित किया जाता है; ईंधन को एक ही टैंक से कई दहन कक्षों में भेजा जा सकता है, इत्यादि।

रॉकेट इंजन अत्यधिक लघु रूप के भी होते हैं। इनमें से कुछ का आकार इतना छोटा होता है कि उन्हें हथेली पर रखा जा सकता है। इन सूक्ष्म इंजनों का क्षेप बहुत ही कम होता है। लेकिन कृत्रिम स्पुतनिक या अंतरिक्ष-यान को खोलने के लिए, और उसे आवश्यक स्थिति में कुछ समय तक सुरक्षित रखने के लिए यह बल पर्याप्त होता है: कारण यह कि अंतरिक्ष में घर्षण नहीं है।

इसी प्रकार, लघु रॉकेट इंजनों वाले विशेष उपकरणों का भी निर्माण किया गया है। इन्ही की सहायता से—स्वतंत्र उड़ान के समय—अंतरिक्ष-यात्री केबिन के बाहर चलते-फिरते हैं और विभिन्न कार्य करते है। इस प्रकार के उपकरणो को हाथ में भी पकड़ा जा सकता है और अंतरिक्ष-कवच के साथ भी बाँधा जा सकता है।

सरलतम सूक्ष्म इंजनों का क्षेप संपीडित गैस की धारा द्वारा बनता है। धात्विक सिलिंडरों में अत्यधिक संपीडित नाइट्रोजन या वायु भर दी जाती है। उच्च दाब के कारण, उपकरण के निरंतर कार्य के लिए पर्याप्त आरक्षित गैस कम आयतन मे रखी जा सकती है। अभिक्रिया
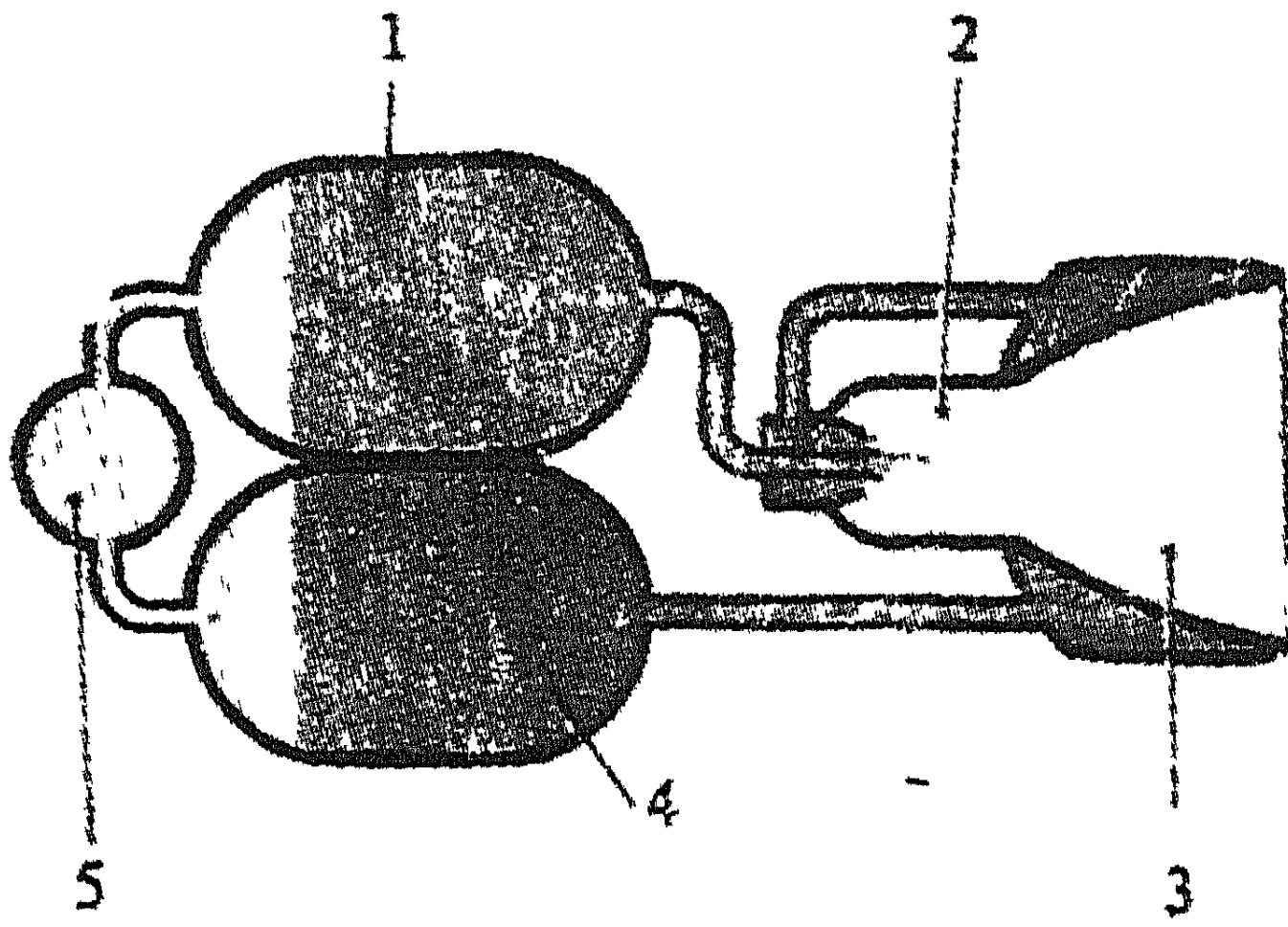
सूक्ष्म द्रव नोदित रॉकेट के इंजन का आरेख 1. उपचायक 2. दहन कक्ष 3. तुड 4. ईंधन 5. सम्पीडित गैस
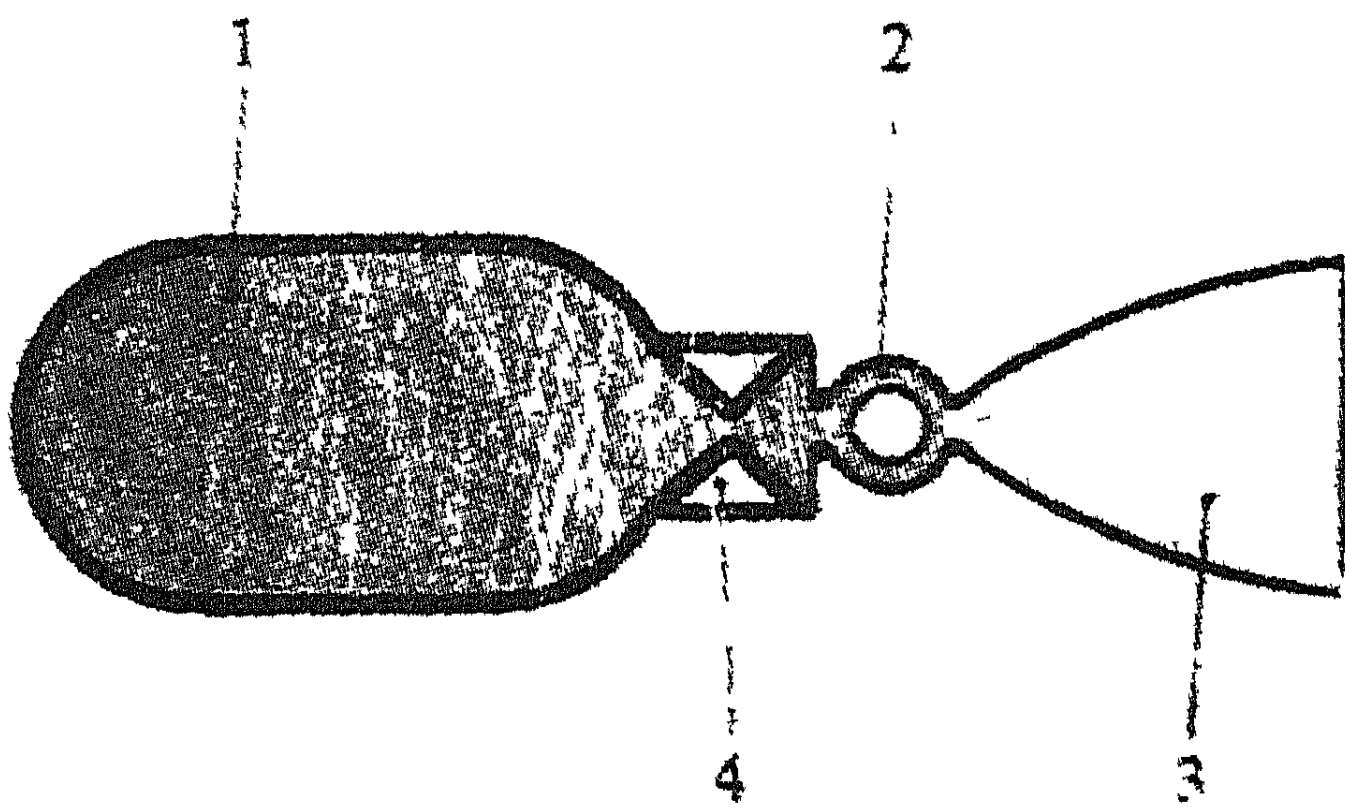
गैस नोदित रॉकेट के इजन का आरेख 1. सम्पीडित गैस 2. वाल्व 3. तुड 4. रिडक्टर

तुंड के साथ सिलिडर को जोड़ने वाली नलिका मे एक गैसीय रिड़क्टर, जो गति की चाल नियत्रित करता है, और एक वैद्युतचुम्बकीय वाल्व होता है। रिड़क्टर दाब कम करता है, ताकि काफी अधिक, एक समान और निरन्तर, क्षेप बना रहे। वाल्व गैस की मात्रा को तुड मे निष्कासित करता है। इंजन व्यावहारिक रूप से क्षण भर मे चालू हो जाता है— वाल्व को केवल खोलना ही पर्याप्त होता है। अतरिक्षीय उपकरणो पर नियंत्रण रखने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है : अतरिक्षीय चाल के साथ कार्य करते समय मामूली-सा विलम्ब भी अस्वीकार्य है।

अब, "ठोस गैस" पर आधारित सूक्ष्म इजनो का निर्माण भी किया जा चुका है। कुछ पदार्थ, जैसे सभी को ज्ञात नेफ्थेलीन या अमोनिया

के लवण, गर्म किये जाने पर, ठोस अवस्था से—तरल अवस्था की उपेक्षा करके—एकदम गैसीय अवस्था मे परिवर्तित हो जाते हैं। इस प्रक्रिया को ऊर्ध्वपातन कहते है। "क्रिस्टलीय ईधन" को गैस मे रूपांतरित करने के लिए अंतरिक्षवाहित कार्यकारी उपकरणो द्वारा उत्सर्जित ऊष्मा, या वैद्युत धारा के लघु आवेगों की ऊष्मा ही, पर्याप्त होती है। लेकिन साधारण गैस इंजन की तुलना मे, ऊर्ध्वपातज ईधन पर कार्य करने वाले सूक्ष्म इंजन को चालू करने के लिए बहुत अधिक समय की आवश्यकता होती है।

निम्न क्षेप वाले इजनों की विविधता के कारण इंजनों का चयन करना अधिक सरल हो जाता है। एक ही अंतरिक्ष-यान पर विभिन्न प्रकार के नियंत्रण उपकरणो को स्थापित करके कुछ इजनो की कमियों की क्षतिपूर्ति अन्य इंजनो के गुणो द्वारा की जा सकती है। ऐसे संयोजन की सहायता से अंतरिक्ष उपकरणो के नियत्रण के लिए उत्कृष्ट विन्यासों का निर्माण किया जा सकता है।

नियमत: नये प्रकार के रॉकेट इंजनों—वैद्युत रॉकेट इंजनों—का भविष्य बहुत आशाजनक है। हम पहले ही बता चुके है कि रॉकेट इंजन का क्षेप-बल गैसीय प्रवाह की गति पर निर्भर करता है। अत:, वैद्युत रॉकेट इजनो मे तुड से निकलने वाली गैस की गति इतनी तीव्र होती है कि ईधन की रासायनिक ऊर्जा पर आधारित उपकरणो के लिए यह गति अप्राप्य है। यह उनकी एक विशेषता है। लेकिन इसके लिए वैद्युत ऊर्जा की विशाल मात्रा की आवश्यकता होती है। और रॉकेट पर शक्तिशाली, फलत: भारी, बिजलीघर स्थापित करना अभी असम्भव है; फिर भी, वैद्युत रॉकेट इजनों के प्रथम प्रायोगिक मॉडल अंतरिक्ष यात्रा कर चुके हैं।

रॉकेट के सर्वाधिक महत्वपूर्ण पुर्जे तथा उपकरण: हमने रॉकेट के साथ अपना परिचय इंजन से आरम्भ किया। लेकिन रॉकेट मोचक में और भी कई अन्य, इतने ही महत्वपूर्ण, पुर्जे तथा उपकरण होते है :
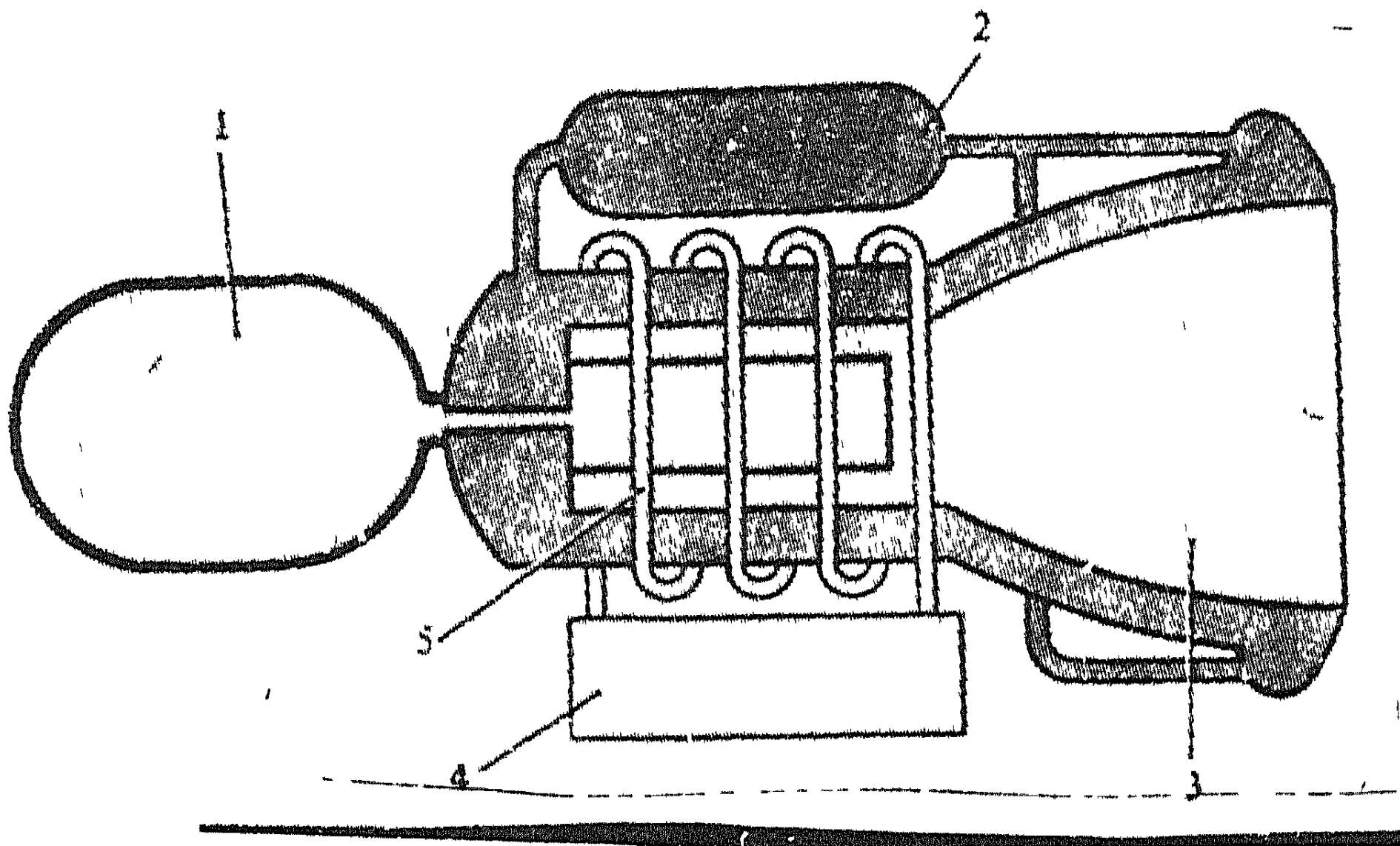
विद्युत-तापीय रॉकेट के इंजन का आरेख
1. आवश्यक सामग्री 2. प्रशीतित्र 3. तुड 4. उच्च आवृत्ति वैद्युत जनित्र 5. प्रेरण कुंडली

अब हम इनमे से सर्वाधिक महत्वपूर्ण भागो का वर्णन करेंगे ।

किसी भी उड्डयन उपकरण की भाँति, रॉकेट के लिए आवश्यक है कि वह अत्यधिक हल्का, लेकिन सुदृढ़, हो । परन्तु इन दोनों बातो का सम्मिलन बहुत कठिन है। फिर भी रॉकेट अभिकल्पकों ने इस समस्या का समाधान कर दिया । उदाहरण के लिए, उन्होंने विशाल ईंधन टैंकों से रॉकेट का मुख्य भाग बनाया, और इस प्रकार भार कम किया । रॉकेट के लिए और अधिक दृढ़ता वाले नये ऐलॉयों का निर्माण किया गया ।

यातायात का कोई भी एक साधन, स्टीयरिंग नियंत्रण के बिना असम्भव है । रॉकेट पर भी स्टीयरिंग उपकरण होता है । प्रारम्भिक रॉकेटों पर यह मोड़ने वाली प्लेटो के रूप में होता था, जो तुड मे से गैसो के निष्कासन स्थान पर—इनके मार्ग मे—स्थापित की जाती थी । स्टीयरिंग के समतल पर टकरा कर गैस का प्रवाह एक ओर को विचलित हो जाता था, जिससे रॉकेट मुड़ जाता था । लेकिन गैस की लाल-तप्त धारा, उच्च गलनांक वाली धातुओं के लिए भी अनुपयुक्त माध्यम है । इसीलिए कुछ

आधुनिक रॉकेटों में मुख्य इंजन सर्वदिशी सधियों (कार्डन) की सहायता से एक निश्चित कोण पर मुड सकते हैं; और, कुछ रॉकेटों मे विशेष मोड़ने वाले स्टीयरिंग रॉकेट इंजन अलग से स्थापित किये जाते हैं। रॉकेट पर स्टीयरिंग इंजनों की संख्या एक से अधिक हो सकती है। स्टीयरिंग इंजन सुवाह्य भी होते हैं। ऐसी स्थिति में कार्य के समय इस प्रकार के इंजनों को एक नियत क्रम में चालू करते हैं।

अनेक रॉकेट दो या तीन रॉकेटों, जिन्हें रॉकेट चरण कहते हैं, से बने होते हैं। क०अ० त्सीओलकोव्स्की ने ऐसे रॉकेटों का नाम रॉकेट-गाड़ी रखा था। संयोजित रॉकेट के चरण, नियमतः, क्रमागत रूप से कार्य करते हैं। आरम्भ में प्रथम चरण सम्पूर्ण "गाड़ी" को "चलाता" है। इसका ईधन पूर्णतया समाप्त होने के पश्चात्, प्रथम चरण रॉकेट से पृथक होकर पृथ्वी पर गिर जाता है, ताकि भावी उड़ान के लिए शेष द्रव्यमान कम हो जाय। इसके उपरान्त द्वितीय चरण के इंजन चालू हो जाते है। ये रॉकेट के शेष भाग की उड़ान जारी रखते हैं। कुछ समय बाद द्वितीय चरण भी पृथक होकर गिर जाता है। अब क्रिया तृतीय चरण पर पहुँचती है। यह चरण (यदि रॉकेट तीन चरणों वाला है) केवल आवश्यक भार ही ढोता है, अर्थात् स्वचलित स्टेशन या अंतरिक्ष-यान—और केवल इस का वेग ही अंतरिक्षीय मान प्राप्त करता है।

प्रायः यंत्र कक्ष अन्तिम चरण मे ही रखा जाता है। इस कक्ष मे उड़ान का नियंत्रण करने वाले उपकरण होते हैं। यही से निर्देश दिये जाते हैं: इंजन चालू या बन्द किये जायें, चरणों का पृथक्करण किया जाय, दिशा मे परिवर्तन किया जाय या उडान का आवश्यक वेग बना रहने दिया जाय, आदि।

रॉकेट का ऊपरी भाग हमेशा नासा शंकु द्वारा ढका होता है। वायु-मंडल के घने स्तरों मे से रॉकेट के गुजरने के समय, यह वायु का प्रति-रोध कम करता है, और इस प्रकार, उडान के समय ईंधन का व्यय भी
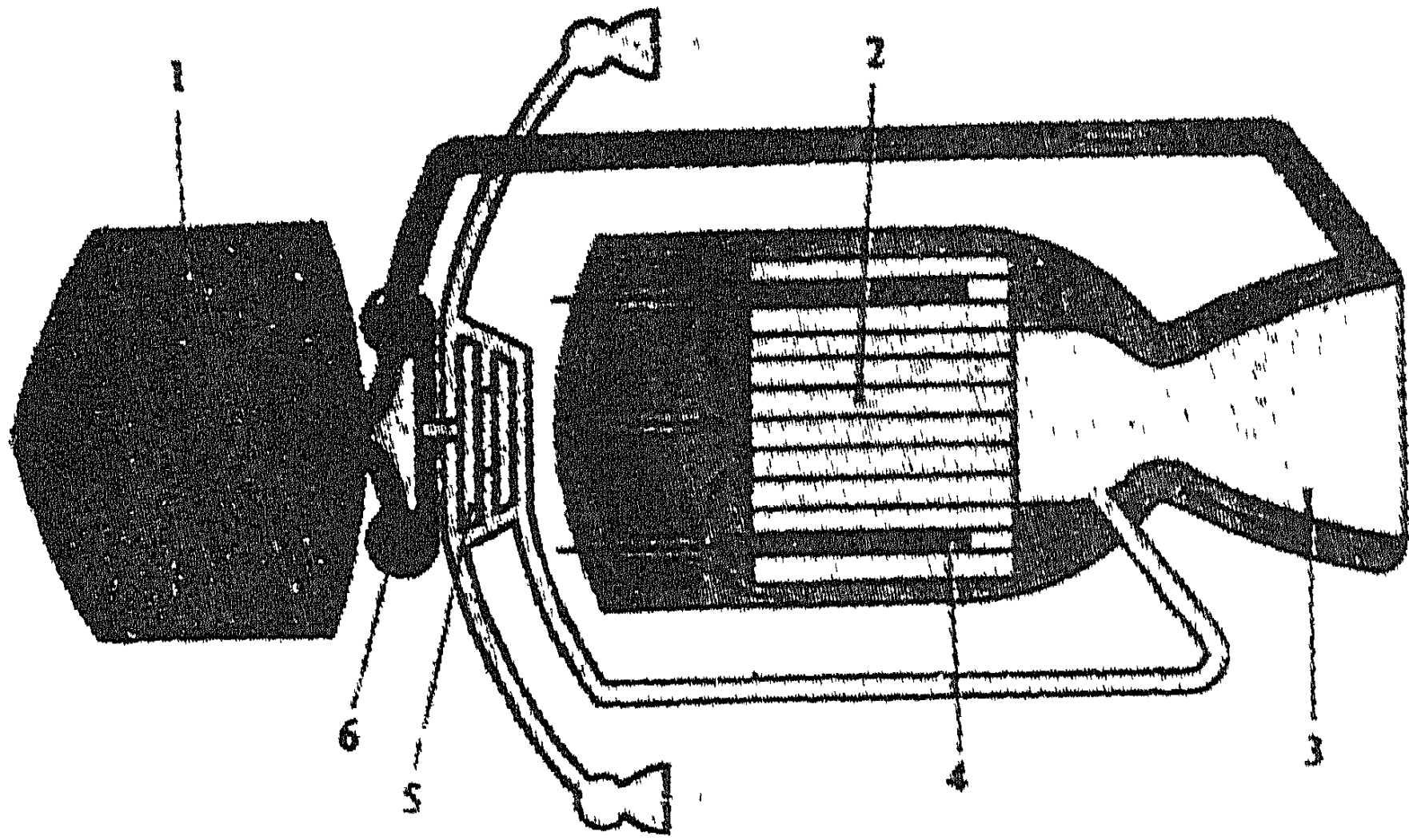
नाभिकीय रॉकेट के इंजन का आरेख
1. द्रवित हाइड्रोजन 2. रिऐक्टर का क्रोड (केन्द्र) 3. तुड 4. नियंत्रण शैफ्ट
5. टरबाइन 6. पम्प

कम करता है। इसके अतिरिक्त, कक्षक मे रॉकेट के प्रवेश करने पर यह इसके नीचे स्थित स्टेशन या अन्तरिक्ष-यान की वायु के साथ घर्षण से रक्षा करता है और उसे अत्यधिक गर्म नहीं होने देता।

रॉकेट यदि अतरिक्ष-यान का वहन अंतरिक्ष-यात्रियों के साथ कर रहा होता है, तो इसके शीर्ष पर एक और छोटा-सा रॉकेट स्थापित किया जाता है। आरम्भ मे या उड़ान के प्रथम चरण में, आपातकालीन स्थिति मे, यह यात्रियो की सुरक्षा करता है। आवश्यक क्षण पर यह छोटा रॉकेट, अंतरिक्ष-यात्रियो सहित कक्ष को एक सुरक्षित दूरी पर ले जा सकता है।

अंतरिक्ष पत्तन (कॉस्मोड्रोम) से अंतरिक्ष में : नये वायुयान अपने स्थायी कार्य के स्थान तक स्वयं उड़ान भरते है। पोत प्रांगण से पजी पत्तन तक नये समुद्री पोत स्वयं जाते है। लेकिन निर्माण-कारखाने से प्रमोचन स्थल तक रॉकेट स्वय एक यात्री होता है। रॉकेट का परिवहन प्रायः सामान्य रेलगाडी द्वारा किया जाता है, क्योकि वायुयान, नियमतः, इसके लिए बहुत छोटे है।

लीजिए, रॉकेट के चरण अंतरिक्ष पत्तन पर आ गये हैं। यहां से "रॉकेट गाड़ी" अंतरिक्ष में जायेगी। आइए, अंतरिक्ष पत्तन का सिहा-वलोकन करें। सर्वप्रथम हमारा ध्यान एक विशाल इमारत आकृष्ट करेगी— मोंताज परीक्षण इमारत (मो० प० इ०)। यहां रॉकेट का संयोजन तथा परीक्षण किया जाता है। मो० प० इ० के हॉलों मे, सेतु क्रेन और रेल-गाड़ियों के अतिरिक्त, रॉकेट के लिए अनेक नियंत्रण और परीक्षण यंत्र होते हैं। यहाँ रॉकेट के चरणों के सभी हिस्सों और उपकरणों का पुनः परीक्षण किया जाता है क्योंकि परिवहन के समय किसी भी प्रकार की क्षति होने की सम्भावना होती है। और, केवल पूर्णतया संयोजित रॉकेट में ही उड़ान के समय चरणों की पारस्परिक क्रिया के फलस्वरूप यंत्रों के कार्य का परीक्षण किया जा सकता है।

इसी से संलग्न इमारत में, अंतरिक्ष-यान का—इतना ही परिशुद्ध—परीक्षण होता है। यहाँ स्थित सभी यन्त्रो का कार्य एकदम त्रुटिरहित होने पर ही अंतरिक्ष-यान को रॉकेट के साथ जोड़ने की अनुमति दी जाती है।

अंत में, जब सभी विशेषज्ञ संतुष्ट हो जाते हैं तो यान को रॉकेट के साथ जोड़ दिया जाता है, और नासा शंकु द्वारा बंद कर दिया जाता है।

वाहक-स्थापक (ट्रांस्पोर्टर-फिटर) रेलपथ पर धीरे-धीरे कॉस्मोड्रोम की ओर चल रहा है। रॉकेट उत्थापन क्रेन पर रखा हुआ है, जो एक

बहुचरणी रॉकेट का अंतरिक्ष-यान से स्टार्ट तथा पृथ्वी पर इसकी वापिसी 1. स्टार्ट 2. प्रथम चरण का पृथक्करण 3. शीर्ष विक्षेपक का प्रस्फोट तथा दुर्घटना से बचाव वाले व द्वितीय चरण वाले इंजन का पृथक्करण 4. अंतरिक्ष-यान का कक्षक में आना व तृतीय चरण का पृथक्करण 5. कक्षक में अंतरिक्ष-यान की उड़ान तथा सौर बैटरी के पैनल व ऐंटेनाओं का खुलना 6. इंजन के ब्रेकों को कार्य अवस्था में लाना 7. यान के भागों का पृथक्करण 8. अंतरिक्ष-यान का नियन्त्रित कार्यक्रम के अनुसार वायुमंडल में प्रवेश 9. मुख्य पैराशूट द्वारा अतरिक्ष से वायुमंडल में उतरना 10. मृदु अवतरण के लिए सम्बंधित इंजनो को कार्यगति में लाना

2
3
4
5

6
7
8
9
10
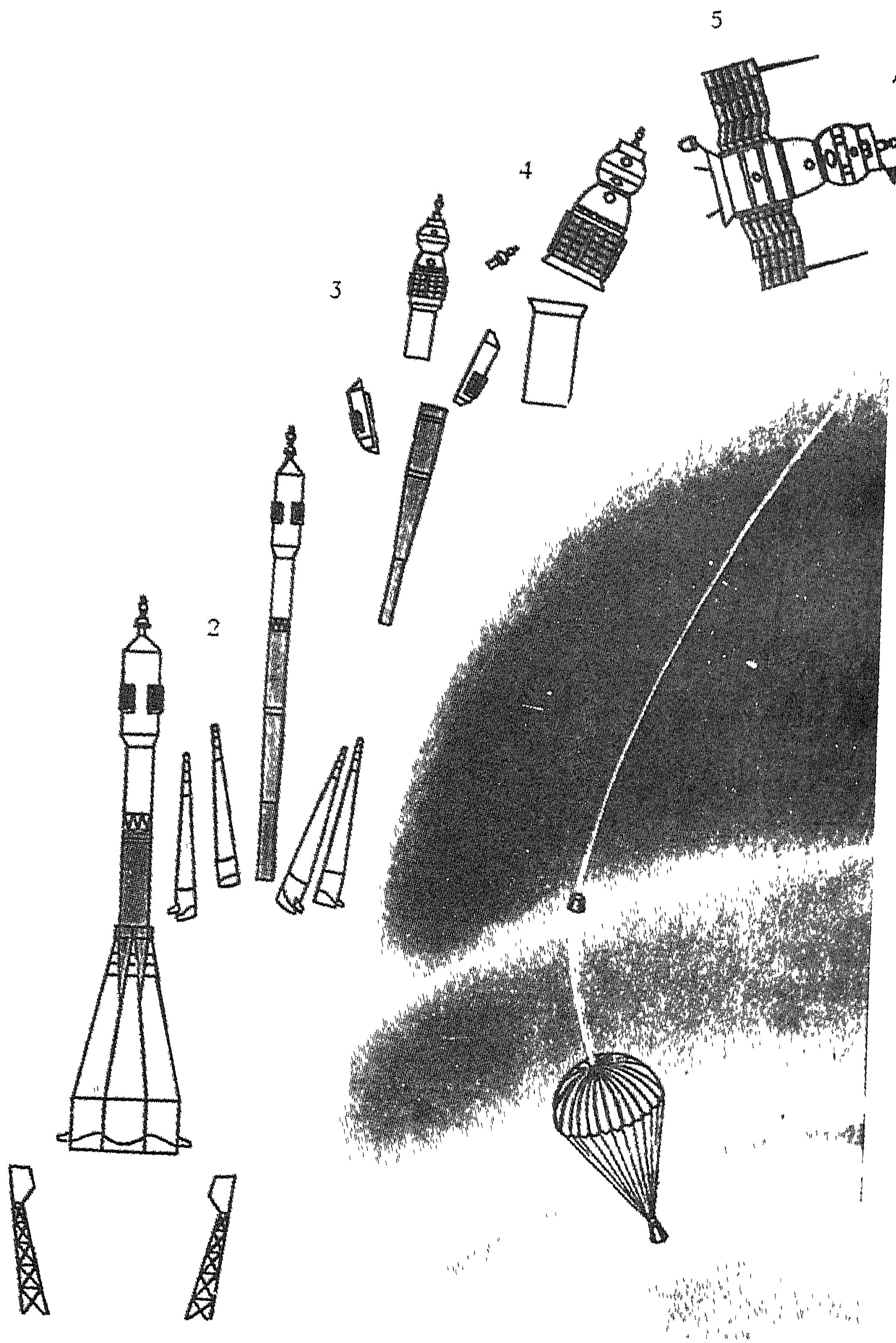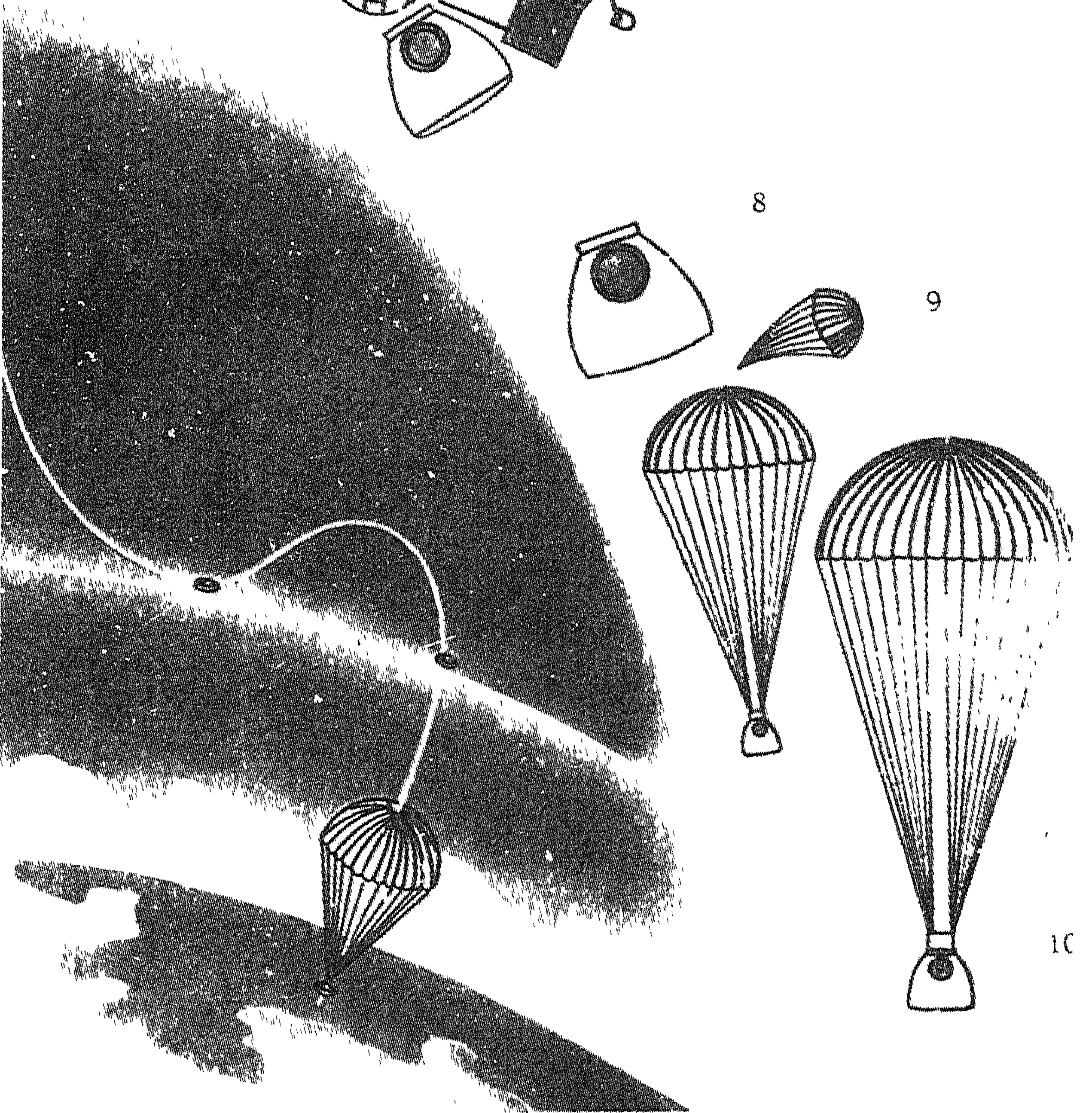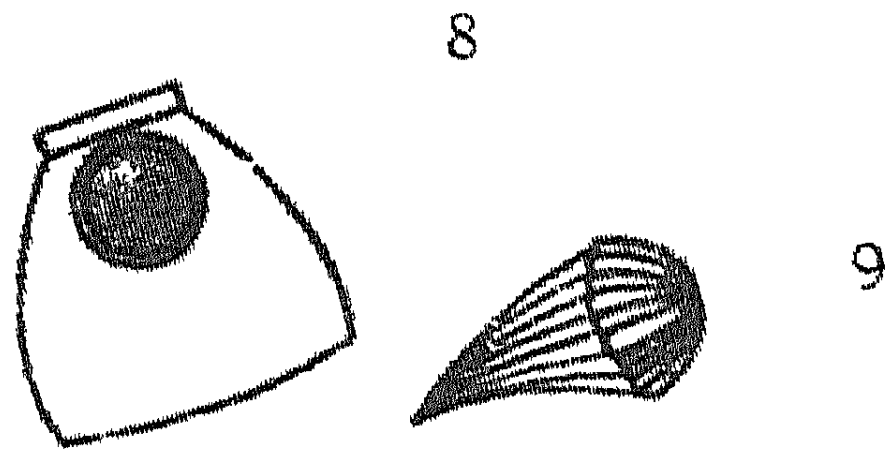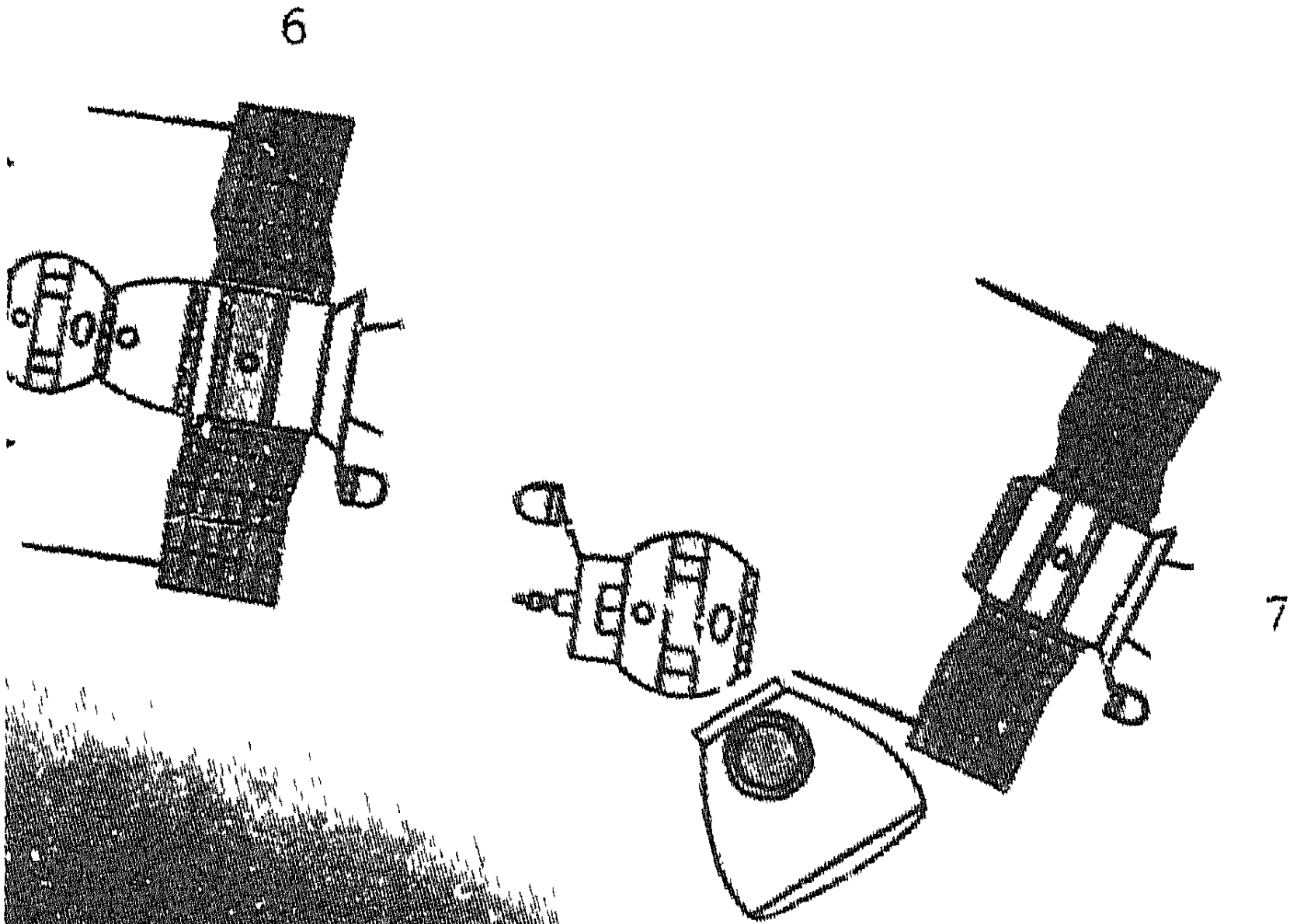
धात्विक संरचना है. जिसे वाहक के प्लेटफार्म के साथ सर्वदिशी सधियों द्वारा बांधा गया है । गाड़ी आरम्भ-स्थल की ओर बढ़ रही है ।

वाहक एक अतिविशाल, कंक्रीट से बनी, विशेष रचना के पास रुक जाता है । यह भूरे रंग की कंक्रीट से बनी बृहत् रचना बांध जैसी लगती है । अंतरिक्ष पत्तन का आरम्भ यन्त्र हमारे सामने है । अब रॉकेट को ऊर्ध्वाधिर रूप में, अर्थात् कार्यकारी स्थिति मे, स्थापित करना है ।

वाहक के द्रवचालित जैक चालू कियें जाते हैं । उत्थापन क्रेन, इस पर रखे हुए रॉकेट के साथ, प्लेटफार्म से पृथक होती है तथा धीरे-धीरे ऊपर उठती है । कुछ समय उपरान्त, रॉकेट हल्के-से उस आरम्भ यंत्र के ऊपरी भाग पर टिक जाता है जिसे प्रमोचन यंत्र कहते हैं । इसी के साथ-साथ बहुत ऊँचे धात्विक रेक उठते है । यह केबिल-मस्तूल और वितरण टॉवर है । यह टॉवर रॉकेट को चारों ओर से जकड़ लेता है और इस पर विभिन्न ऊँचाईयों पर प्लेटफार्म होते हैं । इन प्लेटफार्मो तक लिफ्ट द्वारा पहुंचा जा सकता है । मस्तूल से रॉकेट के बाँध द्वारो तक, वैद्युत केबिलों के मोटे बंडल बिछे होते हैं । यान पर वैद्युत ऊर्जा के अपने स्रोत होते है, लेकिन उनकी आवश्यकता उड़ान के समय होगी । अभी तो रॉकेट यंत्रों के आरम्भ-पूर्व अतिम परीक्षण, अतरिक्ष पत्तन से बिजलीघर की ऊर्जा की सहायता से किये जाते हैं ।

ये परीक्षण कार्य शीघ्र ही समाप्त हो जाते है । कार्य विशेषज्ञों के लिए अब सबसे कठिन क्षण आ पहुचता है । भूमिगत भंडारो से पम्प स्टेशनों द्वारा रॉकेट के सिलिंडरों मे सैकड़ो टन ईधन और उपचायक (द्रवित ऑक्सीजन) डाले जाते हैं । द्रवित ऑक्सीजन वाष्पित हो जाती है तथा रॉकेट चारों ओर से श्वेत अभ्रों द्वारा घिर जाता है ।

यान की उड़ान आरम्भ होने मे अब केवल कुछ घंटे ही शेष हैं । अंतरिक्ष-यात्री भी आ पहुंचते है । विदाई लेने के पश्चात् अंतरिक्ष-यान में चालक अपने स्थान ग्रहण करते हैं । अंतरिक्ष-यात्रियों के साथ मिल-

कर अब अन्तिम परीक्षण किये जाते हैं। उड़ान में अब केवल दो घटे रह जाते हैं। यात्रियों के कक्ष को वायुरहित कर दिया जाता है। अंतरिक्ष-यात्रियों का पृथ्वी के साथ सम्बन्ध अब केवल रेडियो की सहायता से सम्भव है।

प्रस्तुत पुस्तक के एक लेखक, यू० न० ग्लास्कोव सोवियत संघ के अंतरिक्ष-यात्री हैं, जिन्होंने एक अंतरिक्ष उड़ान में स्वयं भाग लिया था। अनेक कार्य, जिनकी चर्चा हम यहां कर रहे हैं, वह अपने हाथों कर चुके हैं।

यान "सोयूज-24" में सर्वप्रथम मैं प्रवेश करता हूं—उड़ान इंजीनियर का कार्य स्थान कक्ष के आखीर में, कमान्डर की कुर्सी के पीछे, होता है। फिर स्वयं कमान्डर प्रवेश करता है। विक्तर वसील्ये-विच गोरबात्को, यात्री कक्ष मे सभी परीक्षण समाप्त करके, मेरे पास अपना स्थान ग्रहण करते हैं। अब हम रेडियो-संचार यंत्रों का परीक्षण आरम्भ करते हैं। मैं ग्राही (वायरलेस) चालू करता हूं, और मुझे हेडफोन में एक विशिष्ट ध्वनि सुनायी देती है। पृथ्वी पर स्थित नियन्त्रण स्थल से संदेश आता है : "अतिलघु तरंग प्रेषित्र चालू कीजिए।" मैं आदेश का पालन करता हूं, और अब पृथ्वी पर हमारी आवाज सुनायी देती है।

इसके पश्चात् हम अन्य तन्त्रों का नियत्रण करते है। हमारे सामने नियत्रण पटल पर एक छोटी टेलीविजन स्क्रीन प्रकाशमान् है। विभिन्न बटन दबाने से स्क्रीन पर सख्याएं प्रकट हो जाती हैं : इंजन उपकरण तन्त्र में गैस का दाब, केबिन में वायु का संयोजन, इत्यादि। इस प्रकार क्रमानुसार हम यान के सभी तन्त्रो का परीक्षण करते हैं।

अब अन्तरिक्ष-कवच की ओर ध्यान देने का समय आ गया है। दस्ताने पहनते हैं, और दाब टोप का शीशा नीचे करते है। इसके पश्चात्, वाल्व खोलते हैं; और, सिलिंडरों मे संपीडित वायु अन्तरिक्ष-

कवच में भर जाती है। हाथ पर बंधे हुए यन्त्रों की सहायता से हम दाब पर नियन्त्रण रखते हैं। सब कुछ पूर्णतया ठीक है, और हम उड़ान के लिए तैयार है।

अंतरिक्ष समय-सारणी भू समय-सारणी की अपेक्षा कही अधिक सुनिश्चित होती है। यदि रेलगाड़ियों और वायुयानों का प्रस्थान एक मिनट तक की परिशुद्धता के साथ होता है, तो अन्तरिक्ष पत्तन पर सेकेण्ड की सुई का शासन होता है। इसीलिए कार्यो के ग्राफ का बहुत अधिक परिशुद्धता के साथ अनुसरण करना और कार्यों को पहले से निर्धारित गति में करना इतना आवश्यक होता है !

अन्तरिक्ष पत्तन के सभी स्थानों पर विशेष परिशुद्ध घड़ियां लगी होती हैं जो समय का एक तन्त्र बनाती है। इसके संकेतों की सहायता से विभिन्न तन्त्रों, प्रारम्भ उपकरणों, तथा समस्त अंतरिक्ष पत्तन के कार्य समकालिक रूप से किये जाते है। रॉकेट की प्रारम्भ-पूर्व तैयारी, प्रारम्भ और उडान के समय अनेक उपकरणों व यत्रों के कार्य का आरम्भ और समाप्ति—ये सब एकदम यथातथ्य रूप से निर्धारित किये जाते है।

प्रारम्भ-कार्य समाप्त हुए। प्रारम्भ-कार्य ग्रुप के अन्तिम विशेषज्ञ, अपने सुरक्षित स्थान में चले जाते है। पूर्ण तैयारी की पांच मिनट की अवधि की घोषणा होती है। रॉकेट तथा अन्तरिक्ष-यान के नियन्त्रण के सभी उपकरण थोड़ी-सी दूरी पर स्थित कक्रीट के वने तहखाने में हैं। टेलीविजन स्क्रीन पर अन्तरिक्ष-यात्रियों के शांतिपूर्ण चेहरे दिखायी दे रहे है। इनके साथ रेडियो सम्पर्क निरन्तर बना हुआ है।

स्टार्ट में अब केवल चन्द सेकण्ड रह गये है। कार्य टॉवर और केबिल-मस्तूल रॉकेट से पृथक हो गये हैं।

स्टार्ट ! इंजनों का शक्तिशाली भीमनाद सब कुछ बहरा कर देता है।

स्टार्ट से पूर्व
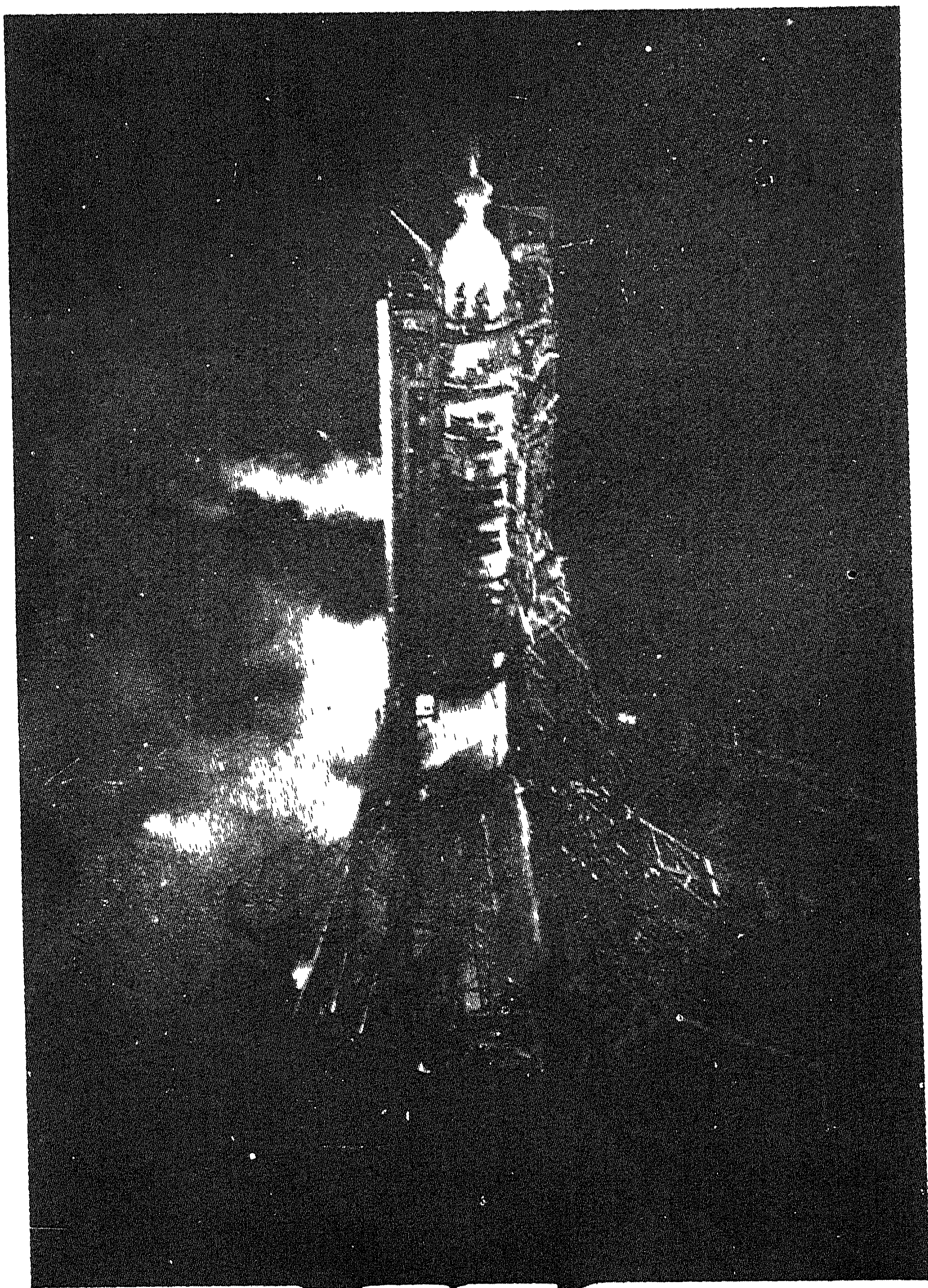
रॉकेट के नीचे से प्रचण्ड ज्वाला निकलती है। ऐसा लगता है, जैसे अग्नि का तूफान चारों ओर फैल गया है। लेकिन यह विचार भ्रांतिपूर्ण है : गैस निष्कासन नलिकाएँ लाल-तप्त गैसों को स्टार्ट-इमारत और रॉकेट के दूसरी ओर फेंकती है। अब इंजनों ने पूर्ण शक्ति प्राप्त कर ली है; क्षेप-बल रॉकेट के भार से अधिक हो जाता है। सहारा देने वाली टेक से स्वतन्त्र होकर रॉकेट धीरे से—मानो अनैच्छिक रूप से—पृथ्वी से अलग होता है और नभ में ऊपर उठता है।

"उठो" आदेश की घोषणा होती है—हमें दूर से आने वाली एक तीव्र गरज सुनायी देती है। बहुत दूर नीचे प्रथम चरण के इंजन चालू हो गये है। त्वरण और अधिक बढता जाता है तथा यह गरज, भीमनाद के साथ मिल जाती है; रॉकेट धीरे-धीरे प्रारम्भ स्थल से पृथक होता है और थोड़ा-सा हिलता तथा ऊपर बढ़ने लगता है। उड़ान आरम्भ हो गयी है। हमारे पास पृथ्वी से संकेत आ रहे हैं : "40 सेकेण्ड—उड़ान सामान्य है; 50 सेकेण्ड—इंजन सामान्य रूप से कार्य कर रहे है; पिच, पार्श्ववर्तन...सामान्य कार्य कर रहे है।" इस प्रकार, जब तक इजन कार्य करते हैं, तब तक विशेषज्ञ इस बात की पुष्टि करते रहते है कि उनके कार्यो के प्रचाल, परिकलनों के अनुकूल है और रॉकेट के कोण मे विचलन अनुमत सीमा के अन्दर है।

रॉकेट और अधिक ऊपर उठता जा रहा है। लेकिन इसके साथ अन्तरिक्ष पत्तन का सम्पर्क बना हुआ है। प्रकाशीय यत्रों के लेन्सों के अतिरिक्त, रेडियो स्थान निर्धारक के ऐन्टेना भी इसका पीछा कर रहे हैं। स्क्रीन पर रॉकेट, एक गतिमान प्रदीप्त बिन्दु जैसा दिखायी देता है।

उद्भार गुणक बढ़ता जा रहा है। विक्तर वसील्येविच गोरबात्को संदेश भेजते हैं : "अ०कै० (अवतरण कैप्स्यूल) में दबाव

सामान्य है।" वस्तुतः, हमारे कक्ष (अवतरण कैप्स्यूल) में सामान्य "कमरे जैसी" अवस्थाए पहले की भाति ही बनी हुई हैं। रॉकेट और अधिक ऊपर उठ रहा है। हमें विस्फोट चार्ज सुनायी देता है, जो प्रथम चरण के हिस्सो को पृथक कर देता है। इसी समय उद्भार गुणक थोडा-सा कम हो जाता है। लेकिन इसी के साथ "रॉकेट गाड़ी" के शेष भाग का भार द्वितीय चरण के इंजन संभाल लेते हैं और उद्भार गुणक फिर बढ़ जाता है।

वायुमडल की घनी परतें नीचे रह जाती है। अब विरलित वायु अंतरिक्ष-यान के लिए हानिकर नही है। नासा शंकु की प्लेटें खुलकर पृथक हो जाती है। खुलने वाले पोर्ट छिद्रो मे से देखने पर श्याम आकाश तथा द्युतिमान सितारे दिखायी देते हैं जो जगमगा नही रहे हैं : हमारा "सोयूज-24" पृथ्वी के रात्रि में डूबे भाग की ओर से कक्षक मे प्रवेश करता है। द्वितीय चरण भी पृथक होकर गिर जाता है तथा तृतीय चरण आरम्भ हो जाता है। अब हम लगभग क्षैतिज रूप से उड़ रहे है। ग्रह का स्पुतनिक बनने हेतु यान के लिए प्रथम अंतरिक्षीय वेग प्राप्त करना आवश्यक है।

विस्फोट चार्ज की ध्वनि सुनायी देती है; ऐसा प्रतीत होता है मानो कोई तेजी से धक्का देकर यान को आगे फेंक रहा हो। क्षण बीतता है, और हम अभी थोड़े समय पूर्व कुर्सी के साथ बंधी पेटी से लटक जाते हैं। अब यान में रखी तालिकाओ को पकड़ने के लिए हाथ से जोर लगाने का प्रयत्न अनावश्यक है; मेरे सामने धागे से बधी रखी पेंसिल तैर कर आ जाती है। भारहीनता!

अब यान मे बैठ कर सभी यन्त्रों का क्रमानुसार परीक्षण करते है। कुछ ही मिनट पश्चात् पोर्ट छिद्रो मे से चकाचौध कर देने वाला सूर्य का प्रकाश आ जाता है—यान का प्रथम अंतरिक्षीय दिवस आरम्भ हुआ। कही दूर नीचे पृथ्वी का टेढ़ामेढ़ा क्षितिज, श्वेत अभ्रो के साथ नीला आकाश, दिखायी देता है। हमारे नीचे से जगल,

खेत, समुद्र, झीलें, नदियाँ, हिम से ढकी पर्वत-मालाएँ गुजरती है। लेकिन कार्य करना है। कमांडर परीक्षण के परिणामो की रिपोर्ट समाप्त कर रहा है, और कक्षक (ऑर्बिट) मे प्रथम युक्तिचालन (मैनूवर) का समय भी आ गया है।

अंतरिक्ष-यान—कक्षक में

12 अप्रैल 1961 : तब से अभी बहुत अधिक समय नहीं बीता जब यूरी गगारिन के अंतरिक्ष-यान "वोस्तोक" ने अंतरिक्ष पर विजय प्राप्त की थी। तो भी अब तक दसियों यान अंतरिक्ष यात्रा कर चुके हैं।

ये सभी यान परस्पर कुछ न कुछ समान रहे हैं। इसीलिए हम अतरिक्ष-यान की चर्चा करते समय एक सामान्य यान के रूप में उसकी चर्चा करते है—जैसे किसी मोटर गाड़ी या वायुयान की चर्चा हम उसके किसी निश्चित मॉडल को ध्यान में रखकर नही करते।

अंतरिक्ष-यान की बनावट : अंतरिक्ष-यान से परिचित होने के लिए उदाहरण के रूप में हम सोवियत अतरिक्ष-यान "सोयूज" को लेंगे, जो अब "वोस्तोक" तथा "वोस्खोद" यानो के स्थान पर प्रयुक्त होता है। यान की लम्बाई 7·5 मीटर और अधिकतम व्यास लगभग 3 मीटर है; इसमें तीन भाग या कक्ष है।

"कक्षक भाग" में, अनेक दिवसीय यात्रा के समय अंतरिक्ष-यात्री विश्राम करते हैं तथा इसमे वैज्ञानिक प्रयोगों का उपकरण स्थापित किया जाता है, जिसकी आवश्यकता यान और अंतरिक्ष स्टेशन की डॉकिंग के समय होती है। एक गोल प्रवेश छिद्र द्वारा यह भाग अवतरण कैप्स्यूल के

साथ जुड़ा होता है जिसमें यात्री—कक्षक में प्रवेश करते समय, डॉकिंग के समय तथा पृथ्वी पर अवतरण के समय—बैठते हैं।

प्रवेश छिद्र को बंद करने के बाद अवतरण कैप्स्यूल को कक्षक भाग से भली प्रकार विविक्त कर दिया जाता है। इस प्रकार, कक्षक भाग को कपाट कक्ष के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है; इसका अवदाब करके यात्री खुले अंतरिक्ष में निकल सकते है। अवतरण कैप्स्यूल में यात्रियों के लिए विशेष कुर्सियाँ होती है। उड़ान तथा कक्षक से अवतरण के समय, उद्भार गुणक का प्रभाव कम करने के लिए, यात्री इन कुर्सियों पर बैठते नहीं बल्कि लेट जाते हैं। इसके लिए कुर्सियों को कर्मीदल के प्रत्येक सदस्य की आकृति के एकदम अनुरूप ढाला जाता है।

कुर्सी के बायीं तथा दायी ओर नियंत्रण के उपकरण होते हैं, जिनकी मदद से यान को उसके द्रव्यमान केन्द्र के चारों ओर घुमाया जा सकता है, या अंतरिक्ष में किसी भी स्थान पर ले जाया जा सकता है। यहाँ पर ही रेडियो सम्पर्क चालू करने के लिए बटन लगा होता है, जिससे अंतरिक्ष-कवच में कार्य करना सरल हो जाता है।

यात्रियों के सामने यान का केन्द्रीय नियंत्रण पटल होता है। इसके बायीं तथा दायीं ओर आदेश-संकेत यंत्र लगे होते हैं। इनकी सहायता से यान के तंत्रों को विभिन्न आदेश दिये जा सकते हैं। केन्द्रीय नियंत्रण पटल पर अनेक यंत्र लगे होते हैं। आइए, इनमें से कुछ यत्रों की चर्चा करें।

अंतरिक्ष में कार्य करने के लिए समय का एकदम यथातथ्य रूप से पालन करना होता है। अंतरिक्षीय घड़ियों में वर्तमान समय की सुइयो के अतिरिक्त, स्टॉप वाच भी होती है जिन्हें इच्छानुसार रोका व चालू किया जा सकता है। बात यह है कि यान का नियंत्रण, आदेशों की एक सम्पूर्ण शृखला द्वारा होता है; ये आदेश समय के एकदम निश्चित अंतरालों के बाद दिये जाते हैं।
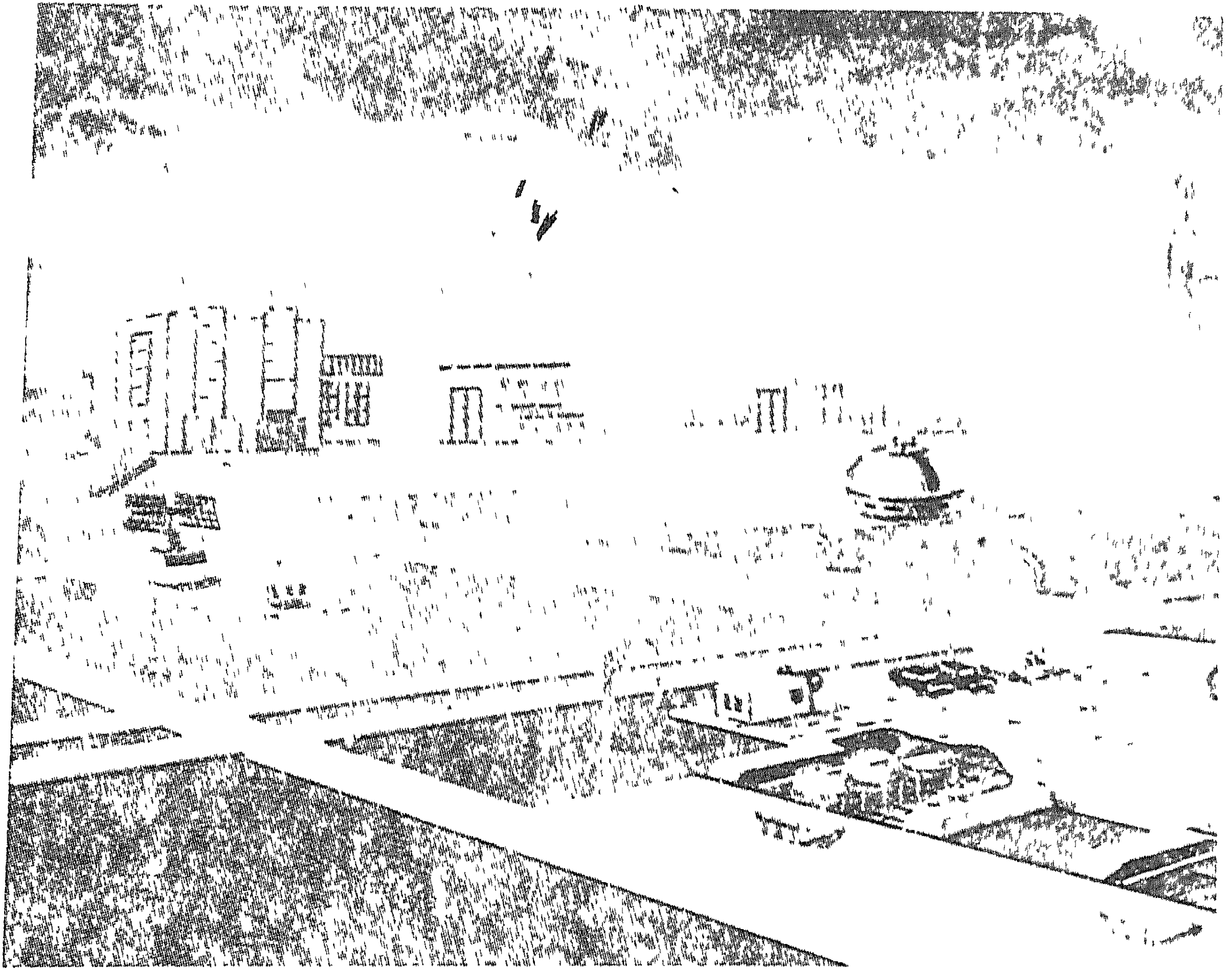
कॉस्मोड्रोम

लीजिए, यहाँ एक और दिलचस्प उपकरण है—संचालीय भूम्थिति का सूचक। इसे देखकर आप यह हमेशा ज्ञात कर सकते है कि एक नियत समय मे आपका यान पृथ्वी की सतह के कौन से भाग के ऊपर उड़ान कर रहा है। यदि उड़ान को एकाएक रोकना आवश्यक हो, तो अतरिक्ष-यात्री भूस्थिति के सूचक की सहायता से यान को उतारने के स्थान का चयन कर सकता है। इसी सूचक द्वारा, यात्री यान के पृथ्वी की छाया मे प्रवेश करने तथा छाया से बाहर आने के समय को निर्धारित कर सकता है। वैज्ञानिक शोधकार्यों को करने, तथा भूसतह पर स्थिति निर्धारण, आदि, के लिए इसकी आवश्यकता होती है। इसी उपकरण की सहायता से यात्री यह ज्ञात कर
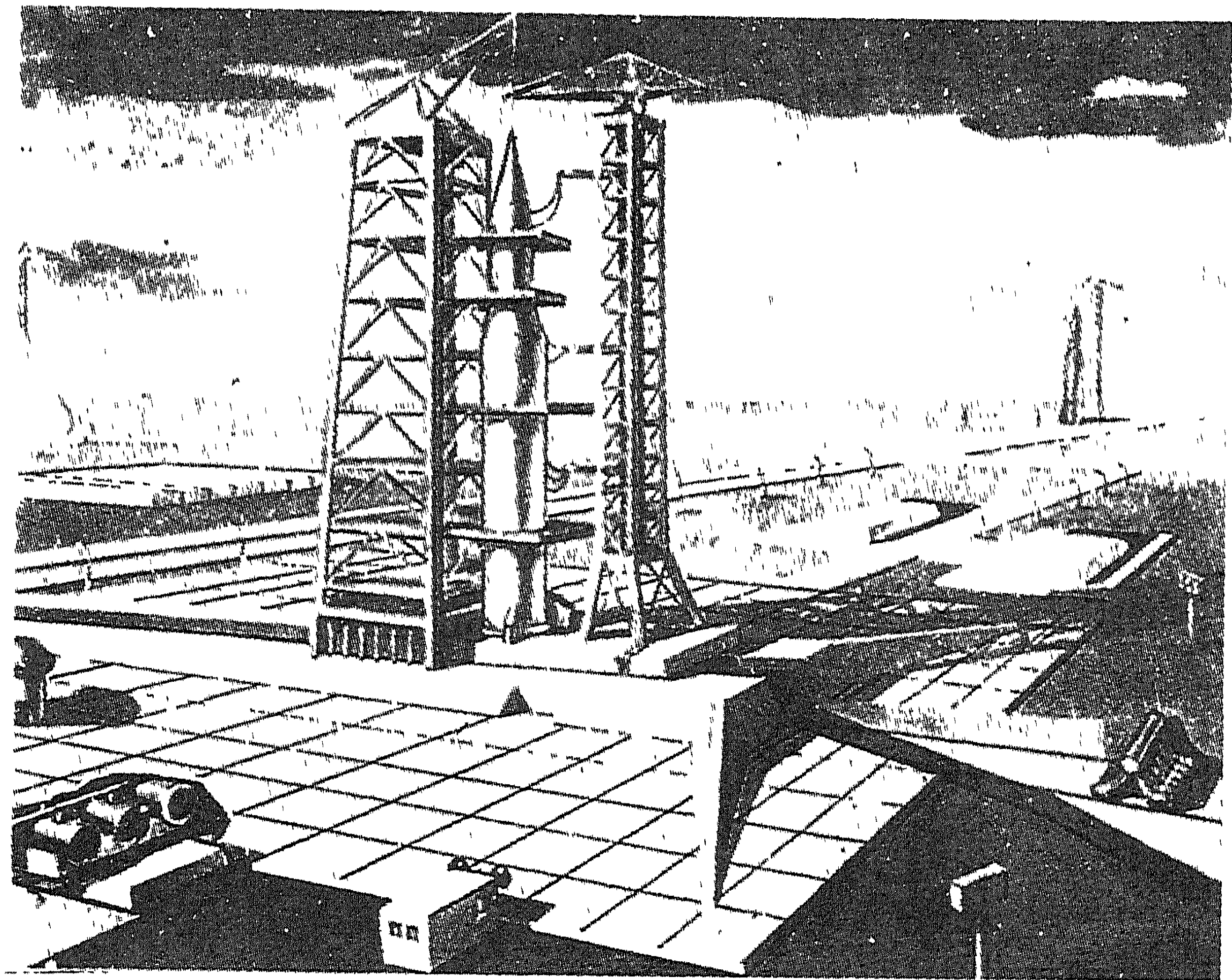
सकता है कि यान कितने चक्कर लगा चुका है और अब कौन-सा चक्कर पूरा कर रहा है। स्पष्ट है कि नियंत्रण-पटल के सभी यन्त्रों का वर्णन करना असम्भव है। हम केवल इतना और कहेंगे कि यहां घर ही वे सब यंत्र उपस्थित हैं जिनके द्वारा अंतरिक्ष स्टेशन पर उपगमन और स्टेशन के साथ युग्मन प्रक्रियाओं का नियंत्रण किया जाता है।

यान के कमान्डर के सामने केन्द्रीय नियंत्रण-पटल पर विभिन्न रंगों वाले अनेक सूचक होते हैं। हरे रंग का अर्थ है—सब ठीक है; पीले रंग का अर्थ है—ध्यान दीजिए; तथा, लाल रंग का अर्थ है—संकट; आवश्यक कदम उठाइए। इसके अतिरिक्त, ध्यान आकृष्ट करने के लिए टिमटिमाने

वाले प्रकाश-सकेत तथा ध्वनि-संकेत भी प्रयुक्त किये जाते है। अवतरण यान की बाहरी सतह पर अवतरण का नियत्रण करने वाले इंजन और सहज अवतरण के इजन स्थित होते है।

अवतरण यान के पश्चात् तृतीय विभाग होता है, जिसे उपकरण-यंत्र विभाग कहते है। इस विभाग मे यान के मुख्य इंजन उपकरण होते हैं—मूर तथा स्थिति निर्धारण के 20 से भी अधिक छोटे इजन; ईंधन के टैंक; स्वतंत्र उड़ान और अतरिक्षीय स्टेशन के साथ उडान का नियत्रण करने वाले अनेक यत्र। इसी विभाग मे वैद्युत ऊर्जा के स्रोत होते है तथा यान के निवास-विभागों मे आवश्यक तापमान बनाये रखने के यत्र लगे होते हैं। उपकरण-यत्र विभाग के बाहर सौर बैटरी के पैनल (ये सभी "सोयूज" यानों पर नही होते), ऐन्टेना और तापीय नियंत्रक विन्यास के विकिरक लगे होते है।

आइए, अब हम आपको अतरिक्ष-यान के यत्रो के बारे में अधिक विस्तार से बताएं।

अंतरिक्ष वैद्युत संयंत्र : कक्षक मे "सोयूज" एक उड़ते हुए पक्षी की भांति लगता है। यह समानता इसकी सौर बैटरी के खुले पैनल के "पंखों" के कारण है। यान के उपकरणों तथा यंत्रों के कार्य करते रहने के लिए वैद्युत ऊर्जा आवश्यक है। ऊर्जा ये यंत्र सौर बैटरियों से—जो सौर किरणों की ऊर्जा को विद्युत में रूपांतरित कर देती हैं—तथा रासायनिक सेलों से प्राप्त करते हैं। यान के वैद्युत परिपथ में वोल्टता एक निश्चित स्तर से कम हो जाने पर, स्वचलित मशीनें सेलों के साथ सौर बैटरियो को भी चालू कर देती हैं और इस प्रकार वैद्युत ऊर्जा का संचय परिपूर्ण हो जाता है।

पृथ्वी पर यान के अवतरण के पश्चात् भी ऊर्जा प्रदाय तंत्र अपना कार्य समाप्त नही करता। खोज तथा बचाव-जहाज के पहुँचने तक, यह
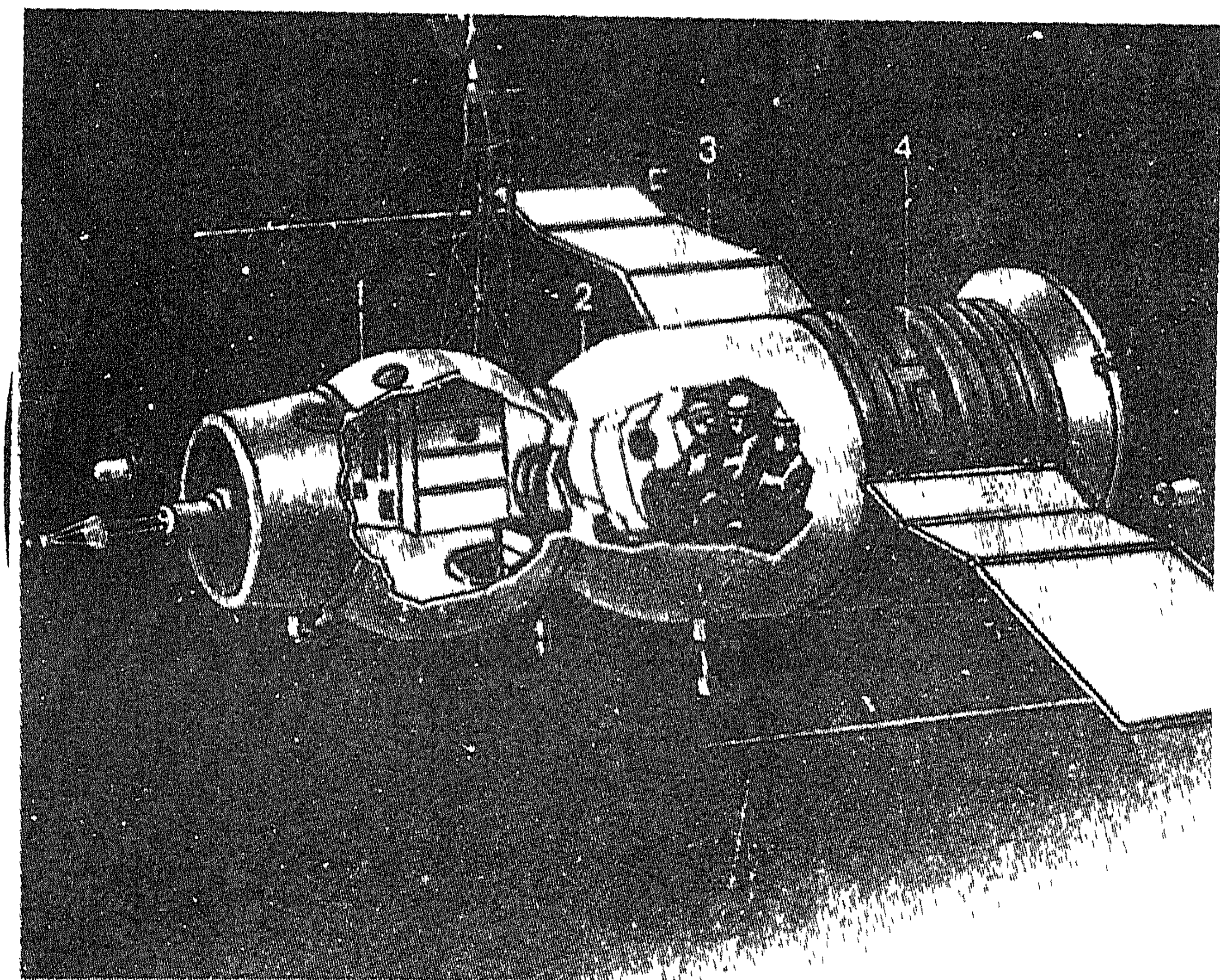
अंतरिक्ष-यान "सोयूज"

1. कक्षक भाग 2. अवतरण उपकरण 3. सौर बैटरी का पैनल 4. उपकरण-यंत्र विभाग

रेडियो-अभिग्रहीत्र (रेडियो-रिसीवर) और प्रेषित्र (ट्रांसमिटर), जीवनरक्षी तंत्रों तथा यान की स्थिति के प्रकाशीय सूचकों का कार्य जारी रखता है।

पिछले दिनों कुछ अंतरिक्षीय-यानों पर वैद्युत ऊर्जा के रूप में ईंधन-सेल प्रयोग में लाये गये हैं। इन असाधारण गैल्वेनी सेलों में ईंधन की रासायनिक ऊर्जा, दहन के बिना ही, वैद्युत ऊर्जा में रूपांतरित हो जाती है। ईंधन—हाइड्रोजन—ऑक्सीजन में उपचयित हो जाता है। अभिक्रिया के फलस्वरूप वैद्युत धारा और जल प्राप्त होता है। बाद में, जल को तापीय-नियंत्रण के लिए—अथवा पेय जल के रूप में—प्रयुक्त किया जा सकता है।

ईंधन-सेलों की उच्च कार्यक्षमता इनका एक लाभकारी गुण है। सामान्य सेलों की तुलना में ईंधन-सेलों की ऊर्जा-क्षमता 4-6 गुना अधिक होती है। लेकिन इन सेलों में भी कुछ कमियाँ हैं। सबसे बड़ी कमी इनका बहुत अधिक भार है।

इसी प्रकार की कमी के कारण आज तक अंतरिक्ष-यानों में परमाण्वीय-सेलों का उपयोग नही किया जा सका है। विघटनाभिकता (रेडियो-एक्टिविटी) से अंतरिक्षीय-यात्रियों की रक्षा करने के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले उपकरणो के कारण, यान का भार बहुत अधिक हो जायेगा।

अभिविन्यास (ओरियन्टेशन तंत्र) : अन्तिम चरणसे पृथक होकर रॉकेट यान, जड़त्व के कारण, अव्यवस्थित रूप से घूमने लगता है। इस स्थिति में आप जरा यह ज्ञात करने की कोशिश कीजिए कि पृथ्वी कहाँ पर है और "आकाश" कहाँ! कलाबाजी खा रहे यान मे अंतरिक्ष-यात्रियों के लिए यह ज्ञात करना असम्भव हो जाता है कि यान की स्थिति क्या है। वे आकाशीय पिंडो पर अपने प्रयोग नही कर सकते, तथा इस स्थिति में सौर-सेलों का कार्य भी असम्भव हो जाता है। आकाश मे यान को एक निश्चित स्थिति में रखा जाता है—अर्थात्, उसे अभिविन्यस्त किया जाता है। खगोलीय अन्वेषण के समय यान का अभिविन्यास सूर्य या चन्द्र जैसे प्रदीप्त तारों के आधार पर किया जाता है। सौर-सेलों से धारा प्राप्त करने के लिए यान के सौर पैनल, सूर्य की ओर आमुख किये जाते हैं। दो यानों का परस्पर मिलन करने के लिए उनका परस्पर अभिविन्यास किया जाता है। यान को विभिन्न दिशाओं में मोड़ने के कार्य को आरम्भ करने के लिए भी अभिविन्यस्त स्थिति आवश्यक है।

अंतरिक्षीय-यान या स्टेशन को अभिविन्यस्त करने के लिए विभिन्न प्रकार के उपकरण प्रयुक्त किये जाते हैं। इनमें से एक उपकरण के द्वारा,

जो प्रकाशीय दृश्यदर्शी कहलाता है, पृथ्वी की दृश्य डिस्क की मदद से अंतरिक्ष-यात्री पृथ्वी की ऊर्ध्वाधर रेखा से यान का झुकाव ज्ञात कर सकता है—अर्थात्, उस रेखा से जो पृथ्वी के केन्द्र और यान के द्रव्यमान केन्द्र को मिलाती है। स्थानीय ऊर्ध्वाधर रेखा एक अन्य उपकरण—अवरक्त ऊर्ध्वाधर रेखा—की सहायता से भी खींची जा सकती है। इस का कार्य-सिद्धांत पृथ्वी और अतरिक्षीय तारों के तापमानो की तुलना पर आधारित है।

अंतरिक्षीय-यान पर कुछ छोटे-छोटे अभिक्रिया रॉकेट इंजन लगे होते हैं जो अभिविन्यास तंत्र बनाते हैं। इन्हें क्रमानुसार चालू करके यान को किसी भी एक अक्ष के चारों ओर घुमाया जा सकता है।

आपको स्कूल में किया गया जल घूर्णी का प्रयोग याद होगा। विभिन्न दिशाओं में नलिका के मोडे गये सिरो से निकलती जल की धारा का अभि-क्रिया-बल घूर्णी को घुमाता है। नलिका को यहाँ एक धागे द्वारा लटकाया जाता है। ठीक इसी प्रकार अन्तरिक्ष-यान भी घूमता है। अंतरिक्ष-यान अनूठे रूप से लटका हुआ है—वह भारहीन है! किसी भी एक अक्ष के चारों ओर यान को घुमाने के लिए यान के तुण्डों को विभिन्न दिशाओं में मोड़कर सूक्ष्म इंजनों द्वारा वाष्पों को हल्के-से निष्कासित करना ही पर्याप्त होता है।

तथापि यान को थोड़ा-सा मोड़ने के लिए "निम्न क्षेप" ही पर्याप्त होते हैं। प्रक्षेप-पथों (ट्राजेक्टरी) को अधिक परिवर्तित करने के लिए हमें अधिक शक्तिशाली इंजन को प्रयुक्त करने की आवश्यकता होगी।

"सोयूज" यानों के प्रक्षेप-पथ पृथ्वी की सतह से 200-450 कि० मी० की दूरी पर होते हैं। दीर्घकालीन उड़ान के समय इतने अधिक विरल वायुमंडल में भी, जो बहुत अधिक ऊँचाईयों पर पाया जाता है, अन्तरिक्ष-यान वायु के कारण धीरे-धीरे रुक जाता है और नीचे आने लगता है। यदि इस समय कोई कदम नही उठाया गया, तो "सोयूज" वायुमंडल की घनी परतों मे प्रवेश कर जायेगा तथा एक निश्चित समय से पूर्व ही

नीचे आ जायेगा । इसीलिए समयानुसार अंतरिक्ष-यान को समायोजी—जैसा कि आधारभूत इंजन उपकरण को कहते हैं—की मदद से अधिक ऊपर स्थित अन्तरिक्ष कक्षक में भेज दिया जाता है । इंजन को केवल अधिक ऊपर कक्षक में यान भेजने के लिए ही नही चालू किया जाता, बल्कि उसे अन्य अन्तरिक्ष-यान के साथ मिलन (डॉकिंग) के समय भी चालू किया जाता है, तथा विभिन्न प्रकार के मोड़ने के कार्य करने के समय भी; और, पृथ्वी पर यान के अवतरण के समय यान को रोकने के लिए भी इसे चालू किया जाता है ।

अभिविन्यास अन्तरिक्षीय उड़ान का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग है । लेकिन यान का केवल अभिविन्यास करना ही पर्याप्त नहीं होता । इसे स्थिर करना भी आवश्यक होता है । आधारहीन अन्तरिक्षीय आकाश में यह कार्य इतना सरल नही होता । स्थिरीकरण की एक सरलतम विधि है—घुमाकर स्थिरीकरण करना । इसके लिए घूमने वाले इन पिडो का वह गुण उपयोग मे लाया जाता है, जिसके कारण वे अपना घूर्णी अक्ष बनाये रखते हैं तथा उसे परिवर्तित नही होने देते (आप सभी ने बचपन में लट्टू देखा होगा, जो तब तक घूमता रहता है जब तक कि वह एकदम रुक नहीं जाता) । इस नियम पर आधारित उपकरण—जाइरोदर्शी (जाइरोस्कोप)—अन्तरिक्ष-यानों के स्वचलित कार्यो के नियंत्रण उपकरणों में बहुत अधिक इस्तेमाल किया जाता है । उदाहरणस्वरूप, इसकी मदद से यान की स्थिति को याद रखा जा सकता है, उसे स्वतः उसी स्थिति में बनाये रखा जा सकता है, तथा इसके लिए कुछ इंजनों को चालू किया या रोका जा सकता है । घूम रहा यान एक विशाल लट्टू के समान होता है : इसका घूर्णी अक्ष कुछ समय तक आकाश में अपनी स्थिति को परिवर्तित नही होने देता ।

यदि सूर्य की किरणें सौर-सेलों के पैनल पर समकोण बनाती हुई गिरती हैं, तो सेल सर्वाधिक बल वाली वैद्युत धारा उत्पन्न करते है ।

इसीलिए बैटरी को चार्ज करने के समय सौर-सेल को सूर्य की ओर आमुख करना आवश्यक होता है। इसके लिए यान को कई बार घुमाया जाता है। सर्वप्रथम अन्तरिक्ष-यात्री यान को घुमा कर सूर्य की स्थिति निर्धारित करते है। एक विशेष उपकरण की स्केल के केन्द्र मे सूर्य का प्रकाश प्रकट हो जाने पर, यह निश्चित हो जाता है कि अन्तरिक्ष-यान अब सही प्रकार से अभिविन्यस्त हो गया है। इसके बाद सूक्ष्म इंजन चालू कर दिये जाते है और अन्तरिक्षीय-यान सूर्य अक्ष के चारों ओर घूमने लगता है।

अंतरिक्ष-यान का नियन्त्रण : यान को घुमाकर उसे आकाश में स्थिर रखने की एकमात्र विधि ही नही है। विभिन्न प्रकार के कार्य तथा विभिन्न प्रकार से यान को मोड़कर अभिविन्यास तंत्र के इंजनों की क्षेप की मदद से भी यान को स्थिर रखा जा सकता है। इसके लिए नीचे लिखे अनुसार कार्य किया जाता है : अंतरिक्ष-यात्री सर्वप्रथम सूक्ष्म इंजनों को चालू करके अंतरिक्ष-यान को आवश्यक स्थिति में लाते हैं। अभिविन्यस्त करने के बाद अन्तरिक्ष-यात्री पहले से घूम रहे जाइरोदर्शियों को यान के नियंत्रण तत्र के साथ जोड़ देते हैं। ये जाइरोदर्शी अन्तरिक्ष-यान की स्थिति को स्मरण कर लेते हैं। अन्तरिक्ष-यान जब अपनी स्थिति में अपरिवर्तित रहता है, तो ये जाइरोदर्शी शान्त रहते हैं, अर्थात् अभिविन्यास इंजनों को चालू होने का संकेत नही देते। यान के प्रत्येक घुमाव के साथ-साथ यान, जाइरोदर्शी के घूर्णी अक्ष के प्रति विस्थापित हो जाता है। इसके परिणामस्वरूप, जाइरोदर्शी सूक्ष्म इंजनों को संकेत प्रेषित करते हैं, जो अपने क्षेप के कारण अंतरिक्ष-यान को आरम्भिक अवस्था में ला देते हैं।

अंतरिक्ष-यान का स्थिरीकरण जाइरोदर्शियों के बिना भी किया जा सकता है—इंजन को स्वयं चालू करके। लेकिन इससे पहले कि अन्तरिक्ष-यात्री स्टीयरिंग घुमाये, उसे यह जान लेना आवश्यक होता है कि उसके यान की स्थिति उस समय क्या है। भूमि पर चल रहा वाहक अपनी

स्थिति का अभिविन्यास अनेक स्थिर वस्तुओं की मदद से करता है। अन्तरिक्षीय आकाश में अंतरिक्ष-यात्री अपना अभिविन्यास समीप स्थित तथा सुदूर तारों की मदद से करता है।

"सोयूज" के संचालक की दृष्टि उसके सामने रखे एक संचालन ग्लोब पर टिकी रहती है। पृथ्वी के इस ग्लोब पर कभी भी बादल नहीं छाते हैं, जैसा कि सामान्यत: हमारे ग्रह के साथ होता है। यह हमारी पृथ्वी का एक सरल प्रतिनिधि है। उड़ान के समय दो वैद्युत इंजन इस ग्लोब को हर समय दो अक्षों के चारों ओर घुमाते रहते हैं। इनमे से एक अक्ष पृथ्वी के आघूर्ण अक्ष के समानांतर होता है; दूसरा अक्ष अंतरिक्षीय-यान के कक्षक के समतल पर लम्ब बनाता है। प्रथम गति पृथ्वी का 24 घंटे का घूर्णन दर्शाती है, और दूसरी गति यान की उड़ान की सूचक होती है। एक स्थिर काँच के ऊपर, जिसके नीचे यह ग्लोब रखा होता है, एक छोटा सा क्रॉस चिह्न बनाया गया होता है। यह चिह्न अंतरिक्षीय-यान का सूचक है। अंतरिक्ष-यात्री उड़ान के समय इस क्रॉस चिह्न को देख-कर बता सकता है कि उस समय उसका यान पृथ्वी के किस भाग पर उड़ान भर रहा है। इसमें उसे एक बहुत ही प्राचीन संचालन उपकरण द्वारा मदद मिलती है, जिसे सेक्सटैंट (षष्ठक यंत्र) कहते हैं। यह सेक्सटैंट समुद्री सेक्सटैंट से मामूली-सा भिन्न होता है : आप इसका प्रयोग अपने कक्ष से बाहर निकले बिना ही कर सकते हैं; लेकिन समुद्री सेक्सटैंट को इस्तेमाल करने के लिए आपको जहाज के डेक पर आना पड़ता है।

कक्षक में प्रवेश कर चुकने के पश्चात् हम यान का युक्ति-चालन दिखाने की तैयारी करने लगे। कक्षकीय स्टेशन के साथ डॉकिंग के लिए यह आवश्यक था कि हम अपने यान को उस तथा-कथित मोंताज कक्षक में प्रवेश करायें जिसमें, हमारे कक्षक से कहीं ऊपर, "साल्यूत-5" उड़ान कर रहा है।

एक प्रकाश-तंत्र—प्रदीपक—में हमें पृथ्वी दिखायी दे रही है। हैंडल को अपने से दायी ओर घुमाते हुए विक्तर वसील्येविच गोरबात्को

अपने यान को उस समय तक घुमाते रहते हैं जब तक पृथ्वी प्रकाशीय दृश्यदर्शी में नहीं आ जाती। हैंडल को घुमाने के परिणामस्वरूप वैद्युत संकेत लॉगिंग उपकरण में पहुँचता है, जो इस बात का निर्णय करता है कि कौन-से इंजन चालू किये जायें। वाल्व खुलते हैं, और इन इंजनों मे ईंधन आ जाता है। यान धीरे-धीरे मुड़ने लगता है। दृश्यदर्शी में पृथ्वी की आकृति आने लगती है। और, धीरे-धीरे यह उपकरण के दृश्य पटल पर समान रूप से छा जाती है।

अब यान को इस प्रकार घुमाना चाहिए कि संशुद्धि इंजन तुड के पार्श्व में आ जाये, यानी गति की विपरीत दिशा में हो जाये। इस प्रकार के अभिविन्यास को हम "अभिवर्धन" कहते हैं, क्योंकि इंजन की इस स्थिति में यान का अभिवर्धन होता है, और फलतः, यान अधिक ऊपर स्थित कक्षक में प्रवेश कर जाता है।

अब यान का कमाण्डर निम्न कार्य पूर्ण करता है। उसकी दृष्टि पुनः दृश्यदर्शी पर आ जाती है। उसमें पृथ्वी की सतह के उच्चावच स्पष्ट दिखायी दे रहे हैं। ये हमारे नीचे विस्थापित हो रहे हैं, "दौड़" रहे हैं। इस "दौड़" की दिशा ऊपर से नीचे की ओर होनी चाहिए, तभी हमारा यान आवश्यक स्थिति ग्रहण करेगा। इस स्थिति में आते ही, हम इसे जाइरोदर्शी की मदद से स्थिर कर देते हैं। अब ये जाइरोदर्शी—जैसे कि पहले नियंत्रण हैंडल यान का नियंत्रण करते हैं—स्थिर की गयी स्थिति से मामूली-सा विचलन होने पर तुरंत इंजनों को संकेत देकर यान को आरम्भिक स्थिति में ले आते हैं।

अब संशुद्धि इंजन को चालू करने का निश्चित क्षण आ जाता है। इस समय हमें एक धक्का-सा लगता है। इंजन की कार्य अवधि पहले ही निर्धारित कर ली जाती है। निश्चित सेकेन्डों तक कार्य

करने के पश्चात् इंजन बन्द हो जाता है। प्रक्षेप-पथ की संशुद्धि पूरी हो जाती है। हम एक नये कक्षक में आ जाते है।

न गर्मी, न सर्दी : पृथ्वी के चारों ओर घूमते हुए यान कभी तो सूर्य की लाल-तप्त, चकाचौंध कर देने वाली, किरणों के सामने आ जाता है, तो कभी हिमशीतित अतरिक्ष रात्रि के अन्धेरे में। लेकिन अंतरिक्ष-यात्री हल्के सूट पहने कार्य करते रहते है; उन्हें न तो गर्मी लगती है, और न सर्दी। कक्ष मे हर समय मानव के लिए उपयुक्त सामान्य ताप बना रहता है। इस अवस्था में यान के उपकरण भी ठीक कार्य करते रहते है।

उड़ान से पूर्व यान को परिरक्षित-निर्वात पृथक्करण कोट पहनाया जाता है। इस प्रकार का प्रथक्करण महीन धात्विक फिल्म की अनेक क्रमागत परतो से बना होता है—उड़ान के समय इनके बीच निर्वात (वैकुअम) बना रहता है। यह गर्म सौर किरणों के मार्ग में एक उत्तम अवरोध है। परिरक्षकों के बीच कांच-तंतु या निम्न तापचालकता वाले पदार्थों की परतें लगा दी जाती हैं।

यान के उन सभी हिस्सों पर, जिन्हें किन्ही कारणवश् परिरक्षित-निर्वात कम्बल में लपेटा नहीं जा सकता, एक लेप चढ़ा दिया जाता है, जो ऊर्जा की अधिकांश किरणों को पुनः अंतरिक्ष में परावर्तित कर देता है। उदाहरण के लिए, मैग्नीशियम आॅक्साइड की परत द्वारा ढकी गयी सतह, उस पर गिरने वाली ऊष्मा का केवल एक-चौथाई भाग ही अवशोषित करती है।

फिर भी, रक्षा के इन अक्रिय व निश्चेष्ट पदार्थो को प्रयुक्त करके यान को अतिगर्म होने से बचाना असम्भव है। इसीलिए यान पर नियन्त्रण की और अधिक सक्रिय विधियाँ प्रयोग की जाती हैं।

अवात बन्द भागों—संमुद्रित भागों—की आन्तरिक दीवारो पर

धात्विक नलिकाओं का जाल-सा बिछा रहता है। इनमें एक विशेष द्रव-शीतक परिसंचरण करता रहता है। यान के बाहर विकिरक-प्रशीतित्र लगा रहता है, जिसकी सतह पर परिरक्षित-निर्वात पृथक्करण नहीं चढ़ा होता। इसके साथ सक्रिय तापीय-नियंत्रण की नलिकाएं लगी होती हैं। यान के भागों में गर्म हो चुका द्रव-शीतक विकिरक में भेज दिया जाता है, जो अनावश्यक ऊष्मा को अंतरिक्ष में बाहर "फेंक" देता है। इसके पश्चात्, शीतित द्रव पुनः यान के अन्दर कार्य आरम्भ कर देता है।

द्रव-शीतक अपना पथ परिवर्तित कर सकता है। यदि यान के अन्दर का तापमान नीचा रखना है, तो इसका अधिकांश भाग विकिरक-प्रशीतित्र में ही रहता है और कम भाग यान में परिसंचरण करता है। यान के अन्दर तापमान बढ़ाने के लिए विकिरक-प्रशीतित्र में द्रव-शीतक की कम मात्रा भेजी जाती है। ये सभी कार्य स्वचलित नियंत्रक करता है, और यान के कक्षों में एक पूर्वनिर्धारित तापमान बना रहता है। अंतरिक्ष-यात्री अपनी इच्छानुसार तापमान बदल सकते हैं।

तापीय-नियंत्रण तंत्र का कार्य केवल ऊष्मा को निकाल फेंकना, उपकरणों, यान तथा कक्षों में वायु को शीतित करना ही नहीं होता। यह इजनों, उपचायकों तथा ईंधन वाले सिलिंडरों को गर्म भी करता है। इसके लिए, सूर्य की ओर आमुख तापन पैनल प्रयुक्त किये जाते हैं जिनमें पम्पों की सहायता से द्रवित-शीतक परिसंचरण करता है।

गर्म वायु शीतित वायु की तुलना में हल्की होती है। गर्म होकर वायु ऊपर उठती है और नीचे शीतित परतों को दबाती है। वायु का वास्तविक प्रतिस्थापन संवहन घटता है। इसी परिघटना के कारण आपके घर में लगा तापमापी—वह चाहे कमरे के किसी भी भाग में क्यों न रख दिया जाय—लगभग एक जैसा तापमान बतायेगा।

लेकिन भारहीनता की अवस्था में ऐसा प्रतिस्थापन असम्भव है। इसीलिए यान के कक्ष के संपूर्ण आयतन में ऊष्मा को समान रूप से फैलाने
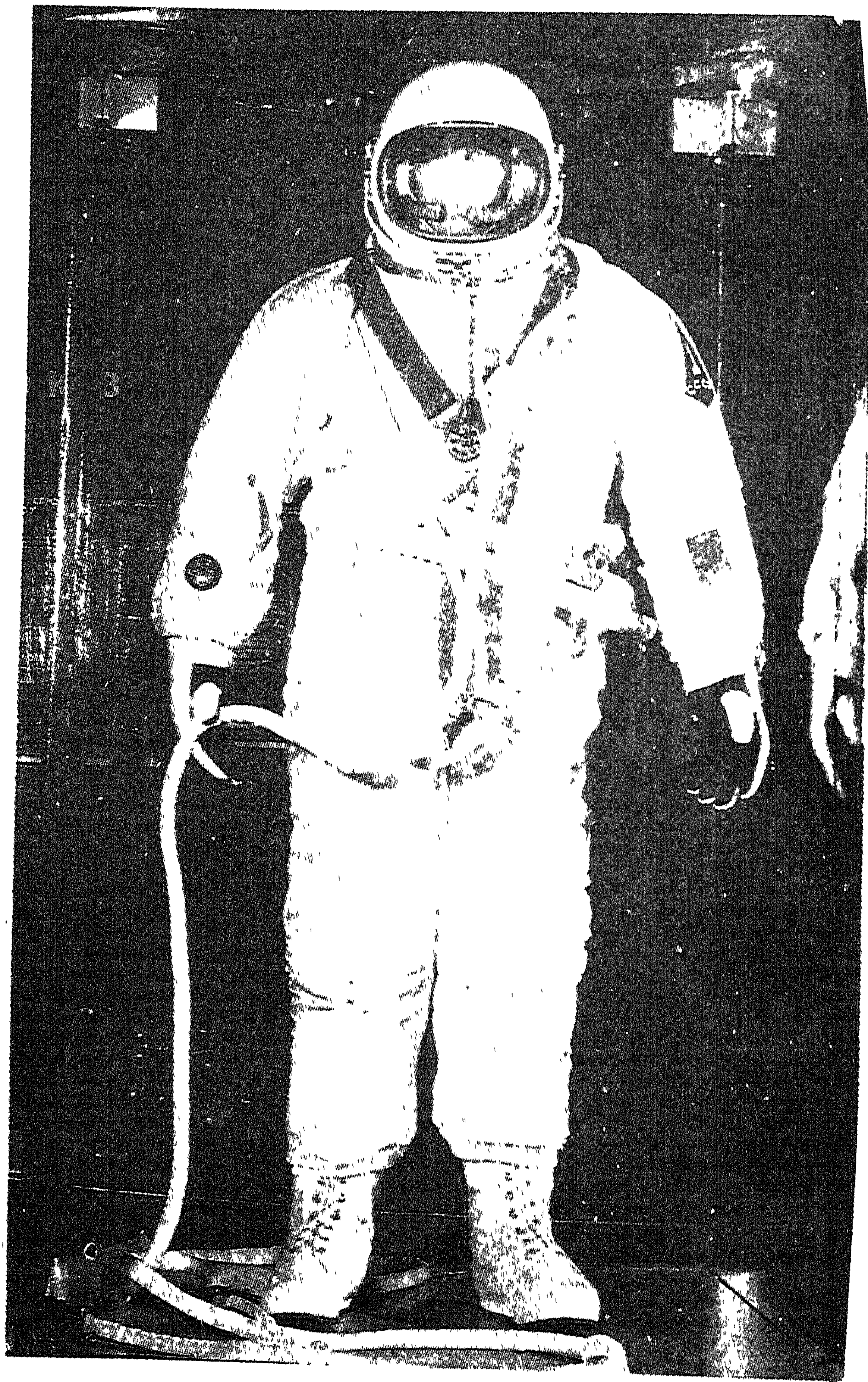
के लिए वायु का प्रतिस्थापन सामान्य पंखों की सहायता से किया जाता है ।

अन्तरिक्ष में उसी प्रकार जैसे कि पृथ्वी पर : : पृथ्वी पर रहते हुए हम वायु के बारे में बहुत नहीं सोचते । हम केवल उसमें श्वसन करते हैं । अन्तरिक्ष में श्वसन एक समस्या है । यान के चारों ओर अन्तरिक्षीय निर्वात है, रिक्तता है । श्वसन के लिए यात्री पृथ्वी से वायु की आवश्यक मात्रा ले जाते हैं ।

मानव 24 घंटों में लगभग 800 ग्रा० ऑक्सीजन इस्तेमाल करता है । इसे यान में गैसीय अवस्था में विशाल दाब पर, अथवा द्रवित अवस्था में सिलिंडरों में, रखा जा सकता है । इस द्रव की 1 कि०ग्रा० मात्रा के लिए अन्तरिक्ष में वह 2 कि०ग्रा० धातु ढोनी पड़ती है जिससे ऑक्सीजन सिलिंडर बना होता है । संपीडित गैस की स्थिति में इस धातु का भार प्रति 1 कि०ग्रा० ऑक्सीजन के लिए 4 कि०ग्रा० हो जाता है ।

लेकिन सिलिंडरों के बिना भी रहा जा सकता है । इसके लिए यान पर शुद्ध ऑक्सीजन के स्थान पर ऐसे रासायनिक पदार्थ रखे जाते है, जिनमें ऑक्सीजन मिश्रित रूप से विद्यमान होती है ।

ऑक्सीजन की बहुत अधिक मात्रा कुछ क्षारीय धातुओं के ऑक्साइडों और लवणों में, सबको भली प्रकार ज्ञात हाइड्रोजन पराक्साइड में, विद्यमान होती है । इसके अतिरिक्त ऑक्साइडों में एक अन्य लाभकारी गुण होता है : ऑक्सीजन के उत्सर्जन के साथ-साथ ये कक्ष का वातावरण भी शुद्ध कर देते हैं, क्योंकि ये मानव के लिए हानिकर गैसों का अवशोषण करते हैं ।

मानवीय जीव ऑक्सीजन ग्रहण करते समय कार्बोनिक गैस, कार्बनि

डाइऑक्साइड, जलवाष्प तथा कई अन्य पदार्थों का उत्सर्जन भी करता है। कार्बोनिक गैस तथा कार्बन डाइऑक्साइड, यान के बन्द कक्षकों में इकट्ठी होकर अन्तरिक्ष-यात्रियों का विषाक्तन कर सकती हैं। कक्षक की वायु को निरतर ऐसे पात्रों में से गुजारा जाता है, जिनमें क्षारीय धातुओं के ऑक्साइड होते हैं। इन पात्रों को पुनर्योजित्र कहते हैं। यहाँ एक रासायनिक अभिक्रिया घटित होती है : ऑक्सीजन का उत्सर्जन होता है, तथा हानिकर गैसों एवं अशुद्धियों का अवशोषण हो जाता है। उदाहरण के लिए, एक कि०ग्रा० लीथियम सुपर ऑक्साइड में 610 ग्रा० ऑक्सीजन होती है तथा यह मात्रा 560 ग्रा० कार्बन डाइऑक्साइड का शोषण कर सकती है। आजकल कैल्सियम सुपर ऑक्साइड का प्रयोग भी बहुत प्रचलित है।

समय-समय पर हम अपने कक्षक के वायुमंडल को नियंत्रित करते रहते हैं। इसके लिए यान पर एक विशेष उपकरण लगा होता है—गैस विश्लेषक। इस उपकरण को चालू करके हम सूचक द्वारा यह ज्ञात कर सकते हैं कि वायु में ऑक्सीजन, कार्बोनिक गैस, तथा जलीय वाष्प की कितनी मात्रा है।

इस समय नियंत्रण पैनल पर हरा प्रकाश है। इसका अर्थ हुआ कि पंखा चालू है और वह कक्षक की वायु को पुनर्योजित्र में भेज रहा है। हम अपनी उड़ान का कार्यक्रम चालू रख सकते हैं। यदि ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है या बहुत अधिक हो जाती है, तो स्वचलित चौकीदार—गैस विश्लेषक—एक लाल प्रकाश चालू कर देगा।

ऑक्सीजन के अतिरिक्त अन्तरिक्ष-यात्री अपने साथ जल और खाद्य सामग्री भी ले जाते हैं। जल को पालिएथिलीन फिल्म से बने दृढ़ व बड़े थैलों में रखा जाता है। जल में ऐसी विशेष वस्तुओ की थोड़ी-सी मात्रा डाल दी जाती है, जिन्हें परिरक्षक कहते हैं—ताकि जल न तो खराब हो,

और न ही उसका स्वाद बिगड़े। मिसाल के लिए, दस लिटर जल में 1 मि०ग्रा० आयनी रजत की विलीन मात्रा जल को छ: महीने तक पीने के लायक बनाये रखती है।

जल के सिलिंडर के साथ दो नलिकाएं जुड़ी होती है। एक नलिका के अन्तिम सिरे पर टूटी लगी होती है जिसे खोला व बन्द किया जा सकता है; दूसरी नलिका पम्प के साथ जुड़ी होती है। पम्प की मदद से सिलिंडर में अतिरिक्त दाब बनाकर अंतरिक्ष-यात्री टूटी को मुंह में रख कर टूटी खोल लेते हैं और इस प्रकार वे जल पीते हैं। अन्तरिक्ष में जल पीने की यही एकमात्र विधि है। कारण यह कि भारहीनता की स्थिति में जल खुले पात्रों से बाहर आ जाता है और छोटी-छोटी गोलियों के रूप में कक्षक में घूमता रहता है।

अब पेस्ट के रूप में भोजन के स्थान पर—जिसे प्रथम अंतरिक्ष-यात्री अपने साथ ले गये थे—"सोयूज" के अन्तरिक्ष-यात्री पृथ्वी पर खाया जाने वाला भोजन ही खाते हैं। यान में एक छोटी-सी लघु रसोई घर भी होती है, जिसमें पहले से तैयार किया गया भोजन गर्म किया जा सकता है।

अनेक तस्वीरों में आपने अन्तरिक्ष-यात्री को अन्तरिक्ष-सूट पहने देखा होगा; हैलमेट के कांच के पीछे उसका मुस्कराता चेहरा दिखायी देता है। यान के असंमुद्रित हो जाने की स्थिति में यह सूट अन्तरिक्ष-यात्रियों की रक्षा करता है।

यदि कक्षक में दाब कम हो जाता है तो स्वचलित मशीन, अन्तरिक्ष-सूट के साथ संपीडित वायु के सिलिंडरों को जोड़ देती है। अन्तरिक्ष-यात्रियों को अन्तरिक्ष-सूट की आवश्यकता यान से बाहर खुले अन्तरिक्ष में आने के लिए तथा किसी अन्य आकाशीय पिंड पर उतरने के लिए भी पड़ती है।

प्राय: अन्तरिक्ष-सूट की तुलना एक संमुद्रित कक्षक से की जाती है,

जिसका आकार मानव के शरीर के आकार के समान होता है। और, यह सच भी है। अन्तरिक्ष-सूट एक तह वाला सूट नही होता; इसमें एक के ऊपर एक कई सूट होते हैं। सबसे बाहर का ऊष्मा-रक्षी सूट सफेद रंग का होता है जो तापीय किरणों का भली प्रकार परावर्तन करता है। इस भारी सूट के नीचे किरण आवरण निर्वात ऊष्मा पृथक्करण का सूट होता है। और, उसके नीचे अनेक परतों वाला एक आवरण होता है। इस प्रकार अन्तरिक्ष-सूट पूर्णतया संमुद्रित हो जाता है।

अन्तरिक्ष-सूट के एक आवरण में संवातन (हवादान) भी होता है। आप ने रबड़ के बने दस्ताने या जूते पहने होंगे। अब आप इस बात का अनुमान लगा सकते है कि यह अन्तरिक्ष-सूट यदि संवातन के बिना हो, तो कितना बुरा लगेगा। लेकिन अन्तरिक्ष-यात्रियों को इस प्रकार की किसी कठिनाई का सामना नही करना पड़ता। संवातन तंत्र, जो अतरिक्ष-सूट में होता है, कठिनाई का समाधान कर देता है। अन्तरिक्ष-सूट को पहनने के पश्चात्, अंतरिक्ष-यात्री दस्ताने, जूते और हैलमेट पहनता है— और अब खुले अन्तरिक्ष में बाहर निकलने के लिए उसकी पोशाक पूर्णतया तैयार हो जाती है। हैलमेट के प्रदीपक में एक प्रकाश फिल्टर भी लगा होता है, जो चकाचौंध कर देने वाली सूर्य की किरणों से अंतरिक्ष-यात्री के नेत्रों की रक्षा करता है।

अन्तरिक्ष-यात्री की कमर पर एक 'किट' बंधी होती है। इसमें कुछ घंटों के लिए पर्याप्त ऑक्सीजन होती है तथा वायु को शुद्ध करने का उपकरण भी लगा होता है। इस किट को अन्तरिक्ष-सूट के साथ— आसानी से मुड़ जाने वाली पाइपों द्वार —जोड़ा गया होता है। संचार के तार और प्रतिरक्षी रस्सी अन्तरिक्ष-यात्री को यान के साथ जोड़ देते हैं। अन्तरिक्ष में "तैरने" के लिए अंतरिक्ष-यात्री की सहायता, एक छोटा-सा अभिक्रिया इंजन करता है। पिस्तौल जैसे इन गैसीय इंजनों का प्रयोग अमरीकी अन्तरिक्षीय-यात्रियों ने किया था।

पृथ्वी हमेशा तुम्हारे साथ है : अन्तरिक्ष उड़ानों का नियंत्रण करने वाली इमारतें—विशेष रूप से रात में—असामान्य लगती हैं। तारकीय आकाश की पृष्ठभूमि में विशाल ऐन्टेना संरचनाएं नज़र आती हैं। परावर्तकों की प्यालियों को ऊपर की ओर कर देने से ऐसा लगता है मानो वे अन्तरिक्ष में अनन्त दुरी तक देखे जा रही हैं। रात हालांकि काफी हो गयी है, फिर भी इमारतों की खिड़कियों से प्रकाश नज़र आ रहा है। यहां कार्य की अवधि सूर्य के अस्त या उदय होने के आधार पर नहीं, अपितु अन्तरिक्ष उड़ान के कार्यक्रम के आधार पर निर्धारित की जाती है।

आकाश में एक छोटा-सा तारा उभरता है। यह अन्य स्थिर तारों के बीच ही घूम रहा है। पृथ्वी से इसी तारे पर नज़र रखे, उस के पीछे-पीछे एक समान घूमते हुए, कई टनों भार वाले ग्राही ऐन्टेना का प्याला उस तारे का अनुसरण कर रहा है।

यहाँ से कुछ कि०मी० की दूरी पर एक और ऐन्टेना लगा होता है, जो संकेत प्रेषित करता है। इस दूरी के कारण यह संकेत प्रेषक, अन्तरिक्ष से आने वाले ग्राही संकेतों पर प्रभाव नहीं डालता।

सभी आधुनिक यात्रियों की सच्ची मित्र रेडियो तरंगें हैं, जो अंतरिक्ष-यान का पृथ्वी के साथ भली प्रकार संबंध बनाये रखती हैं। सोवियत संघ के विशाल राज्य क्षेत्र पर, बहुत दूर-दूर, ध्रुव नियंत्रण परिमाप विन्यासों के केन्द्र फैले हुए हैं। इनकी निरंतर सहायता और कार्य के बिना कोई भी अन्तरिक्ष उड़ान सम्भव नहीं है।

अन्तरिक्ष के साथ सम्पर्क स्थापित करने के लिए इतने अधिक स्टेशनों की आवश्यकता क्यों है ? बात यह है कि कोई एक परिमाप केन्द्र, अन्तरिक्ष-यान के साथ बहुत देर तक सम्पर्क नहीं रख सकता; यह सम्पर्क केवल कुछ मिनट तक ही होता है। कारण यह है कि कुछ समय पश्चात् यान उस केन्द्र के रेडियो दृश्यता के जोन से बाहर आ जाता है। इस थोड़े-से
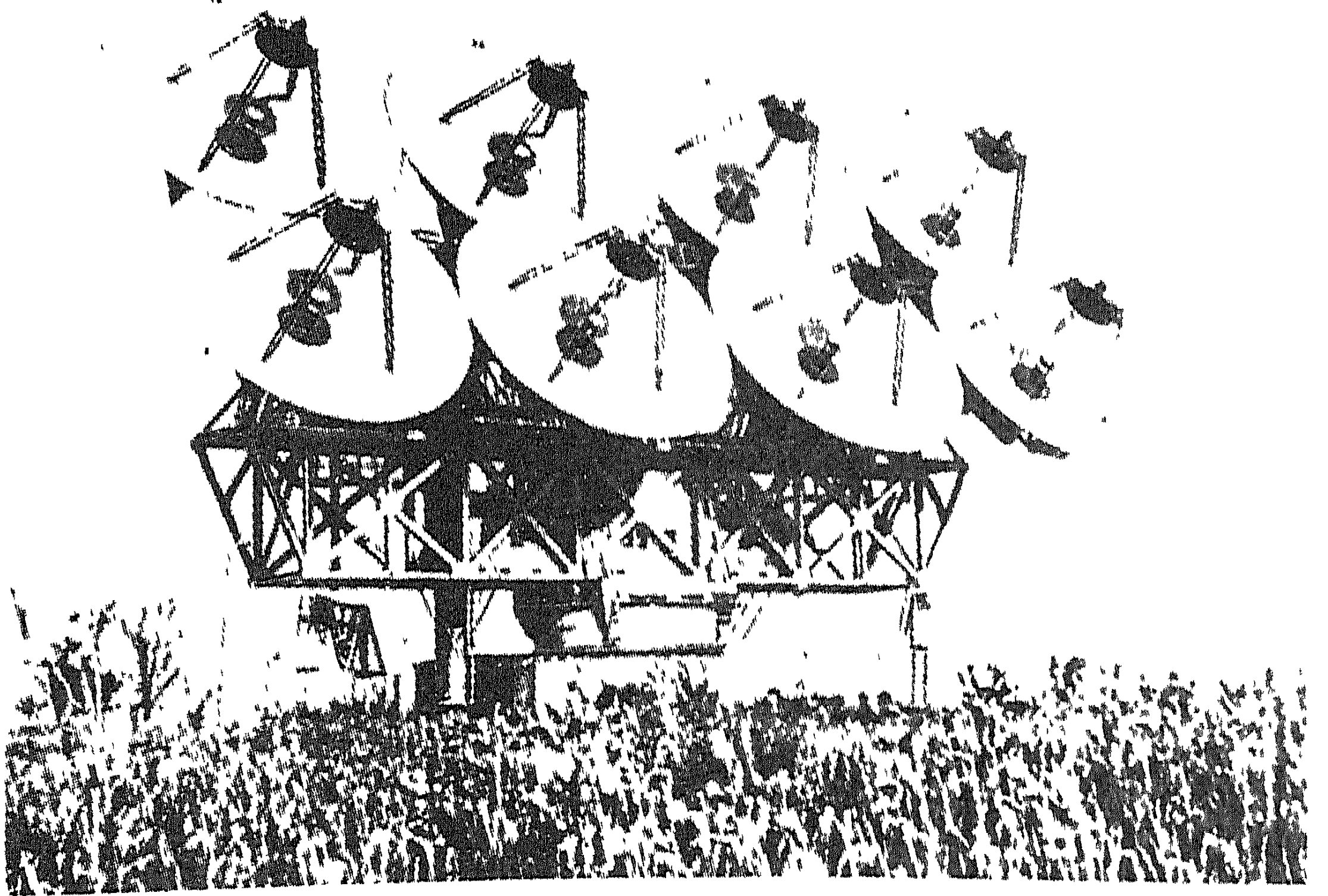
केन्द्र का सुदूर अंतरिक्ष से संचार स्थापित करने वाले ऐंटेना

सीमित समय में आप बहुत कुछ न तो प्रेषित कर सकते हैं, न ही ग्रहण कर सकते हैं। अन्तरिक्ष-यान तथा नियंत्रण केन्द्र के बीच सूचना का आदान-प्रदान बहुत अधिक होता है। अन्तरिक्ष-यान से आने वाली रेडियो तरंगें न केवल अंतरिक्ष-यात्रियों के स्वास्थ्य के बारे में, अंतरिक्ष उड़ान के कार्यक्रम के बारे में, सूचनाएं लाती हैं, बल्कि उस सब के बारे में भी सूचनाएं लाती हैं जो नया या रोचक हो, जिसे अंतरिक्ष ऊंचाई से देखा गया है। साथ ही, अन्तरिक्ष की सुदूर परिमापों के बारे में भी वे सूचनाएं लाती हैं।

यान पर सैकड़ों प्रेषित्र लगे होते हैं। ये उन सभी स्थानों पर लगे होते हैं, जहाँ क्रमागत रूप से ताप व दाब, गति तथा त्वरण, वोल्टता और यान के विभिन्न भागों पर कम्पन, मापने की आवश्यकता होती है। यान के विभिन्न उपकरणों व यन्त्रों के कार्य की सूचनाएं प्राप्त करने के लिए

अन्तरिक्ष-यान पर निरंतर सैकड़ों विविध परिमाप लिये जाते हैं। प्रेषक इन भौतिकीय राशियों को वैद्युत संकेतों में रूपांतरित करते हैं और फिर रेडियो द्वारा पृथ्वी पर प्रेषित कर देते हैं। नियंत्रण कक्ष में, अंतरिक्ष-यान के रेडियो प्रेषित्र एक सेकेण्ड में हजारों अंकों को प्रेषित करते हैं। और, इनमें से अनेक अंको पर उड़ान का भविष्य निर्भर करता है।

यहाँ एक प्रश्न उठ सकता है : दूरमितिक (टेलीमीटरिक) सूचनाओं की क्या आवश्यकता है ? अंतरिक्ष-यान में यात्री होते हैं, यंत्र लगे होते हैं, तथा इनकी सहायता से यान के तंत्रों का कार्य नियंत्रित किया जा सकता है। यहाँ बात वस्तुतः यह है कि यदि सभी परिमापों को अंतरिक्ष-यान के पैनल पर ही रखा जाये, तो वह आकार में बहुत विशाल व जटिल हो जायेगा। इसके अलावा उड़ान के समय अनेक परिमाप भी लिये जाते हैं, जिनमें केवल अन्तरिक्ष तकनीशियनों की ही रुचि होती है।

अंतरिक्ष-यान के साथ सम्पर्क के प्रत्येक मिनट का अधिकतम लाभ प्राप्त होना चाहिए। समय की बचत करने के लिए विशेष उपकरण होते हैं, जो अंतरिक्ष-यान में लगाये जाते है। इनमें से एक उपकरण को कार्यक्रम-समय-उपकरण कहते हैं। यह उपकरण पृथ्वी से केवल एक संकेत ग्रहण करता है और अन्तरिक्ष-यान को एक साथ कई आदेश देता है। इन आदेशों का क्रम, अन्तरिक्ष-यान की उड़ान से पूर्व ही यान में रिकार्ड कर दिया जाता है। पृथ्वी से आने वाला संकेत केवल इस कार्यक्रम को चालू कर देता है। इस प्रकार का कार्यक्रम अपने आदेश पूर्वनिर्धारित क्रम में स्वत. देता रहता है।

लेकिन, संकेतों के अतिरिक्त, अंतरिक्ष-यात्रियों को कभी-कभी भूमि पर स्थित नियंत्रण ग्रुप से सलाह-मशवरा भी भेजा जाता है, दूरमापी सूचनाओं का विश्लेषण करके प्राप्त होने वाले आंकड़े भी प्रेषित किये जाते हैं और कभी-कभी अन्तरिक्ष उड़ान में परिवर्तन भी किये जाते हैं। निस्संदेह, यह सभी कुछ पांच-दस मिनट में कर डालना असम्भव होता है।
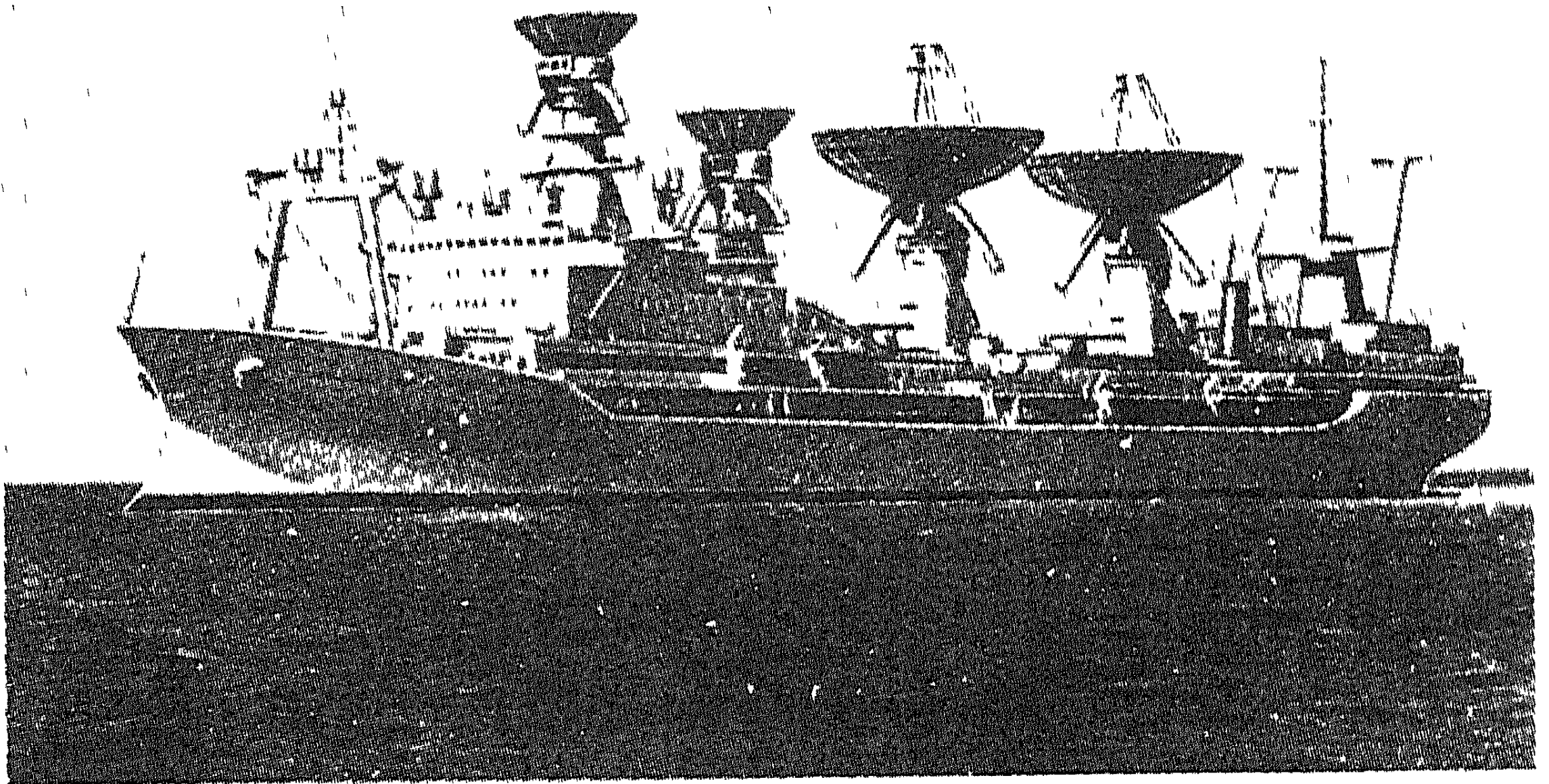
अन्तरिक्ष अनुसंधान के समुद्री बेड़े का नायक जहाज—"अंतरिक्ष-यात्री यूरी गागरिन"

यही कारण है कि सोवियत संघ के राज्य क्षेत्र पर परिमाप केन्द्रों का एक जाल-सा बिछा हुआ है। ये परिमाप केन्द्र उन स्थानों पर स्थित हैं, जिन पर से अन्तरिक्ष-यान उड़ान भरते हैं। रेडियो दृश्यता के क्षेत्र, जो एक-दूसरे के निकट स्थित होते हैं, थोड़ा-थोड़ा अध्यारोपण करते हैं। एक क्षेत्र से पूर्णतया बाहर आये बिना ही अन्तरिक्ष-यान दूसरे क्षेत्र में प्रवेश कर जाता है। आदेश, परिमाप विन्यास का प्रत्येक केन्द्र, अन्तरिक्ष-यान के साथ अपना वार्तालाप समाप्त करके अगले केन्द्र को दे देता है। अन्तरिक्ष से प्राप्त की गयी सूचना उसी समय नियन्त्रण केन्द्र को दे दी जाती है।

यह अन्तरिक्ष दौड़ सोवियत संघ के राज्य क्षेत्र के बाहर भी चालू रहती है। उड़ान से काफी समय पूर्व सोवियत संघ की विज्ञान अकादमी के अभियान जहाज समुद्र में निकल पड़ते है। इन पर विशेष उपकरण होते हैं। इनमें एक जहाज है—"अन्तरिक्ष-यात्री व्लादीमिर कोमारोव।" बहुत विशाल, चमकते श्वेत गोले इस बहुत बड़े आकार वाले जहाज

को एक अद्भुत रूप दे देते हैं। इन गोलों के अन्दर पैराबोला की आकृति वाले ऐन्टेना की प्लेटे घूमती रहती हैं। गोलाकार आवरण—आने वाले तूफानों व मौसम की विभिन्न बाधाओ से ऐन्टेनाओ की रक्षा करता है तथा रेडियो तरंगो को प्रवेश होने देता है। स्थिरीकरण उपकरण तथा विशेष कम्प्यूटर, ऐन्टेना को किसी भी समय क्षैतिज अवस्था मे रोक सकते हैं। समुद्री जहाजों तथा अन्तरिक्ष-यानों के बीच बना हुआ सम्पर्क, एक क्षण के लिए भी नही रुकना चाहिए। जहाज की अनेक प्रयोगशालाओं पें सर्वाधिक आधुनिक उपकरण, यंत्र तथा कम्प्यूटर लगे होते है।

हिन्द महासागर, प्रशान्त महासागर, अतलातिक महासागर में "अन्तरिक्ष" पोत के कई अन्य जहाज सदैव विद्यमान रहते हैं, जिनका नेतृत्व "अन्तरिक्ष-यात्री यूरी गगारिन" नामक जहाज करता है।

पृथ्वी पर अंतरिक्ष-यात्री की न केवल आवाज सुनी जा सकती है, बल्कि उसे देखा भी जा सकता है क्योंकि अंतरिक्ष-यान के कक्षकों मे दूर-दर्शन प्रेषित्र लगे होते हैं। सुवाह्य दूरदर्शी कैमरे की सहायता से अंतरिक्ष-यान के साथ दो दिशाओं में सम्पर्क स्थापित किया जा सकता है। भूमि के शक्तिशाली रेडियो संकेतों की तुलना में, अंतरिक्ष उपकरणों द्वारा भूमि पर भेजे जाने वाले रेडियो संकेत बहुत ही हल्के होते हैं। यही कारण है कि ग्राही ऐन्टेना इतने बड़े होते हैं। परवलयिक प्लेट का व्यास जितना अधिक होगा, उतनी ही अधिक ऊर्जा वह प्लेट अंतरिक्ष से ग्रहण कर सकेगी।

अंतरिक्ष आकाश में अंतरिक्ष-यानों तथा स्पुतनिकों के प्रेषित्रों के अतिरिक्त, रेडियो तरंगों के अन्य स्रोत भी विद्यमान हैं। अदृश्य किरणों के द्वारा पृथ्वी पर तथाकथित रेडियो तारे आक्रमण करते रहते है; सूर्य भी रेडियो तरंगों का एक बहुत शक्तिशाली जनित्र है। मन्दाकिनी के इस रेडियो आक्रमण को चीरने हेतु अंतरिक्ष-यानों से आने वाले संकेतों के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि उन्हें अधिक प्रबल बनाया जाये।

जटिल फिल्टरों के विन्यास की सहायता से संकेतो को पृथक किया जाता है।

पृथ्वी पर अंतरिक्ष से आने वाली सूचनाएं "गुप्त लेख" में होती हैं। रेडियो संकेत बड़ी-बड़ी चुम्बकीय फिल्मों की रीलों पर लिखे जाते हैं, बहुत ही यथातथ्य रूप से ये विश्लेषित किये जाते हैं, और विशेषज्ञों की भाषा में उनका अनुवाद किया जाता है। ये सभी कार्य बहुत ही कम समय में करने होते हैं।

सर्वाधिक आधुनिक कम्प्यूटरों से युक्त नियन्त्रण केन्द्र में (सार्वभौम कम्प्यूटर एक सेकेन्ड में दस लाख परिकलन कर सकता है) अत्यधिक कठिन परिकलन बड़ी तत्परता से किये जाते हैं।

केन्द्र में कक्ष की शुद्धि करने के लिए आँकड़ो का विश्लेषण किया जाता है, एक निश्चित दायरे या समय में, या सम्पर्क के समय, किये जाने वाले कार्यक्रमों को निर्धारित किया जाता है। उड़ान के अंत में यान को रोकने के उपकरण को चालू करने का क्षण निश्चित किया जाता है और अंतरिक्ष-यान को पथ्वी पर उतारने के कार्य की अवधि भी निर्धारित की जाती है।

अनेक कम्प्यूटरों की सहायता से केन्द्र के विशेषज्ञ, दूरमितिक सूचनाओं की विशाल मात्रा का विश्लेषण करते हैं; सर्वप्रथम, वे उन आँकड़ों का विश्लेषण करते है, जो उड़ान के प्रत्येक क्षण के लिए आवश्यक होते है। इसके बाद, कम आवश्यक सूचनाओं का अध्ययन करने के पश्चात् नियंत्रण केन्द्र अंतरिक्ष उड़ान के नियंत्रण के बारे में सलाह देता है। यही कारण है कि क्षण भर के लिए अंतरिक्ष-यान जब रेडियो दृश्यता के क्षेत्र के बाहर हो जाता है, या अंतरिक्ष-यात्री आराम कर रहे होते हैं, तो नियंत्रण केन्द्र में विशेषज्ञ अपना कार्य जारी रखते हैं।

लीजिए, अंतरिक्ष-यात्री अपना कार्यक्रम पूरा कर चुके है। अब, अत-

रिक्ष उड़ान का एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण चरण आता है— पृथ्वी पर अवतरण।

हम अवतरण के लिए तैयार हैं। "सोयूज-24" अतरिक्ष स्टेशन "साल्यूत-5" को छोड़ देता है, और अपने आप हमारे ग्रह के ऊपर चक्कर लगाने लगता है। पृथ्वी पर उतरने के लिए अंतरिक्ष-यान की चाल को कम करना आवश्यक होता है। यह चाल प्रथम अंतरिक्ष कक्ष की चाल से कम होनी चाहिए।

अतः, अंतरिक्ष-यान को रोकने के लिए इसे अभिविन्यस्त करना होगा। दृश्यदर्शी की सहायता से हम पृथ्वी की सतह को ध्यान में रखते हुए अंतरिक्ष-यान को धीरे-धीरे घुमाना आरम्भ करते है। नियंत्रण के हैंडल से प्रेषित आदेश, इंजन तक पहुंचने से पहले, जटिल यात्रा करता है। सर्वप्रथम यह आदेश जाइरोदर्शी में जाता है, उसके पश्चात् लॉगिंग बाक्स में, जो इंजन की कार्य अवधि निर्धारित करते हैं। ये दोनों मिलकर इंजन को चालू करते हैं। केवल इसके उपरान्त ही नियंत्रण वाल्व, जो आदेश पहुँचते ही खुल जाते हैं, इंजन में ईंधन प्रेषित करते हैं।

मैं नियंत्रण पैनल पर लगे बटन को दबाता हूं। तत्काल एक हरा बल्ब जल उठता है। यह इस बात का सूचक है कि जाइरोदर्शी कार्य के लिए तैयार है। इसके उपरान्त अगला आदेश देता हू, ... और बटन चालू हो जाता है; इसे कहते है—हस्तचालित अभि-विन्यास। अब हैंडल को घुमाने के बाद नियंत्रण सकेत पहले जाइरोदर्शी में जायेगा, फिर इंजन तक। "सोयूज" यान पर लगे अभिविन्यास यंत्र विभिन्न प्रकार के हैं: कुछ निम्न क्षेप वाले, तथा कुछ उच्च क्षेप वाले। नया आदेश आता है तथा इसी के साथ एक और बल्ब जल उठता है (अभिविन्यास के इंजन), जिसका अर्थ यह हुआ कि निम्न क्षेप वाले इंजनों का चयन किया गया है।

यान का कमाण्डर नियंत्रण हैंडल घुमाता है, और नियंत्रण पैनल पर कभी बल्ब जल उठता है तो कभी बन्द हो जाता है। इसका अर्थ यह हुआ कि अभिविन्यास के इंजन कभी चालू हो जाते है, तो कभी बन्द हो जाते हैं, ताकि वे अंतरिक्ष-यान को घुमा सकें। पृथ्वी के घूमने की गति दृश्यदर्शी में अपनी दिशा बदल लेती है, और हमारी आवश्यक दिशा के निकट हो जाती है। अंतरिक्ष-यान को रोकने के लिए, उसके शुद्धि ब्रेक इंजन उपकरण का तुंड अंतरिक्ष उड़ान की दिशा के आगे की ओर होना चाहिए। दृश्यदर्शी में हमें ऐसा लगना चाहिए कि पृथ्वी नीचे से ऊपर की ओर आ रही है, न कि ऊपर से नीचे की ओर जा रही है—जैसा कि अंतरिक्ष उड़ान के समय दिख रहा था।

अब नियंत्रण पैनल पर बल्ब जलने तथा बुझने बन्द हो गये हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि अभिविन्यास इंजन बन्द हो गये हैं, तथा अंतरिक्ष-यान जड़त्व के आधार पर घूम रहा है। अब यान का कमाण्डर नियंत्रण हैंडल को उसकी आरम्भिक अवस्था में ला देता है, और उसके पश्चात् बल्ब फिर जलना-बुझना बन्द कर देते है, इजन पुनः कार्य करने लगते हैं और अब वे मोड़ने वाली गति को रोक देते हैं। अब यान का घूमना भी धीरे-धीरे बन्द हो जाता है, और थोड़े समय बाद यान पूर्णतया रुक जाता है। हम आवश्यक स्थिति को प्राप्त कर चुके हैं। अब हम ब्रेक लगाने के लिए मुख्य इंजन को चालू कर सकते हैं। हमारा अवतरण पूर्वनिर्धारित स्थान पर ही हो, इसके लिए हम पहले ही से निर्धारित समय पर ब्रेक लगायेंगे।

ब्रेक लगाने के पश्चात् अंतरिक्ष-यान का कक्षको में विभाजन हो जाता है। अनावश्यक उपकरण और यंत्र कक्षकीय वायुमंडल में जलकर

राख हो जाते हैं, तथा अवतरण उपकरण, जिसमें अंतरिक्ष-यात्री बैठे होते है, पृथ्वी पर आ जाता है।

"सोयूज" अंतरिक्ष-यान का अवतरण उपकरण, बहुत विशाल मोटर गाड़ी की हेड-लाइटों जैसा लगता है। इसे यह आकार और रूप बिना किसी कारण के नहीं दिया गया है। सर्वप्रथम सोवियत अंतरिक्ष-यानों के अवतरण उपकरणों की आकृति एक गोले की भाँति थी। ब्रेक लगने तथा अंतरिक्ष-यानों के विभागों का पृथक्करण होने के पश्चात् अवतरण उपकरण, जिसमें अंतरिक्ष-यात्री बैठे होते थे, पृथ्वी पर एक अनियंत्रित उड़ान द्वारा उतरता था, जिसे तथाकथित मुक्त प्रक्षेप पथ कहते हैं। इसके परिणाम-स्वरूप वायुमण्डल की घनी परतों में गुरुत्वीय बल अंतरिक्ष-यात्रियों पर बहुत अधिक प्रभाव डालता था।

गुरुत्वीय बल कम करने के लिए अंतरिक्ष तकनीशियनों ने वायुयान तकनीशियनों की मदद ली। वायुयान के अवतरण के समय वायुयान के पंखों की उठान परिवर्तित कर दी जाती है, जिसके लिए आपतन कोण को कम या अधिक कर दिया जाता है (वायुयान का अनुदैर्घ्य अक्ष और उड़ान की दिशा के बीच का कोण तथा अंतरिक्ष-यानों के लिए—अंतरिक्ष-यान का अनुदैर्घ्य अक्ष और विपरीत दिशा से आने वाले गैसीय प्रवाह का कोण)। ऐसा करने के लिए फ्लैप बंद कर दिये जाते हैं और अन्य यंत्रों की सहायता ली जाती है। दूसरे शब्दों में, एयरोड्रोम की अवतरण पट्टी पर उड़ान करने वाली मशीन की गतिज विशेषता परिवर्तित हो जाती है (वायु गतिज विशेषता उस अनुपात को कहते हैं जो विपरीत प्रतिरोध बल और उड़ान बल के बीच है)।

"सोयूज" अंतरिक्ष-यान के अवतरण उपकरण का स्वरूप, वायुमंडल मे उड़ान के समय उसे उठान बल प्रदान करता है। इस उठान की मात्रा और दिशा को नियंत्रित किया जा सकता है। इसके लिए, उपकरण को

अनुदैर्ध्य अक्ष के चारों ओर निम्न क्षेप वाले रॉकेट इंजन की मदद से घुमाया जा सकता है। ये इंजन अवतरण उपकरण पर लगे होते हैं। इस प्रकार वायु गतिज विशेषता के साथ अवतरण, एक नियंत्रण किया जाने वाला अवतरण होता है।

मुक्त प्रक्षेप पथ द्वारा अवतरण की तुलना मे हम, ऊँचाई और दिशा पर नियंत्रण रखते हुए, अंतरिक्ष-यात्रियों पर गुरुत्वीय बल का प्रभाव दो या तीन गुना कम कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, नियंत्रण किया जाने वाला अवतरण काफी अधिक परिशुद्धता के साथ होता है। उठान बल को बढ़ाकर हम अवतरण प्रक्षेप पथ को लम्बा कर देते है, और उठान बल को कम करके इस पथ को छोटा कर देते हैं। इस तरह, हम अवतरण उसी स्थान पर कर सकते हैं, जहाँ पहले से ही अंतरिक्ष-यात्रियों की खोज टोली प्रतीक्षा कर रही होती है।

पृथ्वी पर अवतरण के समय, अंतरिक्ष-यात्रियों पर पड़ने वाले गुरुत्वीय बल के अतिरिक्त एक अन्य खतरा भी होता है—अति उच्च तापमान। ब्रेक इंजन को चालू करने से, अंतरिक्ष-यान को केवल इस बात में सरलता होती है कि वह पृथ्वी के समीप के कक्ष में आ जाता है। यान का मुख्य ब्रेक उस समय लगता है, जब वायुमंडल उसका प्रतिरोध करता है। जैसे ही अवतरण उपकरण वायुमंडल में प्रवेश करता है, एक बहुत भारी धक्का-सा लगता है। इस समय टकराव के फलस्वरूप बनने वाला तापमान लगभग 3500-4000° सें० तक होता है। स्मरण रहे कि सूर्य की सतह पर तापमान लगभग 6000° सें० है।

हम इस तापमान को कम कर सकते थे, यदि सम्पूर्ण अवतरण के समय, इंजन की सहायता से, हम आरम्भ से ही अंतरिक्ष-यान की गति को धीमा करते रहते। लेकिन इसके वास्ते हमें ईंधन की बहुत विशाल मात्रा की आवश्यकता होती। अंतरग्रहीय यात्रा से पृथ्वी पर लौटने वाले अंतरिक्ष-यात्रियों को इंजन की सहायता से अवतरण करने के लिए अपने

साथ ईंधन की अतिरिक्त मात्रा ले जानी पड़ती, जिसका कुल द्रव्यमान उनके यान के कुल द्रव्यमान के आधे के लगभग होता। अंतरिक्ष मे एक किलोग्राम भार को भेजने के मूल्य को जानते हुए अंतरिक्ष तकनीशियन इस प्रकार के अपव्यय की छूट नही दे सकते।

अवतरण के समय, वायु गतिज गुण के प्रयुक्त किये जाने पर अवतरण उपकरण कम गर्म होता है। मुक्त प्रक्षेप-पथ की तुलना में नियंत्रण प्रक्षेप-पथ द्वारा अवतरण करने पर, अंतरिक्ष अवतरण उपकरण की सतह पर उत्सर्जित होने वाली ऊष्मा की मात्रा दस गुना कम होती है। लेकिन यह ऊर्जा उस धात्विक चादर को द्रवित करने के लिए पर्याप्त होती है, जिसके अन्दर अंतरिक्ष-यात्री बैठे होते हैं। इसीलिए अंतरिक्ष-यान तकनीशियनों ने एक ऊष्मारोधी स्क्रीन बनायी है, जिसे अवतरण उपकरण के उस सबसे बाहरी भाग पर चढ़ा दिया जाता है जो सर्वाधिक गर्म होता है।

यह स्क्रीन, निम्न ऊष्मा चालकता वाले पदार्थों की अनेक परतों से बनी होती है। प्रवाह के प्रभाव से स्क्रीन का बाहरी हिस्सा गर्म होता है, उसके पश्चात्, गलन के चरण से दूर रहते हुए, वाष्पित हो जाता है। विपरीत दिशा से आने वाली वायु की तीव्र धारा गर्म पदार्थ के कणों को अपने साथ ले जाती है और अवतरण के दौरान ऊष्मा-रक्षी पदार्थ का द्रव्यमान बहुत ही कम हो जाता है। लेकिन अवतरण उपकरण की संरचना अपरिवर्तित रहती है। अवतरण उपकरण पर जलने वाली ज्वाला, जो प्रदीपकों के कांच पर लपकती रहती है, कक्षक के अन्दर के तापमान को 10° या 20° सें० से अधिक नही बढ़ा सकती।

लीजिए, अब अवतरण उपकरण की चाल 200 मीटर प्रति सेकेन्ड हो गयी है। पृथ्वी तक की दूरी लगभग 9 कि० मी० है। अब हम पैराशूट खोल सकते है। कक्षक की छत एक ओर खुल जाती है, और एक छोटा-सा—ब्रेक लगाने वाला—पैराशूट खुल जाता है। यह अवतरण उपकरण की चाल को और भी कम कर देता है। विस्फोट का एक

और धक्का लगता है और ब्रेक-पैराशूट का बिना आकृति वाला कैनवस, एक ओर उड़ जाता है। अवतरण उपकरण के ऊपर अपचायी पैराशूट खुल जाते है, और उसके पश्चात् एक बहुत विशाल—विभिन्न रगो वाला—-मुख्य पैराशूट खुलता है ! एक अन्य हल्का-सा विस्फोट होता है—और कलाबाजी लगाता हुआ ऊष्मा-रोधी स्क्रीन का प्याला भी नीचे गिर जाता है। उपकरण का द्रव्यमान कम हो जाता है, जिसका अर्थ हुआ कि उसकी गति भी कम हो गयी है।

अन्तरिक्ष-यात्रियों को लिये हुए कक्षक धीरे-धीरे उतरता है। अब पृथ्वी तक की दूरी लगभग 1 मीटर रह गयी है। एक और विस्फोट होता है। उपकरण के तल मे से अग्नि की विशाल ज्वाला निकलती है। इस समय मृदु अवतरण के पाउडर इंजन चालू हो गये हैं। धूल के अभ्र, जो एक मोटी चादर बना देते हैं, कक्षक के चारो ओर इकट्ठे हो जाते हैं। एक मृदु, हल्का-सा, धक्का लगता है—जैसा कि लिफ्ट में हम अनुभव करते हैं। अन्तरिक्ष-यात्रा पूर्ण हो गयी है। अन्तरिक्ष-यान का पृथ्वी पर अवतरण हो गया है।

आइए, अब हम यह देखें कि अन्तरग्रहीय यात्रा से आने वाले अंतरिक्ष-यान किस प्रकार अवतरण करते है। अन्तरिक्ष से वापिस आने वाला यान, पृथ्वी के वायुमण्डल में बहुत तीव्र गति से प्रवेश करता है। उपकरण की यह गति उस गति से डेढ़ गुना अधिक होती है जब यान भूमि के समीपतम कक्षा से वापिस लौटता है। अवतरण के समय गुरुत्वीय बल अतिरिक्त रूप से बढ़ न जाये और अन्तरिक्ष-यान एक निश्चित स्थान पर मृदु अवतरण करे—इसके लिए आवश्यक है कि वायुमण्डल में प्रवेश करने के स्थान और कोण का पूर्णतया पालन किया जाये।

अवतरण की परिशुद्धता सर्वप्रथम सप्रतिबन्धित उपभू (कंडीशनल पेरिजी) द्वारा निर्धारित होती है। सप्रतिबंधित उपभू ? हां, यह पृथ्वी से वह न्यूनतम दूरी है जिस पर अन्तरिक्ष-यान यात्रा कर सकता—यदि पृथ्वी

पर वायुमण्डल न होता। यदि सप्रतिबंधित उपभू परिकलित उपभू से अधिक है, तो अन्तरिक्ष-यान वायुमण्डल के ऊपरी विरल स्तरो मे कम तीव्रता से रुक सकेगा और निर्धारित अवतरण स्थल से दूर चला जायेगा। यदि सप्रतिबंधित उपभू परिकलित उपभू से कम है, तो, विलोमतः, अंतरिक्ष-यान निर्धारित अवतरण स्थल तक नही पहुंच पायेगा। यहा तक कि सप्रतिबंधित उपभू की ऊचाई मे एक कि०मी० कि त्रुटि से ही, अवतरण स्थल से यान के वास्तविक अवतरण की दूरी का अन्तर 50 कि०मी० तक हो जा सकता है। परिकलित उपभू से दस-बीस कि०मी० का सप्रतिबधित उपभू का विचलन होने से अतरिक्ष-यान या तो पृथ्वी के बराबर से आगे गुजर जायेगा, या उस पर अत्यधिक गुरुत्वीय बल प्रभाव डालेगा। वायुमण्डल मे प्रवेश करने के कोण मे भी त्रुटि अंतरिक्ष-यान पर इसी प्रकार का प्रभाव डालती है। अंतरग्रहीय अंतरिक्ष-यान को, वायुमंडल मे बहुत ही न्यून कोण पर (लगभग स्पर्शज्या) प्रवेश करना चाहिए। परिकलित कोण से 1° का विचलन भी गलत परिणामों का कारण बन सकता है।

यदि ऊपर दिये गये इन आंकड़ों की तुलना अन्तरग्रहीय आकाश के विशाल विस्तार से की जाये, तो सरलता से आप यह समझ सकते हैं कि अंतरिक्ष-यानों का नियन्त्रण तथा अभिविन्यास तंत्र कितना अधिक त्रुटिहीन होना चाहिए।

अंतरग्रहीय यान के नियंत्रण अवतरण की विशेष रूप से चर्चा करना आवश्यक है। इस प्रकार का अवतरण, मुक्त प्रक्षेप पथ की तुलना में, अधिक जटिल होता है। कारण यह कि अवतरण उपकरण वायुमण्डल में दो बार प्रवेश करता है। वायुमण्डल में प्रथम प्रवेश करने पर, अंतरिक्ष उपकरण का अंशतः ब्रेक लगता है। यहां नियन्त्रण के समय प्रतीत होता है मानो आरोदन बल अंतरिक्ष अवतरण यान को परिकलित ऊँचाई से नीचे नहीं गिरने देता, और उसे पुनः अंतरिक्षीय आकाश में प्रेषित कर देता है। वायु-

मडल की घनी परतों से बाहर निकलकर अंतरिक्ष-यान अनियत्रित उड़ान भरता है, जो मुक्त प्रक्षेप पथ पर होती है। वायुमण्डल मे दूसरी बार प्रवेश करने पर नियन्त्रण विन्यास पुनः चालू हो जाता है, और अवतरण उपकरण को आगे की उड़ान के लिए आवश्यक स्थिति मे ला देता है। अवतरण उपकरण का इसके पश्चात् नीचे आने का क्रम ठीक उसी प्रकार होता है, जैसा कि पृथ्वी के स्पुतनिक की स्थिति मे—जिसका नियन्त्रणपूर्ण अवतरण होता है। वायुमण्डल मे दो बार प्रवेश करने वाली नियन्त्रित उडाने चन्द्रमा के चारो ओर चक्कर लगाने वाले सोवियत स्वचलित "जोन्द-6" तथा "जोन्द-7" और अमरीकी अंतरिक्ष-यान "अपोलो" ने भरी थीं।

कक्षकीय स्टेशनों से "ईथर आवासों" तक: "मानव सदैव पृथ्वी पर नही रहेगा, बल्कि वह प्रकाश तथा आकाश का पीछा करते हुए आरम्भ मे डर-डर कर वायुमंडल की सीमा पार करेगा, और उसके पश्चात् निकट सौर आकाश पर पूर्ण विजय प्राप्त कर लेगा।" उस समय सन् 1911 मे शायद ही किसी ने इस भविष्यवाणी पर विश्वास किया होगा। लेकिन क०अ० त्सीओलकोव्स्की ने अपने विचारो का विकास जारी रखा। 15 वर्ष पश्चात् उन्होंने अन्तरिक्ष आकाश पर मानव की विजय का "कार्य-क्रम" प्रस्तुत किया। लगभग 50 वर्ष से कुछ ही अधिक समय बीता है—और, उस वैज्ञानिक द्वारा प्रस्तुत कार्यक्रम का आधा भाग पूरा भी हो चुका है।

इस कार्यक्रम मे 16 चरण थे। इसका छठा चरण था : "अभिक्रिया उपकरण पृथ्वी के वायुमण्डलीय आवरण से अधिक दूर होते जायेगे तथा ईथर में अधिक समय तक रहेंगे। लेकिन फिर ये उपकरण वापिस लौट आयेंगे, क्योंकि इनमें खाद्य सामग्री तथा ऑक्सीजन की सीमित मात्रा ही होगी।" त्सीओलकोव्स्की ने "अभिक्रिया उपकरण" कहा, तथा हम आज-कल इसके लिए अन्तरिक्ष-यान शब्द प्रयुक्त करते है।

कुछ अन्य चरण भी हैं, जो अब पीछे रह गये है । [illegible], [illegible] चरण निम्नलिखित है . "पृथ्वी के चारो ओर विशाल आवासों का निर्माण किया जाता है ।" आप ज़रा अनुमान लगाइए . 1926 में एक पिछडा हुआ देश अभी हाल ही मे विश्व युद्ध तथा गृह-युद्ध के घावों से उभरा था; कालूगा प्रान्त...। और इस प्रकार की भविष्यवाणी ! लेकिन जो उस समय अतिशयोक्तिपूर्ण स्वप्न लगता था, वर्तमान समय [illegible], दृश्यमयी रूपरेखा धारण कर रहा है । अन्तरिक्ष-यात्री डॉ०क०प० फिओक्तिस्तोव कहते हैं : "अंतरिक्ष आवासों की योजना अब सम्भव है । वस्तुतः इस प्रकार के नगर में, एक पारिस्थितिक चक्र मे, ऊर्जा-संतुलन प्राप्त किया जा सकता है । जीवन के लिए आवश्यक अवस्थाएं न केवल स्वीकार्य है, बल्कि आकर्षक है । अतरिक्ष आकाश मे प्रवेश करके मानव उसी दहलीज पर रुकने की अपेक्षा, उस पर सम्पूर्ण सफलता प्राप्त करेगा, और आवास की व्यवस्था भी आरम्भ कर देगा ।..."

निस्संदेह, अभी यह एक दूरस्थ लक्ष्य है । इसके लिए आवश्यक है कि हम अन्तरिक्ष आकाश मे भेजे जाने वाले यात्रियों की संख्या तथा वहाँ उनके रहने की अवधि मे वृद्धि करें और साथ ही वैज्ञानिक तथा उत्पादन कार्यों की सम्भावनाओं का विकास करे । इस दिशा में प्रथम डग उठाये जा चुके हैं : अन्तरिक्ष तकनीक का नियमानुसार एक नया स्वरूप—कक्षकीय स्टेशन—बनाया जा चुका है ।

ये भारी, भूमि के कृत्रिम स्पुतनिक है, जिन पर अंतरिक्ष-यात्री काफी अधिक समय तक रह सकते हैं और कार्य कर सकते हैं । अंतरिक्ष-यानों के विपरीत, कक्षकीय स्टेशन पृथ्वी पर पुनः नही लौटते हैं; केवल समयानुसार उनके मालिक बदलते रहते है ।

अन्तरिक्ष में मिलन (डॉकिंग) : अंतरिक्ष मे यान के उडान की कला तथा डॉकिंग की विधियों में पूरी तरह पारंगत हुए बिना, स्टेशनों

का निर्माण असम्भव था। 1967 मे सोवियत संघ ने पृथ्वी के कृत्रिम स्पुतनिकों का सर्वप्रथम स्वचलित डॉकिंग किया। 1969 मे "सोयूज" यानो ने अन्तरिक्ष में मिलन के फलस्वरूप सर्वप्रथम अंतरिक्ष स्टेशन बनाया। मिलन के पश्चात् अंतरिक्ष स्थानांतरण ने स्थान लिया। अंतरिक्ष-यात्रियों ने खुले अन्तरिक्ष मे से होकर, एक यान से निकल दूसरे यान मे प्रवेश किया।

19 अप्रैल 1971 को रेडियो ने निम्नलिखित घोषणा की : कक्षकीय वैज्ञानिक स्टेशन "साल्यूत" अंतरिक्ष में सफलतापूर्वक उड़ान भर रहा है। शीघ्र ही "सोयूज-11" यान पर सवार होकर अंतरिक्ष-यात्री ग० दोब्रोवोल्स्की, व० वोल्कोव तथा व० पत्सायेव "साल्यूत" स्टेशन पर उतरे। स्टेशन का संचालन किया जाने लगा। इस स्टेशन का आकार प्रभावी था : यातायात यान सहित इसकी लम्बाई—23 मी०; भार—लगभग 25 टन; समुद्रित कक्षों का आयतन—100 मी०^3।

यान से निकलकर यात्री बेलनाकार संयोजी विभाग मे आ जाते है। इस विभाग मे कुछ वैज्ञानिक उपकरण तथा "ओरियन" दूरदर्शी के नियंत्रण यंत्र लगे है। इसके बाद अंतरिक्ष घर का मुख्य भाग आता है—कार्य विभाग। स्टेशन का यह सबसे बड़ा विभाग दो सिलिंडरो से बना हुआ है जो परस्पर एक शंकु द्वारा जुड़े हैं। एक सिलिंडर का व्यास लगभग 3 मी० तथा दूसरे सिलिंडर का व्यास 4 मी० से अधिक है।

छोटे सिलिंडर मे अन्तरिक्ष-यात्रियो का कार्य-स्थान तथा स्टेशन का मुख्य नियन्त्रण पटल होता है। कार्य विभाग के शंकु भाग में शारीरिक व्यायाम के उपकरण—अंतरिक्ष-यात्रियों का "स्टेडियम", तथा डॉक्टरी देख-रेख के यंत्र व उपकरण होते है। स्वचलित पथ पर यात्री सैर करते तथा दौड़ते हैं।

कार्य विभाग में यात्रियों का शयन स्थान भी है। यात्री स्वयं को एक

सोने के थैले में ज़िप द्वारा बंद करके आरामदेह स्थिति मे लेट जाता है। इसी विभाग मे रेफ्रीजरेटर, जल, खाद्य वस्तुओं का भंडार तथा भोजन गर्म करने के उपकरण होते हैं। कार्य विभाग की दीवार के पीछे इंजन सशुद्धि यंत्र लगा है। इसकी सहायता से स्टेशन, अंतरिक्ष में विभिन्न कार्य कर सकता है। कक्षकीय स्टेशन अपेक्षाकृत कम ऊँचाई पर उड़ान करते हैं। 300-500 कि०मी० की दूरी पर वायुमण्डलीय प्रतिरोध अनुभव होता रहता है, इसीलिए संशुद्धि करके कक्षक को अधिक ऊपर उठाया जाता है।

स्टेशन के यन्त्रो तथा वैज्ञानिक उपकरणों के कार्य करने के लिए विशाल वैद्युत ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

"साल्यूत" के कर्मीदल ने बहुत अधिक वैज्ञानिक कार्य किया। स्टेशन पर गामा-दूरदर्शी, "ओरियन" तंत्र लगे हुए हैं, जिनकी मदद से सुदूर तारों के स्पेक्ट्रमों का अध्ययन किया जाता है। वायुमण्डल के बाहर कार्य करने वाली यह सर्वप्रथम खगोलीय वेधशाला थी। खगोल विज्ञान पर अधिक ध्यान देते हुए भी, अंतरिक्ष-यात्री पृथ्वी को नही भूले। उन्होंने चक्रवातों के विकास, हिम निक्षेपों तथा कृषि स्थिति, वायु व जल की शुद्धता का अध्ययन किया; बहुमूल्य खनिजों की खोज के लिए भूवैज्ञानिक खोज कार्य किया; और, राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की विभिन्न शाखाओ के लिए लाभकारी प्रयोग किये। अंतरिक्ष-यात्रियों ने जीवविज्ञान संबंधी कार्य भी किया, जो, लगता है, उनसे कोई सम्बंध नही रखता।

इस संक्षिप्त तथा अधूरी सूची से ही स्पष्ट हो जाता है कि प्रथम कक्षकीय स्टेशन—"साल्यूत"—के कर्मीदल का कार्यक्षेत्र कितना विस्तृत था। स्टेशन की उड़ान की अवधि तीन सप्ताह थी। इस अवधि मे अंतरिक्ष-यात्रियों ने शोधकार्य का सुनियोजित कार्यक्रम पूरा कर दिया। ग० दोब्रोवोल्स्की, व० वोल्कोव तथा व० पत्सायेव के इस महान् कार्य की प्रशंसा समस्त संसार में की गयी। सोवियत संघ के अन्तरिक्ष-यात्री व०

शतालोव ने कहा : "हम, सोवियत अन्तरिक्ष-यात्री, यह समझते हैं कि अंतरिक्ष का मार्ग अज्ञात, कठिन और जटिल है। लेकिन अतरिक्ष तकनीक के भावी विकास और उस पर पूर्ण विजय को, ब्रह्मांड के रहस्यों की खोज को, अब कोई नही रोक सकता।"

1973 की वसन्त ऋतु में अंतरिक्ष में सर्वप्रथम अमरीकी कक्षकीय स्टेशन "स्काइलैब" छोड़ा गया। यह आकाशीय प्रयोगशाला (यही "स्काइ-लैब" नाम का अनुवाद है) रॉकेट "सैटर्न-5" के तृतीय चरण से बनायी गयी थी। इसके ईंधन व टैंकर में निवास-स्थान तथा कार्य विभाग बनाये गये, उपचायक टैंकर को अवशिष्ट द्रवों के टैंकर में रूपांतरित कर दिया गया। स्टेशन के साथ जोड़े गये प्लेटफॉर्म, तथा द्वार-कपाट कक्ष सहित—इसकी कुल लम्बाई 25 मी० थी।

कक्षक में "स्काइलैब" के पख "खुलने" चाहिए थे—यानी दो सौर बैटरी पैनल खुलने चाहिए थे। लेकिन अंतरिक्ष के मार्ग में एक घटना घटी : सौर बैटरी का एक पैनल टूट गया तथा दूसरा नही खुला। इसी समय इसका अतिरिक्त उल्का-रक्षी आवरण भी टूट गया। फलत: कक्ष में तापमान बहुत अधिक बढ़ गया। अब प्रश्न था : क्या अंतरिक्ष-यात्रियों को इस स्टेशन पर भेजा जाये ? फिर भी, 26 मई को "अपोलो" यान में बैठकर अमरीकी अंतरिक्ष-यात्री च० कॉनराड, प० वाईत्स, द० केरविन इस स्टेशन पर उतरे।

यान तथा स्टेशन के डॉकिग के पश्चात्, अंतरिक्ष-यात्रियो ने स्टेशन शीघ्रता में नही छोड़ा। सौर बैटरी के शेष बचे पैनल को खोलना आव-श्यक था। और इसके लिए, खुले अंतरिक्ष मे बाहर निकलकर यान की

"साल्यूत"—"सोयूज" अंतरिक्ष-कम्प्लेक्स उड़ान के समय तथा दो अंतरिक्ष-यानों "सोयूज" का डॉकिंग के लिए, एक दूसरे के समीप आना
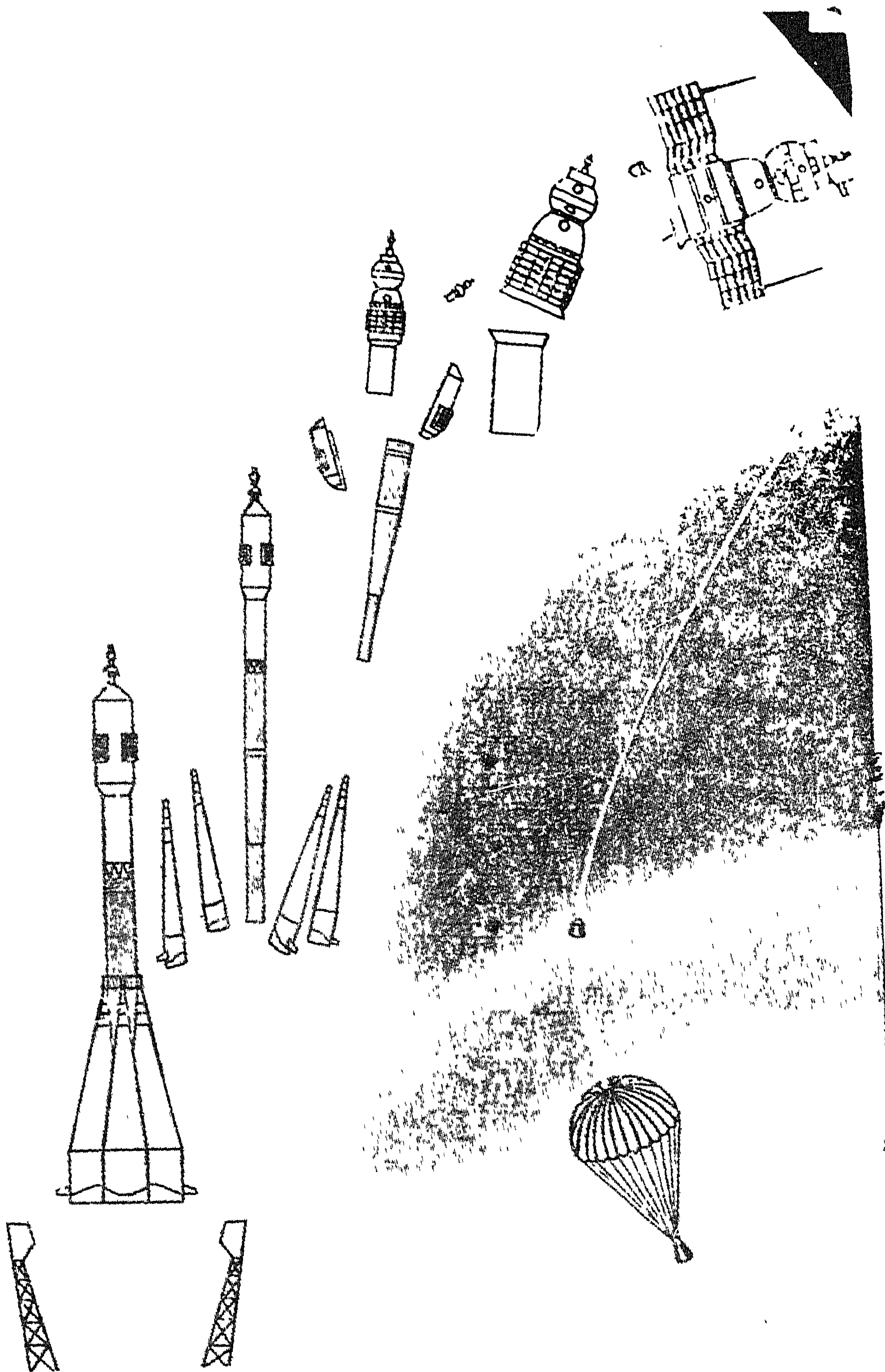
सतह के साथ-साथ चल कर पैनल तक पहुंचना था। यह सच है कि बैटरी तक पहुंचने की अन्य विधि भी थी—अंतरिक्ष-यान पर "सवार होकर" जाना। अमरीकी अंतरिक्ष-यात्रियों ने यही विधि अपनायी।

स्टेशन के साथ उड़ रहे यान के द्वार में से, पेटी से कसी कटार को उठाकर अंतरिक्ष सूट पहने अंतरिक्ष-यात्री प० वाईत्स ने कर्तित्र और कांटे की सहायता से पैनल को पृथक करने की कोशिश की। यह सम्भव न हो सका, तो अंतरिक्ष-यात्रियों ने स्टेशन के ऊपर "सौर छतरी" लगा दी जो एक ऊष्मा-रक्षी आवरण था। अंतरिक्ष प्रयोगशाला में तापमान कम हो गया और यात्रियों ने अपना कार्य आरम्भ किया।

खगोलविज्ञान के उपकरणों की सहायता से यात्रियों ने सूर्य का अध्ययन किया। यहां से बिना किसी प्रकार की वायुमण्डलीय बाधा के मानव काफी समय तक सौर धब्बों तथा प्रदीप्ति का अध्ययन कर सका। अंतरिक्ष-यात्री सौर ज्वाला देखने में भी सफल हुए। उन्होंने अंतरिक्ष से पृथ्वी पर संदेश भेजा : "सूर्य पर अभी तक देखी गयी सभी परिघटनाओं में से यह सर्वाधिक विशाल तथा अविश्वसनीय थी।"

1969 में "सोयूज-6" के अंतरिक्ष-यात्री ने अंतरिक्ष मे धातुओं की वेल्डिंग की। अंतरिक्ष में यह सर्वप्रथम तकनीकी कार्य था। "स्काइलैब" स्टेशन पर लगी, वैद्युत भट्ठी की मदद से अमरीकी यात्रियों ने इस क्षेत्र में कार्य करना जारी रखा।

प्रथम कर्मीदल कक्षक में एक महीने तक रहा। दो सप्ताह बाद ही अमरीकी अंतरिक्ष-यात्रियों ने सौर बैटरी पैनल को स्वतंत्र करके स्टेशन को अगले कर्मीदल के लिए तैयार कर दिया। नया कर्मीदल "स्काइलैब" में दो महीने तक रहा।

सोवियत डिजाइनर इस दौरान अपने अंतरिक्ष-यान "साल्यूत" को और अधिक पूर्ण एवं त्रुटिहीन बनाते रहे। इस कोटि के प्रत्येक अगले

स्टेशन मे वे विभिन्न नये यन्त्र लगाते रहे। उदाहरण के लिए, तृतीय तथा चतुर्थ "साल्यूत" के ऊर्जा प्रदाय संयंत्रों में काफी अधिक परिवर्तन किये गये।

आरम्भ में सौर बैटरी, स्टेशन की सतह के साथ एकदम चिपकी रहती थी। और इसीलिए, उससे अधिकतम धारा प्राप्त करने हेतु यान के साथ स्टेशन को काफी देर तक सूर्य पर अभिविन्यस्त करना पडता था एवं स्टेशन को घूर्णन द्वारा इसी स्थिति मे रखा जाता था। नये "साल्यूत" यानों पर सौर वैद्युत स्टेशन का पैनल थोड़ा स्वतत्र था। इनमे से प्रत्येक पैनल—अपने ही तार द्वारा—यान के चारों ओर घूम सकता था। सौर संवेदक के आदेशों के अनुसार पैनल स्वयं घूम कर सूर्य की किरणों की ओर आमुख हो जाता था। सूर्य के प्रति अभिविन्यास अब अनावश्यक हो गया। इसका अर्थ यह हुआ कि अब स्टेशन अधिक स्वतत्र हो गये, तथा वैज्ञानिक शोधकार्यो के लिए उपलब्ध समय मे वृद्धि हुई। अभिविन्यास करने मे कई बार अनेक कार्यो को बीच मे रोक देना या बन्द कर देना पड़ता था।

कक्षकीय प्रयोगशाला के भीतर भी कई नये उपकरण प्रकट हुए। अतः, "साल्यूत-4" पर सोवियत अन्तरिक्ष-यात्री रोज़मर्रा के अवशिष्ट पदार्थो को धात्विक डिब्बों में डाल कर विशेष कपाटों में से यान के बाहर फेंक देते थे, जहां वे वायुमण्डल मे ज्वलित हो जाते थे। स्टेशन के अन्दर इकट्ठी होने वाली वायु की नमी का "साल्यूत-4" के यात्रियों ने सही उपयोग किया। "साल्यून-3" पर इस नमी का उपयोग यदि केवल रोज़मर्रा के काम में किया जाता था, तो "साल्यूत-4" के यात्रियों ने इसे पीना आरम्भ कर दिया—अर्थात् नमी इतनी अधिक शुद्ध हो गयी थी। इस प्रकार, कक्षक में पदार्थो के पृथक-पृथक विनिमय चक्र बन गये। "साल्यूत-4" पर सर्वप्रथम साइकिलअर्गोमीटर—अंतरिक्ष-यात्रियों के व्यायाम का एक उत्तम साधन—इस्तेमाल किया गया।

"साल्यूत-4" की उड़ान, उससे पूर्व भेजे गये स्टेशनों से उल्लेखनीय रूप से ऊपर थी। इसी कारण उसे बिना संशुद्धि किये अंतरिक्षीय कक्षक में अधिक देर तक रखा जा सका। स्टेशन में कर्मीदल की अनुपस्थिति मे वह स्वचलित कार्यक्रम के आधार पर उड़ान भरता रहता था। इसमें महत्वपूर्ण भूमिका यंत्र "कसकाद" की थी, जिसकी मदद से स्टेशन की आवश्यक अभिविन्यस्त स्थिति अपरिवर्तित बनी रहती थी। "साल्यूत-4" पर ही स्वचलित संचालन तंत्र ने प्रायोगिक रूप से सर्वप्रथम कार्य किया, जिसके फलस्वरूप स्टेशन में ही अनेक आंकड़ों का विश्लेषण हो जाता था। और, यात्रियों को विशाल सूचनाओं को पृथ्वी पर प्रेषित करने के कार्य से राहत मिली।

अगला स्टेशन—"सोयूज-5"—भी अपने से पहले के स्टेशनो से भिन्न था। एक भिन्नता उसके स्थायीकरण यन्त्र सम्बन्धी थी। इसमें अभिक्रिया इंजनों के अतिरिक्त एक गतिपालक चक्र गोला था। स्टेशन जब अपनी किसी एक स्थिति से विचलित होता था (उदाहरण के लिए, अन्तरिक्ष-यात्री के दीवार से टकराने के फलस्वरूप), तो नियन्त्रण तंत्र से वैद्युत-चुम्बकों को आदेश जाता था, जो गतिपालक चक्र गोले को घुमा देते थे। इस प्रकार बनने वाला अभिक्रिया आघूर्ण, स्टेशन को विपरीत दिशा में घुमा देता था और स्टेशन अपनी पहले की स्थिति में आ जाता था। स्टेशन पर यदि केवल अभिक्रिया इंजन लगे होते, तो वे स्थायीकरण पर ही बहुत अधिक आवश्यक ईंधन व्यय कर देते। और, "साल्यूत-5" पर इंजन केवल उस समय चालू होते थे जब गतिपालक चक्र गोले की गति अधिकतम हो जाती थी। अतएव, ईंधन की इस प्रकार काफी अधिक बचत हो जाती थी।

दो कर्मीदलों ने इस स्टेशन पर 300 से अधिक विभिन्न शोधकार्य तथा प्रयोग किये। इसके परिणामस्वरूप पृथ्वी पर भेजने के लिए काफी विशाल सूचना-सामग्री एकत्रित हुई। सामान्यतः, इस सूचना को रेडियो

द्वारा प्रेषित किया जाता है, या वापिस लौटने वाले अन्तरिक्ष-यात्रियों के साथ भेज दिया जाता है । "साल्यूत-5" पर एक अन्य विधि अपनायी गयी । उसके ऊपर पृथ्वी पर वापिस जाने वाला एक छोटा-सा उपकरण लगा दिया गया था। इस उपकरण में आवश्यक सामग्री तथा संयंत्र रख दिये जाते थे, और यह उपकरण स्वयं पृथ्वी पर अवतरण करता था ।

29 सितम्बर 1977 को कक्षक मे "साल्यूत-6" स्टेशन भेजा गया। यह कक्षकीय स्टेशन एक आशातीत अंतरिक्ष आधार बन गया ।

अंतरिक्ष प्लेटफार्म पर कभी भी एक ही समय दो यान नही खड़े हुए थे । इसी के साथ, प्रथम बार ऐसा हुआ कि थोड़े समय के लिए आने वाले मेहमान पृथ्वी पर मालिक-यान में बैठकर वापिस लौटे । प्रथम बार ही उड़ान के समय अन्तरिक्ष-यात्रियों ने कक्षक से न केवल शोधकार्य संबंधी सामग्री भेजी, अपितु विशेषज्ञों द्वारा अध्ययन के परिणाम वापिस प्राप्त किये। इस उड़ान मे एक और नया तथा जटिल कार्य किया गया—स्थानातरण : एक कला-कौशल कार्य, जिसे भावी अन्तरिक्ष-यात्री अंतरिक्ष नगर तथा कारखाने बनाते समय प्रायः किया करेंगे ।

सप्ताह, महीने और वर्ष बीते । एक के बाद एक अन्तारक्ष-यात्री आये और स्टेशन भली प्रकार अपना कार्य करता रहा; अंतरिक्ष-यात्रियों को वह पूर्व निर्धारित कार्यक्रम पूरा करने में मदद करता रहा । उड़ान की अवधि बढ़ाने में, उसे अधिक सफल बनाने में—प्रथम बार प्रयोग किये गये स्वचलित मालवाही यानों—"प्रोग्रेस" ने काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभायी ।

स्टेशन की उड़ान अवधि जितनी अधिक हो जाती है, उसके इंजन तंत्र में ईधन उतना ही कम रह जाता है । अंतरिक्ष में प्रथम बार ईधन-भरण का कार्य, मालवाही यान "प्रोग्रेस" ने किया ।

बाहर से देखने में "प्रोग्रेस" "सोयूज" की भाँति ही है । वस्तुतः

इसका आधार "सोयूज" ही है। लेकिन फिर भी यान मे कुछ नयी बातें हैं। इसका भिन्न उपयोग इस परिवर्तन का कारण है । इस यान में कोई पायलट नहीं था; उसके स्थान पर यंत्र लगाये गये, जिनका स्वचलित कार्य पृथ्वी से ही नियन्त्रित किया जाता था। यान पर कर्मीदल भी नहीं था तथा अवतरण उपकरण और वे सभी तंत्र जो ऊंचाई कम करने और मृदु अवतरण में मदद देते थे, अनावश्यक हो गये। इनका स्थान ईंधन तथा उपचायक के डिब्बो ने ले लिया। कक्षकीय विभाग, जिसमें "सोयूज" के यात्री अपना अधिकतम समय बिताते है, "प्रोग्रेस" में माल कक्ष बन गया। यह यान पृथ्वी से स्टेशन तक वायु के पुनर्जनित्र, फिल्टर, काबन डाइऑक्साइड गैस का अवशोषक, तथा अन्य यंत्र व उपकरण ले गया। "प्रोग्रेस" ही पेयजल, खाद्य सामग्री, वायु की संचित मात्रा, स्वच्छ कपड़े व अन्य वस्तुएँ लेकर गया। अन्य वैज्ञानिक यंत्रों के साथ तकनीकी प्रयोगों के लिए "स्प्लाव" (मिश्रधातु) उपकरण भी पहुँचा।

ईंधन के पम्पन की तैयारी काफी समय तक की गयी—हालांकि इसे अंतरिक्ष में प्रथम बार किया गया। ईंधन का सफलतापूर्वक स्थानांतरण किया गया। इसके पश्चात् अंतरिक्ष-यात्रियों ने यान में से माल निकाल कर स्टेशन में उचित स्थानों पर रखा और अनावश्यक सामान तथा वस्तुएँ वापिस यान में रख दीं—"प्रोग्रेस" अन्तरिक्ष में ही जलकर समाप्त हो जाना था।

प्रथम "प्रोग्रेस" का अनुसरण अन्य मालवाही यानों ने किया, और इस प्रकार "पृथ्वी—कक्षक" मार्ग पर यातायात के एक और साधन ने सफलता प्राप्त की।

कभी-कभी अंतरिक्ष-यात्रियों का स्टेशन के बाहर आना भी आवश्यक हो जाता है। अंतरिक्ष में बाहर निकलने की आवश्यकता का कारण केवल उनका एक सीमित कमरे में बन्द रहना ही नहीं है, अपितु अन्य महत्व-

पूर्ण व्यावहारिक कार्य भी हैं। कर्मीदल को न केवल यान या स्टेशन के अन्दर लगे यंत्रों व उपकरणों पर ही, अपितु बाहर लगे यंत्रों व उपकरणों पर भी, नियंत्रण रखना होता है। केवल ऐसी स्थिति में ही वह अपने अंतरिक्षीय-गृह का सच्चा मालिक हो सकता है।

सर्वप्रथम "साल्यूत-6" का "द्वार" प्रथम कर्मीदल के वहाँ पहुँचने के डेढ़ सप्ताह बाद खुला था। ग० ग्रेच्को तथा यू० रोमानेन्को मेहमानों की प्रतीक्षा कर रहे थे; उनके प्रवेश की पूर्ण तैयारी थी। लेकिन कुछ संदेह अभी भी था। "सोयूज-25", जो दो महीने पूर्व आ गया था, स्टेशन के द्वितीय प्लेटफार्म के कुछ उपकरणों को हानि पहुँचा सकता था। अतः यह आवश्यक था कि उपकरण तथा यंत्रों को भली प्रकार देखा जाये, और आवश्यकतानुसार उनकी मरम्मत की जाये। यंत्र ठीक थे, तथा 20 दिन पश्चात् अ० माकारोव और व० जानीबेकोव द्वारा संचालित यान को 'रिसीव' किया गया। अंतरिक्ष-यान "साल्यूत" के प्लेटफार्म, बिना किसी कठिनाई के ठीक कार्य करते रहे।

तो भी, एक बार और अंतरिक्ष में बाहर निकलना पड़ा। इसका कारण था स्टेशन की बाहरी सतह पर लगे सूक्ष्म उल्का अभिलेखी यंत्रों के स्थान पर नये यंत्रों को लगाना; कार्बनिक पदार्थो तथा प्रकाशकीय व संरचनात्मक सामग्री के कैसेटों को बदलना; अंतरिक्षीय एक्स-किरण विकिरक को स्टेशन की बाहरी सतह पर कसना; इत्यादि। इस समय तक स्टेशन को अंतरिक्ष में उड़ते एक वर्ष बीत चुका था तथा इसकी बाहरी सतह पर लगे यंत्रों पर अब तक उल्का बमबारी व अंतरिक्षीय विकिरण का प्रभाव काफी स्पष्ट हो जाना चाहिए था।

अंतरिक्ष-यात्रियों की नयी सज्जा : "साल्यूत-6" के यात्रियों ने प्रथम बार नये प्रकार के अंतरिक्ष-सूट पहने। इन्हें देखकर हमें मध्यकाल के योद्धाओं की याद हो आयी। नये अंतरिक्ष-सूट के डिजाइनरों ने स्वयं

इस समानता की ओर संकेत किया, जब उन्होंने इस सूट का वर्णन करते समय कवच का उल्लेख किया। कवच दो धात्विक चादरों का बना होता था, जिन्हें पहनने वाले के वक्ष तथा पृष्ठ की संरचना के अनुसार रस्सी द्वारा बाँध दिया जाता था। और, अब कई शताब्दियों बाद इस कवच को अंतरिक्ष-सूट की धात्विक काया का अंग बना दिया गया। सच है कि अंतरिक्ष में कवच का भार कम हो गया—इसके भारी होने के कारण ही इसका पहनना बंद कर दिया गया था।

अंतरिक्ष में जाने से पूर्व यात्रियों द्वारा क्रमागत रूप से पालन किये जाने वाले उपयोग आदेशों में एक आदेश है : "अंतरिक्ष-सूट में प्रवेश।" जी हाँ, आप इस नये अंतरिक्ष-सूट को पहनने के स्थान पर इसमें प्रवेश करते हैं। आप इसके पृष्ठ भाग में बनाये गये एक द्वार से इसमें प्रवेश करते हैं। द्वार पर ही जीवन रक्षी थैला लगा होता है। ठोस स्कंध में मजबूती से हैलमेट लगी होती है जिस पर कांच के प्रदीपक होते हैं; हाथों व पैरों के आवरण पहले की भाँति मृदु ही रखे गये। इस सूट की मदद से अंतरिक्ष-यात्री सांस ले सकता है; यह सूक्ष्म जलवायु को सामान्य रखता है; इसे धारण किये होने पर अंतरिक्ष-यात्री अंतरिक्ष में सभी आवश्यक कार्य भी कर सकता है। पहले सूट के विपरीत—अंतरिक्ष-सूट के साथ जीवन रक्षी थैला अब बिना पाइपों के ही जुड़ा रहता है। अंतरिक्ष-सूट का कसाव भी अब कम हो गया। इन सभी उपायों के फलस्वरूप, नये डिजाइन का टिकाऊपन तथा रक्षी प्रकार्य भी अधिक दृढ़ हो गया।

इस तरह, वैज्ञानिकों और तकनीशियनों के क्रमबद्ध प्रयत्नों के परिणाम-स्वरूप धीरे-धीरे भावी "अंतरिक्ष आवासों" की यथार्थ रूपरेखा अधिक स्पष्ट होती जा रही है।

लेकिन अंतरिक्ष तकनीशियनों की सृजनात्मकता का लक्ष्य अब इससे भी कहीं आगे है।

सम्भव है कि भावी कक्षकीय स्टेशन —आधुनिक निवास-इमारतों की भांति—मानक ब्लाकों द्वारा अंतरिक्ष में बनाये जायें। स्टेशन के कुछ भाग पृथ्वी के निकट के कक्षक में भेजे जा सकते हैं, और तब इन्हें समायोजित (असेम्बल) किया जा सकता है। पृथक-पृथक निवास कक्षों को संमुद्रित (दबानुकूलित) करना आवश्यक है, ताकि बड़े आकार वाले उल्का-पिड भी स्टेशन के कार्य में कोई विघ्न न डाल सकें।

कुछ योजनाओं के अनुसार अंतरिक्ष में कृत्रिम गुरुत्वीय बल उत्पन्न करने की चेष्टा की जा रही है। भू-गुरुत्वीय बल का स्थान धीरें-धीरे घूम रहे स्टेशन का अपकेन्द्री बल ले सकता है। इसी पर भावी कक्षकीय स्टेशनों की संरचना आधारित होगी। विभिन्न प्रकार की संरचनाएं प्रस्तुत की गयी हैं, जैसे : मोटी गोलाकार, "डम्बेल" की आकृति वाली, घेरे वाली, तारे की आकृति वाली, इत्यादि।

मानव द्वारा संचालित अंतरिक्ष-यानों को अन्तरग्रहीय यात्राओं पर भेजने के लिए आवश्यक है कि पृथ्वी के निकटतम कक्षकों में मध्यवर्ती स्टेशन बनाये जायें। इन आधार स्टेशनों पर विशाल अन्तरग्रहीय लाइनरों (यात्रा-यानों) का समायोजन किया जा सकता है, क्योंकि पृथ्वी से इतने विशाल यानों को अंतरिक्ष में भेजने में सबसे शक्तिशाली रॉकेट भी असफल होंगे। विशाल आकार वाले दीर्घकालिक कक्षकीय स्टेशन, भविष्य में अंतरिक्षीय एयरोड्रॉम बन जायेंगे।

अंतरिक्ष खोज में पारस्परिक सहयोग

आज से 60 वर्ष पहले, जब अंतरिक्ष उड़ान के बारे में केवल बहुत थोड़े लोगों ने ही कल्पना की थी, महान रूसी वैज्ञानिक के० ये० त्सीओल-कोव्स्की का एक उपन्यास "पृथ्वी से बाहर" छपा था। इस पुस्तक में

एक छोटे-से गांव के अध्यापक ने इस बात की परिकल्पना की थी कि प्रथम अंतरिक्ष यात्रा कैसी होगी। त्सीओलकोव्स्की द्वारा परिकल्पित बहुत-सी बातें आज सच हो चुकी हैं, पर यहाँ हम दूसरी ही बात की ओर ध्यान दिलाना चाहेंगे। बात यह है कि प्रसिद्ध वैज्ञानिक त्सीओलकोव्स्की उस समय भी अन्तर्राष्ट्रीयतावाद के महत्व को समझते थे। यही कारण है कि अपनी काल्पनिक अंतरिक्ष यात्रा में उन्होंने विभिन्न राष्ट्रों के वैज्ञानिकों को एक साथ मिलकर कार्य करते दिखाया। प्रत्येक वैज्ञानिक अपने विषय में माहिर था तथा वे सब बड़ी मित्रता व सद्भाव के साथ एक-दूसरे का हाथ बँटा रहे थे। महान वैज्ञानिक का वह सपना आज साकार हो गया है।

सन् 1976 में सोवियत संघ ने अन्य समाजवादी देशों से अंतरिक्ष यात्रा में भाग लेने का प्रस्ताव किया। ये देश आपस में एक होकर अंतरिक्ष के शांतिपूर्ण उपयोग व अध्ययन का प्रयास कर रहे थे। इस प्रकार की उड़ानें सन् 1978 से 1983 के बीच होनी थीं। 1976 में ही चेकोस्लोवाकिया, पोलैंड व जर्मन जनवादी गणतंत्र से अंतरिक्ष यात्रा के प्रत्याशी सोवियत अंतरिक्ष यात्रा प्रशिक्षण केन्द्र में पहुंच गये। इस प्रकार अंतरिक्ष अनुसंधान की दिशा में बिरादराना देशों के सहयोग से एक नया कदम रखा गया।

अब तक 9 समाजवादी देश प्रोग्राम "इंटरकॉस्मोस" में भाग ले चुके हैं। ये सब देश न केवल इस प्रोग्राम में अपना सहयोग देते हैं बल्कि इससे मिले वैज्ञानिक व व्यावहारिक परिणामों का भी लाभ उठाते हैं। इस प्रोग्राम के महत्व को समझने के लिए, आइए इसकी विशेष बातों का अध्ययन करें।

20 से अधिक कृत्रिम उपग्रह "इंटरकॉस्मोस" तथा पचासों रॉकेट 'वर्टिकल' बुल्गारिया, हंगरी, पूर्वी जर्मनी, पोलैंड, चेकोस्लोवाकिया, रूमानिया व सोवियत संघ में बने मंयंत्रों से युक्त थे। इन देशों में बने

उपकरण सोवियत कृत्रिम उपग्रह "कॉस्मोस", "मिट्योर", स्वचलित स्टेशनों "प्रोगनोज" व अंतरिक्ष-यानों "सोयूज" पर लगाये गये थे। सोवियत उपग्रहों व यानों की सहायता से बन्धुत्वपूर्ण देशों में मौसम की भविष्यवाणी की जाती है; दूर-दूर तक रेडियो व टेलीफोन संबंध स्थापित किये जाते हैं; टेलीविजन प्रोग्राम प्रसारित किये जाते हैं; साथ ही, अंतरिक्ष से, हमारी इस भूमि पर विद्यमान उपयोगी खनिज पदार्थों की खोज की जाती है।

ऊपर दिये तथ्य इस बात की पुष्टि करते हैं कि समाजवादी देशों में वैज्ञानिक व तकनीकी उन्नति बहुत ऊँचे स्तर पर हो रही है। पर इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस उन्नति में सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान मानवचालित अंतरिक्ष-यानों ने पाया। मार्च 1978 व मई 1981 के बीच अंतरिक्ष उड़ानों में सभी बन्धुत्वपूर्ण देशों के यात्रियों ने भाग लिया। अंतरिक्ष-यानों "सोयूज" तथा कक्षक स्टेशन "साल्यूत-6" पर सोवियत अंतरिक्ष-यात्रियों के साथ निम्न चालकों ने उड़ान भरी : व० रिमेक (चेकोस्लोवाकिया), म० गेरमाशेव्स्की (पोलैंड), ज० येन (जर्मन जनवादी गणतंत्र), ग० इवानोव (बुल्गारिया), ब० फरकाश (हंगरी), फाम तुआन (वियेतनाम), अ० मेन्देस (क्यूबा), ज० गुरराग्चा (मंगोलिया) तथा द० प्रूनारिऊ (रूमानिया)। प्रत्येक उड़ान एक हफ्ते से ज्यादा लम्बी रही। अंतर्राष्ट्रीय कर्मीदल "साल्यूत-6" स्टेशन पर उड़े, जहाँ उस समय उनके साथ सोवियत अंतरिक्ष-यात्रियों की विभिन्न जोड़ियां थीं। उन्होंने आपस में मिलकर, कार्यक्रम के अनुसार, विभिन्न प्रकार के प्रयोग किये।

कक्षक स्टेशन को प्रायः अंतरिक्ष की वैज्ञानिक प्रयोगशाला कहा जाता है। लेकिन, अगर ध्यान से सोचें तो यह पूर्णतया सही नहीं है। कारण यह कि ऐसी प्रयोगशाला की कल्पना कठिन है, जहाँ कर्मचारी एक समय में ही चिकित्सा, खगोलभौतिकी, भूविज्ञान, बनस्पति विज्ञान व शिल्प विज्ञान का

अध्ययन करते हों। भूमि पर एक पूर्ण संस्थान तक में ऐसा सम्भव नहीं। क्या विश्वविद्यालय में भी ऐसा सम्भव है? विश्वविद्यालय में प्रत्येक विषय के लिए अलग-अलग विशेषज्ञ होते हैं। पर अंतर्राष्ट्रीय कर्मीदल के सदस्यों को तो एक ही समय में कई विशेषज्ञों का कार्य करना पड़ा।

अंतरिक्ष-यात्रियों ने अपना अधिकांश समय भूमि के अध्ययन में बिताया, अर्थात् अपने देश के क्षेत्र का अवलोकन व अध्ययन करने में प्रत्येक देश की अपनी भौगोलिक, भूविज्ञानी, मौसमी तथा अन्य विशेषताएं होती हैं, जिन्हें दृष्टि में रखते हुए अनुसंधान का कार्यकम तैयार किया गया था। उदाहरणार्थ, सोवियत-वियेतनामी कर्मीदल ने मिकोन्ग नदी के डेल्टा का विशेष अध्ययन किया तथा क्यूबा के यात्रियों ने विशेष ध्यान 'स्वतन्त्रता' के इस द्वीप की भौगोलिक आकृति पर दिया। उन्होंने क्यूबा के पिनार-देल-रिओ क्षेत्र पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया। हंगरी वाले ने बालातोन झील व दुनाय नदी पर अधिक ध्यान दिया तथा पूर्वी जर्मनी के यात्री ने अपने देश के पहाड़ी इलाकों का विशेष अध्ययन किया।

निस्संदेह, पृथ्वी के अध्ययन के लिए बनाये गये विभिन्न देशों के अंतरिक्ष उड़ान कार्यक्रमों में कुछ बातें एक-सी थी। उदाहरण के लिए, सभी का ध्यान वायुमंडल की अशुद्धता, मौसम संबंधी परिघटनाओं, वनों व कृषि समस्याओं तथा भौगोलिक आकृति की विशेषताओं की ओर था। यहाँ हम भूविज्ञान के बारे में कुछ विस्तार से बतायेंगे। लगभग सभी अन्तर्राष्ट्रीय कर्मीदल अपने देश में गोल आकृति वाले स्थलों की खोज में व्यस्त रहे थे।

अंतरिक्ष में उड़ान से पूर्व इस प्रकार के विचित्र स्थानों के बारे में कुछ भी ज्ञात नहीं था। किन्तु जब अंतरिक्ष से चित्र खींचे गये, तो पृथ्वी पर अजीब-सी गोल आकृति वाली कुछ चीजें नज़र आयीं। वे पूरी दुनिया में फैली हुई थीं। तब यह समझ में आया कि पहले वे क्यों नहीं दिखायी दी थीं।

पृथ्वी पर परिकल्पित धारणाएं इस सम्बन्ध में कुछ स्पष्ट न कर सकीं। अंतरिक्ष से भूमि पर जिस स्थान पर गोल आकृति वाली चीज दिखायी देती थी, वास्तव में वहाँ ऐसा कुछ नही था। विचित्र गोलों का अस्तित्व कहीं न था। पर अंतरिक्ष से वे घने जंगलो, बीहड़ रेगिस्तानों, नदियों व पहाड़ों—सब के बीच अलग से दिखायी देते थे। इसका यह अर्थ हुआ कि ये गोले जमीन के काफी भीतर धंसे हैं।

कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि 50 करोड़ वर्ष पूर्व पृथ्वी का आकार बड़े चन्द्रमा की भांति था। पृथ्वी पर, उसके उपग्रह चंद्रमा की भाँति, तल से ऊंचाई की ओर गर्म चट्टानें निकलीं, जो ठंडी होकर गोल आकृतियों में परिवर्तित हो गयीं। हो सकता है, इसी कारण आज भी ये अंतरिक्ष से दिखायी देती हैं। आज भी भूमि के तल में विभिन्न पदार्थों की विघटनाभिकता के कारण विशाल गर्मी निकलती है। यह गर्मी अवश्य उसी रास्ते से जमीन के ऊपर आयेगी जहाँ मार्ग खुला है। और अगर पृथ्वी के ऊपर कोई भाग इस प्रकार गर्म हो रहा है, तो वह अपने आस-पास के अन्य भागों से अवश्य भिन्न होगा। यही कारण है उन गोल आकृतियों के अंतरिक्ष से दिखायी देने का।

आज ऐसे कई तथ्य सामने आ चुके हैं जो इस परिकल्पना को सत्य सिद्ध करते हैं। जैसे—कई गोल आकृतियाँ गर्म वातावरण को दर्शा रही थीं। भूमि की इन गोल आकृतियों व चंद्रमा के समुद्रों के बीच सम्बन्धों को दर्शाने वाला एक और तथ्य यह है कि कई गोल आकृतियों के ऊपर G-बल अधिक पाया गया है। यहाँ, गोल चन्द्रमा के समुद्रों में भारों के केन्द्रीकरण की बात को क्यों न याद करें!

गोल आकृतियां विरल धातुओं की प्रलब्धि में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वे भूमि के अन्दर छिपे अन्य कीमती खनिजों को ढूंढने में भी सहायक बनती हैं। देखा गया है कि हीरे व फॉस्फोरस युक्त

खनिज इन गोल चट्टानों के केन्द्र में तथा अभ्रक परिधि में पाये जाते हैं.। यह भी देखा गया है कि जहाँ दो भिन्न आकार के गोले मिलते हैं, वहां कोयला कोक रूप में पाया जाता है ।

इन प्रकार की अज्ञात गोल आकृतियाँ कई समाजवादी देशों के क्षेत्रों में पायी गयीं । इसके परिणामस्वरूप भूवैज्ञानिकों को खनिज पदार्थों को ढूंढ़ने में बहुत सहायता व सफलता मिली ।

"साल्यूत-6" पर विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष-यात्रियों के कार्य के फलस्वरूप पृथ्वी के अन्वेषण के लिए 60,000 से अधिक चित्र, स्पेक्ट्रोग्राम, स्केच व डैटा मिले ।

प्रत्येक अन्तर्राष्ट्रीय कर्मीदल के कार्यक्रम में अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी का अध्ययन भी शामिल था । "साल्यूत-6" की उड़ान के दौरान बिजली की भट्ठियों 'स्पलाव' व 'क्रिस्टल' में 300 से अधिक पदार्थों के नमूने मिले थे । इनमें से 50 से अधिक अन्य समाजवादी देशों के वैज्ञानिकों के बताये ढंग से मिले थे । अन्तर्राष्ट्रीय उड़ानों के फलस्वरूप भारहीनता अवस्था में मिले क्रिस्टलों को—जो कि खगोलभौतिकी व चिकित्सा में ऊष्मा के विकिरण को अंकित करने वाले संयंत्रों में लगे होते हैं, अर्ध-चालक, जो कि माइक्रो इलेक्ट्रॉनिक तकनीक में, लेजर किरणों के व सूर्य बैटरियों के निर्माण में प्रयुक्त होते हैं—भूमि पर वापिस भेजा गया । क्यूबा के वैज्ञानिकों द्वारा अन्वेषित, अंतरिक्ष में कार्बनिक यौगिकों से एकाकी क्रिस्टल बनाने की विधि ने—"स्पलाव" व "क्रिस्टल" के प्रयोगों में महत्वपूर्ण योगदान किया ।

सर्वविदित है कि अन्तरिक्ष यात्रा के दौरान, मनुष्य के लिए सबसे कठिन प्रथम दिवस होते हैं । इस समय उसको "भारहीनता" का अभ्यस्त बनना पड़ता है । उसके शरीर को बिल्कुल नये वातावरण को सहना पड़ता है जिसके परिणामस्वरूप उसे केवल कष्ट ही नहीं होता, बल्कि साथ ही उसकी कार्यक्षमता भी घट जाती है ।

एक के बाद एक छोटी-छोटी अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष उड़ानों ने इस कठिन समस्या का समाधान करने में बहुत सहायता दी । इसी कारण चिकित्सा संबंधी सारा अनुसंधान कार्य, हर उड़ान के परिणामों व आवश्यकताओं को देखकर किया गया ।

चेकोस्लोवाकिया के विशेषज्ञों ने शरीर द्वारा ऑक्सीजन लेने की अवस्था के अध्ययन के लिए एक संयंत्र तैयार किया। इस संयंत्र का प्रयोग कई अंतरिक्ष कर्मीदलों ने किया । पोलैंड, मंगोलिया व रूमानिया के डॉक्टरों ने हृदयवाहिका तंत्र की कार्यविधि के अध्ययन पर ध्यान दिया। पूर्वी जर्मनी, बुलगारिया व हंगरी वालों ने मनोवैज्ञानिक परीक्षण किये तथा क्यूबा वालों ने उंगलियों की गतिविधियों का अध्ययन किया। इसके साथ ही, क्यूबा में खिलाड़ियों व पीड़ित व्यक्तियों के लिए विशेष जूते बनाने के ज्ञान का भी प्रयोग किया गया। इस प्रकार के जूते पहनकर उड़ान के दौरान उत्पन्न हुई पैर की निष्क्रियता को दूर करने में सहायता मिली ।

इन अन्तर्राष्ट्रीय उड़ानों के दौरान विभिन्न विश्लेषण कार्यों का भी अध्ययन किया गया। पोलैंड, पूर्वी जर्मनी व हंगरी के यात्रियों ने सुनने में व देखने में फर्क महसूस किया ।

पृथ्वी पर प्रत्येक जीव गुरुत्व बल को अनुभव करता है। यह इतना स्वाभाविक है कि हम विकास में पृथ्वी के आकर्षण के महत्व को कभी नहीं समझ पाते हैं—जबकि गुरुत्व बल के कारण ही पेड़-पौधों, जानवरों और यहाँ तक कि मनुष्य की बाह्य आकृति ने निश्चित रूप पाया है। गुरुत्व बल के कारण ही दुनिया हमें ऐसी दिखायी देती है। यह अवश्य सच है कि पृथ्वी व अंतरिक्ष पर होने वाले जैविक परिवर्तनों में अवश्य बहुत बड़ा अंतर होगा। पर यह परिवर्तन कैसा होगा, इस बात का उत्तर प्रयोगों से ही मिलेगा ।

सभी अंतरिक्ष उड़ानों में जैविक परिवर्तनों का अध्ययन अवश्य किया जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष उड़ानों के समय "साल्यूत-6" पर पूर्वी जर्मनी में निर्मित तन्तुओं का, क्यूबा की किण्वन का, चेकोस्लोवाकिया में उगायी हरितपुष्पी का तथा वियेतनाम की फर्न व शैवाल (पद्मकाष्ठ) आदि का अध्ययन किया गया।

24 जून 1982 को कॉस्मोड्रोम बाइकानूर से अंतरिक्ष-यान "सोयूज-T-6" छोड़ा गया जिस पर सोवियत व फ्रांसीसी चालक थे। अंतरिक्ष में इसकी प्रतीक्षा एक दूसरा सोवियत कक्षक स्टेशन "साल्यूत-7" कर रहा था जिस पर अ० बिरीजावोई व व० लेबेदेव नामक सोवियत यात्री थे। अन्य समाजवादी देशों के यात्रियों की भांति पश्चिमी यूरोप का प्रथम अंतरिक्ष-यात्री भी कक्षक में एक सप्ताह रहा। इस बार भी यात्रियों ने चिकित्सा समस्याओं पर विशेष ध्यान दिया। फ्रांस में निर्मित पराध्वनिक साज-सामान की सहायता से उन्होंने हृदय की धड़कनों का अध्ययन किया, रक्त चाप नापा। प्रयोग "पोजा" के अन्तर्गत संवेदना व गतिशील अंगों के मध्य संबंध का व दूसरे प्रयोग में दो भिन्न कर्मीदलों के एक साथ मिलने पर उत्पन्न परिस्थितियों का अध्ययन किया गया।

सोवियत-फ़्रांसीसी कर्मीदल ने खगोलभौतिकी की बहुत-सी बातों का अध्ययन किया। रात्रि के समय आकाश की स्थिति को, दूर के अन्य ग्रहों से आते प्रकाश को, उन्होंने बहुत शक्तिशाली कैमरों से अंकित किया। इन चित्रों का महत्व इस बात से समझा जा सकता है कि पृश्वी से वायु-मण्डल में उत्पन्न रुकावटों के कारण ये ग्रह बिल्कुल ही नहीं दिखायी देते हैं।

फ्रांसीसी वैज्ञानिकों ने इस यात्रा के लिए विभिन्न धातुओं को छोटे-छोटे कैप्स्यूलों में रखा तथा अंतरिक्ष में उन्हें बिजली की भट्ठी "क्रिस्टल" में गर्म किया। भारहीनता की अवस्था में एक धातु के दूसरी धातु में

विसरण का अध्ययन किया गया । वे धातुएँ, जो जमीन पर सरलता से मिश्रित नही होती हैं—उनको एक साथ पिघलाया गया ।

सोवियत-फ्रांसीसी कर्मीदल ने जीवविज्ञानी प्रयोग भी किये । एक प्रयोग के दौरान उन्होंने यह देखा कि लघुजीवो की, अंतरिक्ष उड़ान के समय, विभिन्न, ऐन्टीबायोटिकों पर क्या प्रतिक्रिया होती है । इन प्रयोगों के परिणामों से, अंतरिक्ष-यात्रियों के लिए लाभदायी दवाइयों के निर्माण में सहायता मिलेगी ।

फ्रांस के राष्ट्रपति ने इस उड़ान की सफलता पर अपने बधाई संदेश में कहा, "इस उड़ान के परिणामस्वरूप जो नयी जानकारी मिली है, उसका लाभ अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिकों को मिलेगा । इससे चिकित्सा विज्ञान में, जीव विज्ञान में तथा खगोल विज्ञान में नयी सफलताएं मिलेंगी ।" ये शब्द सभी अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष उड़ानों—विगत व भावी—के प्रति कहे जा सकते है ।

"सोयूज"—"अपोलो" : कक्षक में मिलन

अंतरिक्ष-यान का कर्मीदल कठिन विपदा में पड़ सकता है । इससे छुटकारा पाने के लिए विभिन्न देशों के अंतरिक्ष-यात्री न केवल एक-दूसरे की मदद करने के लिए तत्पर रहने चाहिए, अपितु उनके पास इसके लिए सभी तकनीकी साधन भी होने चाहिए । इन्हीं साधनों की व्यवस्था करने का अमरीका तथा सोवियत संघ ने फैसला किया ।

सोवियत संघ तथा संयुक्त राज्य अमरीका के बीच हस्ताक्षरित मई 1972 के अनुबन्ध में लिखा है : "दोनों पक्ष इस बात पर सहमत हैं कि मानव द्वारा संचालित सोवियत तथा अमरीकी अंतरिक्ष-यानों व स्टेशनों के परस्पर समीप आने तथा डॉकिंग के लिए परस्पर सहयोग द्वारा साधन

जुटाये जायेंगे ताकि अंतरिक्ष में मानव की उड़ानों को अधिक सुरक्षापूर्ण बनाया जा सके, और भविष्य में पारस्परिक सहयोग द्वारा वैज्ञानिक प्रयोगों को करने की सम्भावना को बनाये रखा जा सके ।"

इस प्रकार की प्रथम उड़ान के लिए उन यानों का चयन किया गया, जो पहले अनेक बार अंतरिक्ष यात्रा कर चुके थे । अब तक अंतरिक्ष-यान "सोयूज" अंतरिक्ष में कई बार डॉकिंग कर चुका था । "सोयूज" परस्पर मिलन कर चुके थे, कक्षकीय वैज्ञानिक स्टेशनों "साल्यूत" पर कई बार अंतरिक्ष-यात्रियों को ले जा चुके थे। अमरीकी यान "अपोलो" भी अंतरिक्ष के लिए नया नहीं था ।

अंतरिक्षीय मिलन का अनुभव सोवियत तथा अमरीकी डिज़ाइनरों के काम आया । अंतरिक्ष-यानों की संरचना में परिवर्तन करना आवश्यक था, क्योंकि एक-दूसरे से स्वतन्त्र रूप से बनाये गये यान कक्ष में एक हो जाने थे । सर्वप्रथम उस भाग में परिवर्तन किये गये जो परस्पर समीप आकर डॉकिंग करने वाले थे । विशेषज्ञों के शब्दों में, इन्हें परस्पर अनुकूल बनाना था । सोवियत अंतरिक्ष-यात्री न० न० रूकाविश्नीकोव ने इसे अधिक सरल शब्दों में समझाया : "यदि ताले को कोई चाबी खोल दे, तो समझना चाहिए कि ये परस्पर अनुकूल हैं ।" इस विचार को आगे बढ़ाते हुए कहा जा सकता है कि चाबी-ताला के जोड़े में चाबी सदैव सक्रिय होती है । ताला तो केवल प्रतीक्षा करता है कि उसे खोला जाये । ठीक इसी प्रकार डॉकिंग में भाग लेने वाले दो अंतरिक्ष-यानों में हमेशा एक यान सक्रिय होता था, तथा दूसरा यान निष्क्रय होता था ।

"सोयूज" और "अपोलो" यानों के डॉकिंग उपकरणों को एक समान बनाया गया । इस प्रकार कोई भी यान दूसरे यान के समीप आकर डॉकिंग कर सकता है ।

मास्को में एक प्रेस-कान्फ्रेंस में पत्रकारों के प्रश्नों के उत्तर देते हुए "सोयूज—अपोलो" परियोजना के अमरीकी निर्देशक डा० लान्नी ने

समझाया कि नये डॉकिंग यंत्र किस प्रकार बनाये गये है तथा वे किस प्रकार कार्य करेंगे। उनका उत्तर संक्षिप्त-सा था, और बिना अनुवाद के समझ में आ गया। डॉ० लान्नी ने अपनी उंगलियों को खोलकर हाथ अलग कर दिये, और फिर हाथों को इस प्रकार जोड़ा कि दोनों हाथों की उंगलियां परस्पर पक्की जकड़ में बन्द हो गयीं। वस्तुतः "सोयूज" तथा "अपोलो" के नये डॉकिंग यंत्र एक ही मनुष्य की दो हथेलियों के समान हैं।

डॉकिंग : एक अंतरिक्ष-यान से दूसरे अंतरिक्ष-यान में अंतरिक्ष-यात्रियों के स्थानांतरण के लिए क्या डॉकिंग प्रर्याप्त है ? इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए उदाहरण लेना होगा...गोताखोरों का। बहुत अधिक गहराइयों से ये इतने धीरे-धीरे और ध्यानपूर्वक क्यों ऊपर आते हैं ? इसलिए कि दाब के एकदम कम होने से—और सतह की अपेक्षा जल के नीचे दाब हमेशा उच्च होता है—रुधिर में से, उसमें विलीन, नाइट्रोजन के बुदबुदे उठने लगते हैं। गैसीय धारा रुधिर-वाहिकाओं में विघ्न उत्पन्न करती है, और इसके फलस्वरूप पेशियों और वाहिकाओं में बहुत तीव्र पीड़ा मालूम होती है।

यही पीड़ा अन्तरिक्ष-यात्री सोवियत यान से अमरीकी यान में जाते समय अनुभव करते। बात वस्तुतः यह है कि "सोयूज" यान के भीतर वायुमंडल लगभग पृथ्वी के वायुमंडल जैसा ही रहता है—वही दाब तथा वही संयोजन। "अपोलो" के विभागों में दाब लगभग तीन गुना निम्न होता है, तथा यहां शुद्ध ऑक्सीजन प्रयुक्त की जाती है।

सर्वाधिक सरल यह होता कि दोनों यानों में एक समान वायुमंडल बनाया जाये। लेकिन इसके लिए कम से कम एक यान के यंत्रों तथा संरचना में काफी अधिक परिवर्तन करने होते। इसीलिए दोनों देशों ने समझौता किया। सह-उड़ान के समय दाब के परिवर्तित होने से उत्पन्न तकलीफ से बचने के लिए तय किया गया कि "सोयूज" में दाब कम कर दिया
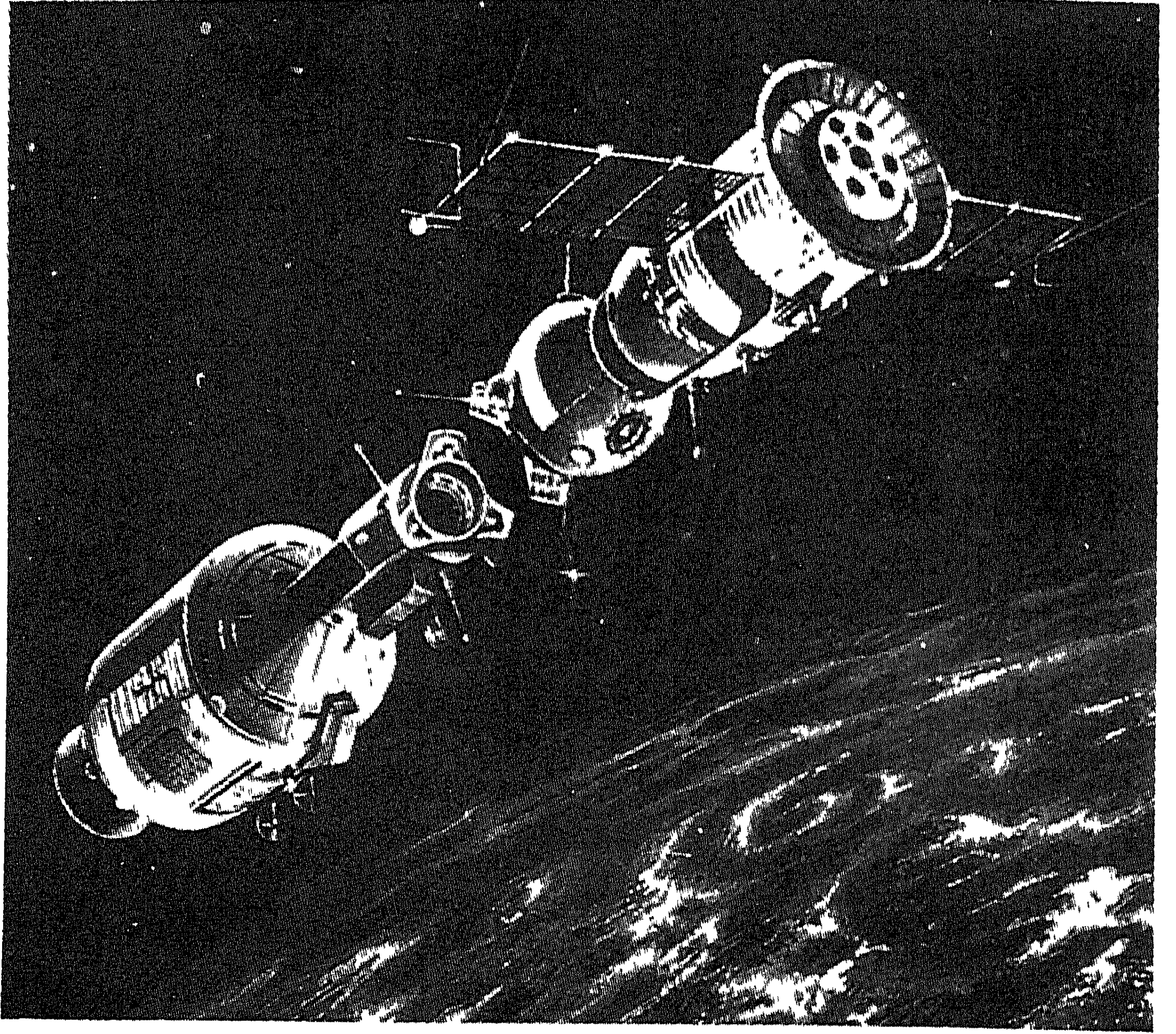
अंतरिक्ष-यान "सोयूज"—"अपोलो" संयुक्त उड़ान के समय

जाये तथा "अपोलो" में बढ़ा दिया जाये। और, दोनों यानों के वायुमंडलों को परस्पर मिलने न देने के लिए यानों को एक विशेष कक्ष द्वारा जोड़ा गया—जिसे डॉकिंग माड्यूल का नाम दिया गया। इस विभाग में प्रवेश करने के बाद अंतरिक्ष-यात्री अपने-अपने कक्ष के द्वारों को दृढ़ता से बन्द करते हैं, जिससे अब उनका अन्तरिक्षीय घर पृथक हो जाता है, और इस विशेष कक्ष में वे वह वायुमंडल उत्पन्न करते हैं जो दूसरे यान के अन्दर है। अब अंतरिक्ष-यात्री सहज ही दूसरे यान मे प्रवेश कर सकते हैं।

परस्पर एक-दूसरे की बात समझने के लिए आवश्यक था कि दोनो यानों के अंतरिक्ष-यात्री एक ही भाषा में वार्तालाप करें। अमरीकी अंतरिक्ष-

अंतरिक्ष-यानों "सोयूज" व "अपोलो" की उड़ान का मार्ग
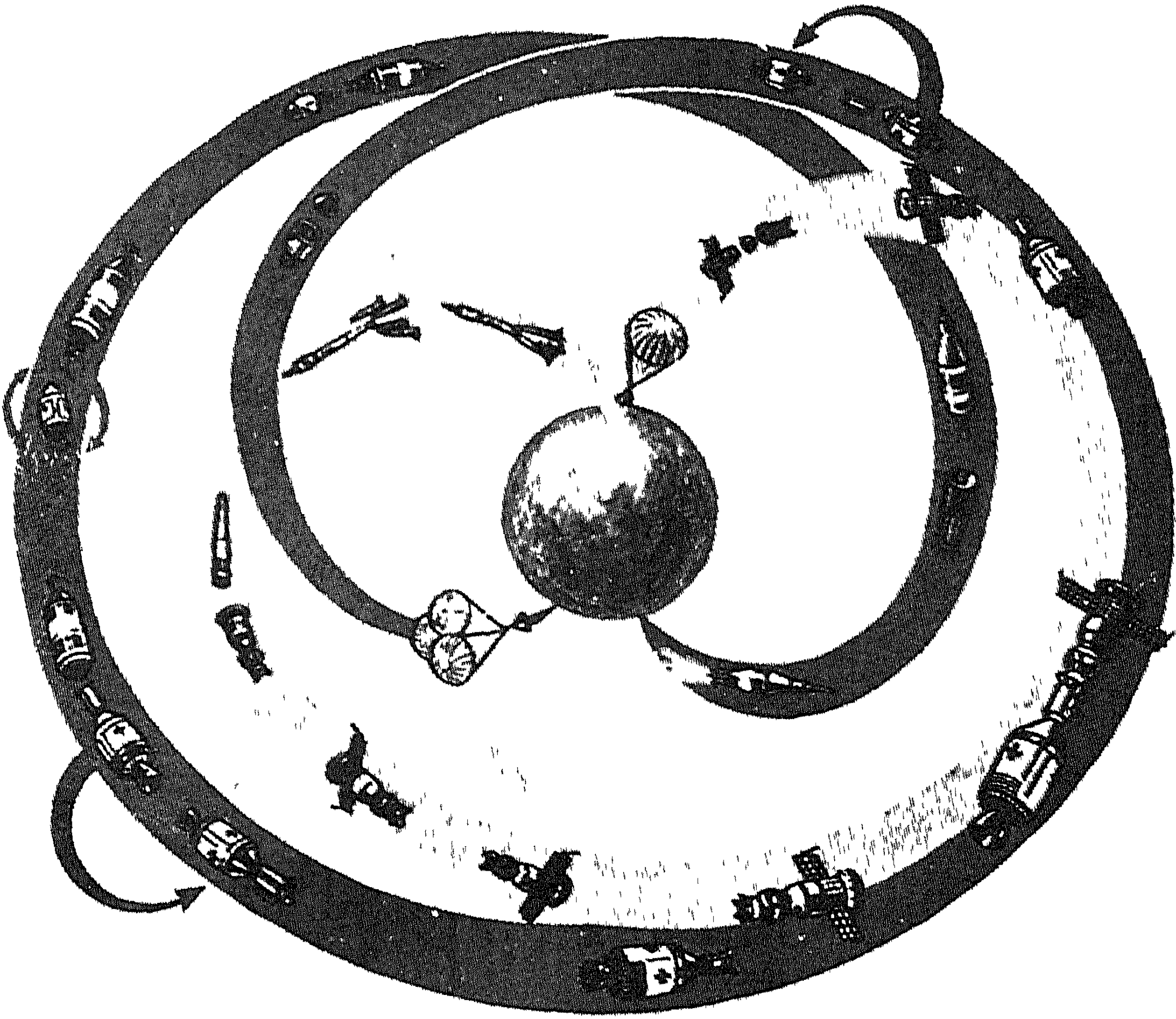
यात्री सोवियत यात्रियों के साथ रूसी भाषा में तथा सोवियत यात्री अमरीकी यात्रियों के साथ अंग्रेजी भाषा मे बात करेंगे। सोवियत यात्री अलेक्सेई लियोनोव और वालेरी कूबासोव अंग्रेजी उच्चारण में हालांकि सफल नहीं थे, और अमरीकी यात्री थॉमस स्टेफर्ड, वैन्स ब्रेन्ड और डोनाल्ड स्लैटन के लिए रूसी शब्द कठिन थे, फिर भी वे शीघ्र ही एक-दूसरे को भली प्रकार समझने लगे।

इस संयुक्त उड़ान की तैयारी सोवियत सघ की विज्ञान अकादमी के एक और समझौते— 'सोयूज' तथा 'अपोलो' यानों की भावी अंतरिक्षीय उड़ान के लिए दोनों पक्षों का पूर्णतया तैयार होना और परियोजनों के

प्रारम्भिक कार्यों के परिणाम"—पर हस्ताक्षर किये जाने पर पूरी हुई ।

15 जुलाई 1975 को मास्को समय के अनुसार दोपहर के 3 बजकर 20 मिनट पर कॉस्मोड्रोम बाइकानूर से सोवियत यान "सोयूज" उड़ा । साढ़े सात घंटे पश्चात् कैनावेरल अतरीप से अमरीकी यान "अपोलो" उड़ा । अंतरिक्ष-यानों ने दो दिनों तक पृथक उड़ान की, और इसके पश्चात् कक्षक में उनका मिलन हुआ ।

आइए, अब हम आपको अंतरिक्ष-यात्रियों द्वारा मिलकर किये गये कुछ प्रयोगों के बारे में बतायें ।

अनेक द्रवित पदार्थ ठंडे होते समय क्रिस्टलीय अवस्था में रूपांतरित हो जाते हैं । शीतित होने की क्रिया के समय लाल-तप्त द्रवण के परमाणुओं की अव्यवस्थित गति धीमी तथा क्रमबद्ध होती जाती है । धीरे-धीरे प्रत्येक परमाणु अपना स्थान पाकर शीतित हो जाता है, और अपने असंख्य भाइयों के साथ मिलकर क्रिस्टलीय जाली की एक सुन्दर संरचना बनाता है ।

वे बल, जिनके प्रभाव से यह क्रिया सम्पन्न होती है, भिन्न-भिन्न होते हैं । इनमें एक मुख्य बल, गुरुत्वीय बल है । इस बल की अनुपस्थिति में क्रिस्टलीकरण किस प्रकार होगा ? ठीक है अगर पदार्थ सजातीय हो । लेकिन अनुमान कीजिए कि दो भिन्न धातुओं का ऐलॉय प्राप्त करना है, जिनमें से एक धातु दूसरी धातु की अपेक्षा हल्की है तथा अधिक निम्न ताप पर गलित होती है । अत:, गर्म करने पर प्रथम धातु का पहले ही प्रगलन हो जायेगा, तथा दूसरी धातु—जो अभी द्रव में रूपांतरित नहीं हुई—तल पर बैठ जायेगी । विभिन्न पदार्थों में इस प्रकार के असंख्य युगल हैं । और इनमें अनेक संयुक्त संरचनाएं कई अद्वितीय यांत्रिकीय, वैद्युत तथा अन्य आवश्यक गुणों का संचय कर सकती हैं ।

उदाहरण के रूप में आइए अर्धचालक को लें । इन्हें बनाते समय मुख्य

पदार्थ में अशुद्धि की कुछ मात्रा विशेषतः डाली जाती है—जैसे, जर्मेनियम में सिलीकेन "डाला" जाता है।

आपने दूरदर्शन यंत्र की स्क्रीन पर अंतरिक्ष के कार्यक्रम देखे होंगे। और, शायद, आपको वे लोग तथा वे वस्तुएं विचित्र लगी होंगी जो भार-हीन हैं। अब आप सरलता से इस बात का अनुमान लगा सकते हैं कि धातुविज्ञानी और तकनीकी विशेषज्ञ—नये पदार्थों के निर्माता—इन कार्य-क्रमों को किस भावना से देखते होंगे ! अब ऐसी सम्भावना उन्हें उपलब्ध है।

अमरीकी अंतरिक्ष-यान "अपोलो" एक छोटी-सी गर्म करने वाली भट्ठी कक्ष में ले गया था। सोवियत अंतरिक्ष-यात्री अपने साथ अंतरिक्ष में विभिन्न धातुओं के नमूनों को कैप्स्यूल में बन्द करके ले गये थे। प्रत्येक कैप्स्यूल में प्रत्येक अभिक्रिया को एक नमूने के तौर पर किया गया था, जो कारखानों में इंजीनियर बहुत ही अधिक कठिनाई से करते हैं, या जिसे पृथ्वी पर करना असम्भव है। एक कैप्स्यूल में सिलिकेन द्वारा समृद्ध जर्मेनियम था, तो दूसरे कैप्स्यूल में हल्का ऐलुमिनियम था जिसमें टंग्स्टन के भारी गोले भरे गये थे; तीसरे कैप्स्यूल में ऐलुमिनियम का पाउडर भरा गया था।

अन्य प्रयोगों की तुलना में अन्तिम प्रयोग उन लोगों के लिए अधिक रुचिकर था जो अपने कारखानों में बॉल-बेयरिंग बनाते हैं। ज्ञात है कि भारहीनता की स्थिति में किसी भी द्रव की बूंदें गोलाकार रूप धारण कर लेती हैं। अंतरिक्ष में गलित धातु की बूंदें भी आदर्श रूप से गोलाकार आकृति में रूपांतरित हो जानी चाहिए। इसी को देखने के लिए तृतीय प्रयोग किया गया था।

गलन भट्ठी पर प्रयोग करने का प्रस्ताव अमरीकी वैज्ञानिकों ने रखा था, तथा उनके सोवियत सहकर्मियों ने इस प्रयोग का कार्यक्रम तैयार

किया था। इस प्रयोग को दो कर्मीदलों ने किया—अमरीकी तथा सोवियत।

आपकी आज्ञानुसार ग्रहणः सौर किरीट को केवल सम्पूर्ण सूर्य ग्रहण के समय ही देखा जा सकता है। और, यह एक विरल स्थिति है। इतना कहना पर्याप्त होगा कि पूरी 20वीं शताब्दी में सौर किरीट को देखने का समय छः घंटों से कम है। सूर्य ग्रहण के समय पृथ्वी तथा चन्द्रमा की पारस्परिक स्थिति पूर्णतया निश्चित होनी आवश्यक है। और ऐसा अतरिक्ष नियमों के अनुसार केवल कभी-कभी होता है। अब जब 20 वर्षों से मानव, अंतरिक्ष में अपने हाथों से बनाये गये ग्रह तथा चन्द्रमा भेजता आ रहा है, तो क्या वह इनकी सहायता से मूर्य ग्रहण नही कर सकता ? हमारे समय में कृत्रिम सूर्य ग्रहण काफी वास्तविक बात है।

सूर्य ग्रहण उस अवस्था में होता है जब चन्द्रमा पृथ्वी तथा सूर्य के बीच आ जाता है और सूर्य के दृश्य भाग को ढक देता है। कृत्रिम चन्द्रमा इतने छोटे हैं कि अपने आकार द्वारा सूर्य को नही ढक सकते। लेकिन हम यह जानते ही हैं कि जब हम किसी दूरस्थ वस्तु के समीप जाते हैं, तो उसका आकार बड़ा होता जाता है। अर्थात्, इस समस्या का हल मिल गया है। अन्वेषक को कृत्रिम चन्द्रमा के समीप ले जाया जाये। यह कार्य एक अंतरिक्ष-यान कर सकता है।

इस प्रकार "सोयूज" तथा "अपोलो" की उड़ान के समय "कृत्रिम सूर्य ग्रहण" नामक प्रयोग किया गया।

संयुक्त उड़ान के चौथे दिन अंतरिक्ष यात्री लियोनोव तथा कूबासोव ने अपना कार्य, न जाने कितनी ही बार, बदला। आज वे खगोलविद बने हैं। सोवियत यान "सोयूज" ने पृथ्वी की भूमिका निभायी तथा अमरीकी यान "अपोलो" ने चन्द्रमा की। प्रयोग को आरम्भ करने से पूर्व दोनों यानों का सम्बन्ध इस प्रकार अभिविन्यस्त किया गया कि वे सूर्य की ओर एक

सरल रेखा बनाते हुए स्थित रहें। "अपोलो" यान सूर्य की ओर था। अब दोनों यान पृथक हुए, उनके इंजन चालू हुए, तथा वे परस्पर दूर हटने लगे। अमरीकी यान ने, इस प्रकार, "सोयूज" के अंतरिक्ष-यात्रियों के लिए सूर्य को ढक लिया।

"सोयूज" के उस भाग के केन्द्र में, जो "अपोलो" यान की तरफ था, एक गोल खिड़की थी—प्रदीपक। प्रयोग के समय इसमें एक फोटोकैमरा लगाया गया था। निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार यह कैमरा स्वतः—विभिन्न उद्‌भासन (एक्सपोजर) के साथ—सौर किरीट के चित्र लेता था।

जब यानो के बीच की दूरी 200 मी० से अधिक हो गयी, कृत्रिम चन्द्रमा—"अपोलो"—का आकार सौर डिस्क की अपेक्षा दुगना हो गया, तो यानों ने पुनर्मिलन के लिए परस्पर समीप आना आरम्भ कर दिया। इस प्रकार मानव द्वारा किये गये सर्वप्रथम ग्रहण की अवधि पाँच मिनट थी।

यह सब कितना सरल है ? स्मरण रहे कि हम यहाँ अंतरिक्ष-यानों की संयुक्त उड़ान की चर्चा कर रहे हैं जो हमारे ग्रह के ऊपर 8 कि०मी० प्रति सेकेण्ड की चाल से उड़ रहे थे। एक अन्य प्रयोग में "सोयूज" तथा "अपोलो" न केवल परस्पर पृथक होकर पुनः मिले, बल्कि दोनों ने मिल कर अंतरिक्ष में उड़ान के कला-कौशल कार्य किये।

पृथ्वी की छत पर : : आकाश, जहाँ पृथ्वी के अनेक कृत्रिम यान उड़ान भरते हैं, वह आकाश नहीं जो हमारे ग्रह, सूर्य और तारों को घेरे हुए है। इन ऊंचाइयों पर अभी पृथ्वी की विद्यमानता अनुभव की जाती है; वहाँ वायुमंडल है। निस्संदेह, यह वह घनी वायु भी नहीं है, जो विमानों को सहारा देती है। पृथ्वी की सतह से 200-250 कि०मी० की ऊंचाई पर स्थित कक्षाओं के वायुमंडल में केवल विरल परमाणु तथा अणु मिलते हैं। ये फिर भी कृत्रिम चन्द्रमा की गति को रोकने में सफल हो जाते है; ये

ही सर्वप्रथम सौर एवं अंतरिक्ष विकिरण को रोकते हैं, जो कि सब जीवों के अस्तित्व के लिए प्राणघाती है। इसी कारण पृथ्वी के ऊपरी वायुमंडल की संरचना का ज्ञान अति आवश्यक है। विभिन्न कक्षीय स्टेशन व स्वचलित उपग्रह इसका लगातार अध्ययन करते रहते हैं। "सोयूज" व "अपोलो" के यात्रियों ने भी इस कार्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी।

हमारे ग्रह के बाहरी आवरण में स्थित सभी कणों में ऑक्सीजन और नाइट्रोजन के परमाणु सर्वाधिक कठिनाई से पकड़ में आते हैं। बात यह है कि उन्हें अकेलापन अच्छा नहीं लगता। वे अपने समान परमाणुओं के साथ शीघ्रता से मिल जाते हैं—लीजिए, एक और अणु तैयार हो जाता है। इन तत्वों के स्वतंत्र परमाणुओं की संख्या चूंकि अज्ञात है, इसलिए वायुमंडल के बाहरी स्तरों की भौतिकी सम्बंधी कुछ प्रश्नों का उत्तर देना कठिन है।

अंतरिक्ष-यान "सोयूज" तथा "अपोलो" ने उड़ान की ऊंचाई पर इन अदृश्य कणों की सान्द्रता को मापा। इसके वास्ते उन्होंने अदृश्य प्रकाश प्रयुक्त किया। अमरीकी अंतरिक्ष-यान पर पराबैंगनी किरणों का एक स्रोत लगाया गया था और सोवियत अंतरिक्ष-यान पर परावर्तक। प्रयोग के समय ये दोनों यान एक-दूसरे के ऊपर उड़ान भर रहे थे : "सोयूज" यान ने कक्षा के साथ-साथ उड़ान भरी, और "अपोलो" यान उसके ऊपर ऐसे उड़ रहा था, जैसे कि उसके "सिर पर खड़ा हुआ है"। इस समय उन यानों के बीच की दूरी सैकड़ों मीटरों से लेकर किलोमीटरों तक थी।

"अपोलो" पर स्थित स्रोत से आने वाली किरणें "सोयूज" यान पर स्थित विशेष दर्पणों द्वारा परावर्तित होकर अमरीकी यान पर पहुँचती थीं। प्रत्येक बार ये किरणें इन यानों के बीच की दूरी दो बार तय करती थीं और अमरीकी यान पर वापिस लौटने के पश्चात् उनके मार्ग में टकराने वाले परमाणुओं का बिम्ब बना देती थीं।

अभी हमने बताया था कि वायुमंडल पृथ्वी पर जीवन की रक्षा करता है। लेकिन हम वायु की मोटी परत द्वारा ढके होने पर भी अंतरिक्ष पर निर्भर करते हैं। यह प्रभाव विभिन्न प्रकार से अनुभव होता है और सर्वप्रथम जैव क्रियाओं तथा परिघटनाओं की प्रकृति के समयानुसार कम्पनों में अनुभव होता है।

अंतरिक्ष-यात्रियों ने वैज्ञानिकों को यह समझने में सहायता दी।

जीवन का सामजस्य: वसन्त-ऋतु। नये पौधों ने अपनी हरी-हरी पंखुड़ियाँ खोलीं। खेतों में बोये गये चने के पौधे भी ऊपर उभरे। अभी प्रकाश है, इसीलिए ये ऊपर की ओर, सूर्य की ओर, आमुख हैं। लेकिन रात्रि के समय ये नीचे की ओर झुक जायेंगे—मानो दिन में थक गये हों। पृथ्वी के घूर्णन के अनुरूप यह दैनिक क्रम चालू रहता है।

आइए, हम एक पौधे को मिट्टी समेत उखाड़कर एक अंधेरे डिब्बे में रखें। पौधे की आदत अपरिवर्तित बनी रहेगी। पूर्ण अंधकार होने पर भी प्रतिदिन ये पत्तियां दिन में ऊपर की ओर उठ आयेंगी, और रात्रि के समय नीचे झुक जायेंगी। यह एक ऐसा स्पष्ट उदाहरण है, जिसे दिवसीय लयबद्धता अथवा सामंजस्य कहते हैं।

मच्छी-घर में रखे गये मोलस्क (चूर्णप्रावार कहे जाने वाले अति सूक्ष्म जीव), ज्वार-भाटे की नियमितता को अधिक समय तक स्मरण नहीं रख सकते। लेकिन निश्चित समय पर वे अपने द्वार खोलते हैं, तथा निश्चित समय पर बन्द करते हैं। यह चन्द्र सामंजस्य कहलाता है। यह परिघटना समुद्र के समीप स्थित वनस्पति व जंतुओं के जीवन में देखी गयी है। इसके अलावा, अन्य जीव विज्ञानीय सामंजस्य भी प्रति वर्ष, प्रति मास तथा प्रत्येक ऋतु में देखने में आते हैं। पृथ्वी पर सभी जन्तुओं, वनस्पति या जीवों पर ये लागू होते हैं, और समय का अभिविन्यास इसी प्रकार करते हैं।

लेकिन अंतरिक्ष में क्या होता है ? क्या भारहीनता, गुरुत्वीय बल, अंतरिक्ष किरणें—जैविक घड़ी के गुप्त यंत्रविन्यास को गड़बड़ नहीं कर देंगे ? क्या उसकी गति परिवर्तित नहीं कर देंगे ? इन प्रश्नों का उत्तर अरकवक से प्राप्त होना चाहिए था—जो ऐसा सूक्ष्मजीव है जिसमें जीवाणु तथा कवक दोनों के गुण विद्यमान होते हैं। यह सामान्यतः मृदा में बढ़ता है; लेकिन अब इसका विकास स्थान "सोयूज" और "अपोलो" बन गया। यह एक साधारण कवक है और प्रयोग के लिए इसका सरलतापूर्वक उपयोग किया जा सकता है। इसका कवकजाल, ठोस पोषक माध्यम में भली प्रकार प्रत्यक्ष रिंग बनाता है। 24 घंटे में यह एक रिंग बनाता है। दिनों पश्चात् गोल समतलीय प्याले में, जिसमें कवक उठ रहा है, ऐसी तस्वीर दिखायी देगी जो आपको वृक्ष के तने को काटने पर देखायी देती है। इस कवक में एक अन्य गुण भी विद्यमान है, जिसके उसे अंतरिक्ष में भेजा गया। यह प्रकाश तथा अंधकार के सामंजस्य भली प्रकार सहन करता है, उसे स्मरण रखता है, तथा किसी प्रकार अवरोध की अनुपस्थिति में काफी अधिक समय तक जीवित रहता है उस सामंजस्य का पालन करता है।

वार्षिक रिंग, वैज्ञानिकों को वृक्षों की आयु निर्धारित करने में ही नहीं देते, बल्कि उनके अतीत काल का अध्ययन करने में भी सहायक होते हैं। मिसाल के लिए, गर्म, शुष्क वर्षों के दौरान पौधों का वकास धीमा हो जाता है। सो, इन वर्षों में बनने वाले रिंग महीन दिखायी हैं। ऐसा ही कवक के साथ होता है। चारों ओर का वातावरण इसके सामंजस्य तथा विकास की गति को प्रभावित करता है।

उड़ान के समय अंतरिक्ष-यात्रियों ने नियमितता से जीवाणु-समूह अपने-अपने प्यालों के चित्र लिये, तथा अंतरिक्ष मिलन के समय इनका विनिमय किया। चित्रों की सहायता से न केवल भार- की स्थिति में कवक के विकास का अध्ययन किया गया, बल्कि

कवकजाल में गिरने वाले अंतरिक्ष कणों को भी प्रत्यक्ष रूप से देखा गया। अतः, इस प्रयोग द्वारा यह देखा गया कि अंतरिक्ष किरणें सजीव जीवाणुओं पर कैसा प्रभाव डालती हैं। इस ज्ञान के बिना उन लोगों की रक्षा के उपाय को सोच पाना कठिन हो जाता जो भविष्य में अन्तरग्रहीय दीर्घ यात्रा पर रवाना होंगे।

दो अलग-अलग देशों के अंतरिक्ष-यानों की सर्वप्रथम सह-उड़ान के इस वर्णन का अन्त मैं सोवियत अंतरिक्ष-यात्री सोवियत संघ के वीर अलेक्सेई लियोनोव के शब्दों से करना चाहूंगा : "हमें आशा करनी चाहिए कि इस उड़ान के लिए सोवियत तथा अमरीकी विशेषज्ञों द्वारा निर्मित तकनीकी आधार मित्रता का वह वातावरण है, जो "सोयूज" तथा "अपोलो" कार्यक्रम के सभी भाग लेने वालों के बीच सम्बन्धों की लाक्षणिक विशेषता है, तथा यह वातावरण भावी अन्तर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष प्रयोगों का आधार बनेगा व पृथ्वी पर शान्ति को दृढ़ करने में सहायक सिद्ध होगा।"

भारत में अंतरिक्ष विज्ञान का विकास

भारतवर्ष विकासशील देशों में प्रथम देश है, जहां अन्तरिक्ष का अध्ययन किया जा रहा है। यह कार्य अन्तरिक्ष युग के आरम्भ होने के शीघ्र ही बाद शुरू हो गया। सन् 1957 में सोवियत संघ ने जब पृथ्वी का प्रथम कृत्रिम स्पूतनिक छोड़ा था, तब भारतवर्ष के उत्तर में नैनीताल वेधशाला में इस स्पूतनिक का अध्ययन करने के लिए एक स्टेशन बनाया गया था। इसके 5 वर्ष बाद, अन्तरिक्ष के अनुसंधान के लिए एक राष्ट्रीय समिति की स्थापना हुई। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान के जन्मदाता डॉक्टर विक्रम साराभाई ने कहा था : "कई लोग विकासशील देशों में अंतरिक्ष अनुसंधान की आवश्यकता को व्यर्थ समझ रहे हैं, पर हमारा लक्ष्य हमें मालूम है...हमें पूर्ण विश्वास है कि हमें किसी भी देश

से मानव जाति व समाज के हित में तकनीकी उन्नति में पीछे नहीं रहना चाहिए ।"

सन 1962 में विशेषज्ञों के एक दल ने रॉकेट छोड़ने के लिए स्थान चुना । यह स्थान त्रिवेन्द्रम के उत्तर में 10 कि०मी० दूर थूम्बा गांव था । आज थूम्बा में आधुनिक यंत्रों से सज्जित रॉकेट—अंतरिक्ष अनुसंधान केन्द्र है, जो दसियों हैक्टेयर इलाके में फैला हआ है ।

पिछले 20 वर्षों में भारत ने अंतरिक्ष अनुसंधान में बहुत उन्नति की है । प्रथम छोटे-छोटे रॉकेट, जो केवल कुछ किलोमीटर तक ही यात्रा कर पाते थे, अब चार हिस्सों वाले 17 टन भार वाले रॉकेट में बदल गये हैं, जो भारी ईंधन SLV-3 से चलता है । इस रॉकेट द्वारा 1980 व 1981 में भारत के दो अंतरिक्ष-यान "रोहिणी" छोड़े गये थे । आज भारत के वैज्ञानिक एवं इंजीनियर इससे भी बड़े व शक्तिशाली रॉकेट बनाने का प्रयास कर रहे हैं, जिनसे अंतरिक्ष में और भी भारी यानों को भेजा जा सके ।

भारत का प्रथम कृत्रिम उपग्रह "आर्यभट्ट" सन् 1975 में सोवियत रॉकेट द्वारा सोवियत संघ के कॉस्मोड्रोम से छोड़ा गया था । इस सर्वप्रथम यान का यह नाम प्रधान मंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी के सुझाव पर पाँचवीं शताब्दी के महान खगोलशास्त्री व गणितज्ञ की स्मृति में रखा गया था । इस उपग्रह पर लगे वैज्ञानिक यंत्रों ने खगोल विज्ञान की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण सूचनाएं दीं ।

"आर्यभट्ट" के बाद "भास्कर-1" व "भास्कर-2" नामक कृत्रिम उपग्रह इसी प्रकार छोड़े गये थे । इन उपग्रहों ने देश के विभिन्न भागों के ऊपर उड़ते हुए बहुत सी संस्थाओं को आवश्यकतानुसार सूचनाएं दीं । भारत की नदियों में प्राय: बाढ़ आती है जिसका कारण मानसून है । "भास्कर" पर इस प्रकार के टेलीविजन कैमरे व दूसरे संयंत्र लगे थे जिनसे इस प्रकार के संकटों की पूर्वसूचना मिल सकती थी, तथा मौसम की

भविष्यवाणी के लिए आवश्यक जानकारी भी मिल पाती थी। अन्तरिक्ष सें मिले चित्रों (अकेले "भास्कर-1" ने ही 1000 के लगभग चित्र भेजे थे) की सहायता से भारतीय भूवैज्ञानिकों को उपयोगी धातुओं को खोजने में, कृषि संस्थानों को फसल की भविष्यवाणी करने मे तथा वन विभाग वालों को वनों की सुरक्षा करने में काफी मदद मिली।

भारत में आज सैकड़ों युवा वैज्ञानिक, इंजीनियर कृत्रिम उपग्रहों का निर्माण करने मे, उनकी उड़ान की व्यवस्था करने में तथा उनसे आवश्यक सूचनाएं प्राप्त करने के प्रयासों में दिन-रात संलग्न हैं।

सोवियत व भारतीय वैज्ञानिकों का अंतरिक्ष खोज में सहयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। दोनों देशों के वैज्ञानिक संयुक्त प्रयासों से मिले परिणामों के सम्बन्ध में समय-समय पर विचारों का आदान-प्रदान करते रहते हैं। इस प्रकार की भेटें दोनों देशों में बारी-बारी से होती हैं।

संचार साधनों का विकास भारत के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। अंतरिक्ष संचार केवल सुविधाजनक ही नहीं, यह अन्य संचार साधनों से काफी सस्ता पड़ता है जो कि विकसित हो रहे देश के लिए बहुत महत्व-पूर्ण है। सन् 1983 से दिल्ली दूरदर्शन ने देश के विभिन्न नगरों को कृत्रिम उपग्रह "रादुगा" पर लगे रिपीटर द्वारा अपना प्रोग्राम दिखाना शुरू कर दिया है। यह उपग्रह भू-कक्षक में स्थित है तथा पृथ्वी के सम-कालिक घूम रहा है। इसी वर्ष अमरीकी अंतरिक्ष-यान "स्पेस शटल" छोड़ा गया है जिसकी सहायता से देश के विभिन्न भागों में रेडियो-टेलीफोन स्थापित करने में व गावों में सामूहिक रूप से टेलीविजन दिखाने में सहायता मिल रही है।

देश की आर्थिक उन्नति में अंतरिक्ष अनुसंधान के महत्व को समझते हुए, भारत अन्य देशों के साथ इस दिशा में हुई प्रगति की जानकारी का परस्पर आदान-प्रदान कर रहा है। भारत अंतरिक्ष समिति, जिसका मुख्यालय बंगलौर में है, के अध्यक्ष प्रोफेसर सतीश धवन ने संयुक्त राष्ट्र

संघ के "अंतरिक्ष का शांति व मानव हित में प्रयोग संबंधी सम्मेलन" में वियेना में कहा कि अंतरिक्ष तकनीक विकासशील देशों की उन्नति में अत्यन्त तीव्र उत्प्रेरक की भूमिका निभा सकती है। इसके साथ ही, उन्होंने यह भी कहा कि भारत इस दिशा में अपनी उपलब्धियों व सफलताओं को दूसरे देशों के साथ बांटने को तैयार है—ऐसी उपलब्धियाँ, जैसी कभी सोवियत संघ ने भारत को प्रदान की थीं।

भारत व सोवियत संघ का अंतरिक्ष अनुसंधान में सहयोग अपनी चरम सीमा पर तब पहुँचा जब दोनों देशों के अंतरिक्ष-यात्रियों की संयुक्त उड़ान की तैयारियां आरम्भ हो गयीं। इसका प्रस्ताव स्वर्गीय राष्ट्रपति लियोनिद ब्रेझनेव ने अपनी भारत यात्रा के दौरान रखा था। प्रधान मंत्री श्रीमती गांधी ने इस प्रस्ताव को बड़े हर्ष व आभार के साथ स्वीकार किया था। संसद सदस्यों के सामने भाषण देते हुए उन्होने कहा था, "वैज्ञानिक उन्नति में भारत पीछे नहीं रहना चाहिए। इसी कारण हम सोवियत संघ के आमन्त्रण का स्वागत करते हैं। इस अंतरिक्ष यात्रा के परिणामस्वरूप हमारे वैज्ञानिकों का ज्ञान बढ़ेगा जिससे अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओं में उपयोगी कदम उठाये जा सकेंगे।"

सितंबर 1982 में श्रीमती गांधी ने सोवियत संघ के अपने दौरे के समय घोषणा की कि भारतीय वायुसेना के दो पायलट, जिनको देश के 150 सर्वोत्तम पायलटों में से चुना गया है, सोवियत संघ के "ज्व्योज्दनी गरादोक" में स्थित यूरी गगारिन अंतरिक्ष-यात्री प्रशिक्षालय केन्द्र में पहुंच चुके हैं तथा वहाँ उनका संयुक्त उड़ान के लिए प्रशिक्षण आरम्भ हो गया है।

भारतीय व सोवियत पत्रकारों से वार्तालाप के दौरान स्क्वैड्रन लीडर राकेश शर्मा ने कहा, "अगर मेरा चुनाव न होता तो मुझे अत्यधिक खेद होता।" उन्होंने तथा उनके साथी विंग कमांडर रवीश मल्होत्रा ने बड़े शौक से पत्रकारों के प्रश्नों के उत्तर दिये थे।

अतरिक्ष यात्रा के दोनों प्रत्याशियों का जन्म पंजाब में हुआ था, लेकिन अलग-अलग शहरों में । 45 वर्षीय राकेश शर्मा के माता-पिता पटियाला में रहते थे व रवीश मल्होत्रा का जन्म अपने साथी से 6 वर्ष पूर्व लाहौर में हुआ था । शर्मा के माता-पिता अब हैदराबाद में रहते है तथा मल्होत्रा की माता कलकत्ता मे । दोनों अंतरिक्ष-यात्रियों ने राष्ट्रीय अकादमी खड़गवासला में प्रशिक्षण पाया है । इससे पूर्व शर्मा ने हैदराबाद मे निजाम कालेज से तथा मल्होत्रा ने कलकत्ता के एक कालेज से उच्च शिक्षा प्राप्त की थी। ।

मल्होत्रा व शर्मा दोनों ही परीक्षण चालक रहे हैं । वे विभिन्न प्रकार के वायुयानों को उड़ा चुके हैं । मल्होत्रा ने 3400 घंटे व शर्मा ने 1600 घंटे उड़ान की है । इस प्रकार, वायुयान चालन में दोनों के पास पर्याप्त अनुभव है ।

भारतीय अंतरिक्ष-यात्रियों के प्रशिक्षण को दो चरणों में बांटा गया। सर्वप्रथम उन्होंने रूसी भाषा सीखी और अंतरिक्ष में यान संचालन के आधारभूत सिद्धांतों का अध्ययन किया । उन्होंने अंतरिक्ष चिकित्सा व जीव विज्ञान की जानकारी भी प्राप्त की। इसके साथ-साथ उन्होंने वायुयान प्रयोगशालाओं में प्रशिक्षण उड़ानों में भाग लिया जहाँ उन्हें भारहीनता की अवस्था में कार्य करने का अभ्यास कराया गया । उन्होने विशेष प्रशिक्षण यंत्रों पर कार्य किये तथा व्यायाम का अभ्यास करके अपने को चुस्त व शक्तिशाली बनाया ।

भारत में थोड़े दिन अवकाश मनाने के बाद उनके प्रशिक्षण का दूसरा चरण आरम्भ हुआ। दोनों देशों के सभी प्रत्याशी अंतरिक्ष-यात्रियों को साथ-साथ प्रशिक्षण दिया गया। उन्हें अंतरिक्ष-यान "सोयूज-T" के बारे में विशेष ज्ञान दिया गया। उन्हें उड़ान के कार्यक्रम व यात्रा के समय वैज्ञानिक परीक्षण करने की विधियों से परिचित कराया गया । इसके साथ-साथ उन्होंने अपने सह-यात्रियों को तुरन्त व भली भांति समझने का अभ्यास भी किया ।

भारतीय चालकों को वैज्ञानिक स्टेशन के कक्षक पर इसके कर्मीदल के साथ अंतरिक्ष में विभिन्न प्रयोगों का, प्राकृतिक साधनों की खोज करने का तथा अंतरिक्ष चिकित्सा व जीव विज्ञान के ज्ञान का अभ्यास भी कराया गया।

जैसा कि हम पहले बता चुके हैं अंतरिक्ष उड़ान की अवस्था, जिसमें सौर ऊर्जा व निर्वात का समागम होता है, अंतरिक्ष में विभिन्न प्रौद्योगिक प्रक्रियाओं में प्रयुक्त होती है। इसका नाम अंतरिक्ष द्रव्यात्मकता रखा गया है। अंतरिक्ष में प्रौद्योगिकी का पथ सोवियत वैज्ञानिको व अंतरिक्ष-यात्रियों ने खोला है। सन् 1969 में "सोयूज-6" के कर्मीदल ने सर्वप्रथम कक्षक में वेल्डिग कार्य किया था। परिणामस्वरूप प्रौद्योगिक परीक्षण मुख्यत: कक्षक स्टेशनों पर किये जाने लगे हैं। सोवियत-भारतीय अन्तरिक्ष-यात्रियों को भी यह कार्य करना था।

यह कहना अतिशयोक्ति होगी कि अंतरिक्ष-यात्री सब विषयों का ज्ञाता होता है। तो भी, अन्य कोई व्यवसाय ऐसा नहीं ज़िसमें एक-दूसरे से भिन्न इतने सारे विषयों का ज्ञान आवश्यक हो। सोवियत-भारतीय कार्मिक टोली को भी बहुत सारे विषयों का ज्ञान प्राप्त करना पड़ा, यहाँ तक कि उन्हें डॉक्टर और भूविज्ञानी का भी कार्य समझना पड़ा।

दीर्घ अंतरिक्ष उड़ानों ने अंतरिक्ष चिकित्सा में महत्वपूर्ण योगदान किया है; पर अभी भी बहुत सारी समस्याओं का हल होना बाकी है इसी कारण प्रत्येक नये कदम की, चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो, अपनी ही महत्ता व उपयोग है। भारतीय डॉक्टरों व इंजीनियरों ने कक्षक में हृदय गति का अध्ययन करने के लिए एक बिल्कुल नये संयंत्र का निर्माण किया। उन्होंने उड़ान के समय मांस-पेशियों की थकान तथा प्रघाण तंत्र के दोष का निवारण करने के लिए योग पद्धति पर आधारित व्यायाम का परामर्श दिया। संयुक्त उड़ान के प्रशिक्षण में विशेष ध्यान भारत के

प्राकृतिक स्रोतों में खनिज पदार्थों की प्राप्ति के अध्ययन पर दिया गया। अंतरिक्ष-यात्री देश के क्षेत्र की फोटोग्राफी करने व इसके प्रेक्षण के कार्य को भली भांति समझ गये। प्रत्येक फोटो का वैज्ञानिक महत्व उस पर आयी चीजों पर निर्भर करता है। फोटो जितनी ज्यादा चीजों को चित्रित कर पायेंगी, उसका इतना ही अधिक महत्व व लाभ होगा। पर सदा ऐसा नहीं होता।

वन-विभाग के कर्मचारी की इच्छा होगी कि चित्र में प्रत्येक वृक्ष अलग-अलग दिखायी दे। पर यह असंभव है। हाँ, अंतरिक्ष से खीचे चित्रों में वह बात दिखायी देती है, जो किसी दूसरे स्थान से नहीं दिखायी देगी। एक छोटे-से चित्र में (जिसमें यूरोप का लगभग सम्पूर्ण भाग या भारत आ गया है) अनुभवी आंखें विश्व के इस भाग में भूमि की बनावट को अवश्य समझ जायेंगी। चित्र में पृथ्वी की छोटी-छोटी चीजों की अनुपस्थिति इस कार्य में सहायक ही होती है।

अंतरिक्ष ऊंचाई, पृथ्वी पर अलग-अलग एक-दूसरे से असंबंधित क्षेत्रों की बनावट को संयुक्त कर एक नये रूप में प्रस्तुत करती है। इसी कारण अंतरिक्ष से खींचे चित्रों पर विश्व के विभिन्न क्षेत्रों की परतों को देखा जा सकता है। जितनी अधिक ऊंचाई से अंतरिक्ष-यात्री अथवा स्वचलित कृत्रिम उपग्रह पृथ्वी को देखेगा, उतनी ही अधिक सूक्ष्मता से वह पृथ्वी को देख सकेगा।

इस तथ्य का कारण क्या है—यह विज्ञान अभी नहीं बता पाया है। पर भूवैज्ञानिकों को इससे अत्यधिक सहायता मिली है। हाँ, इसका मतलब यह नहीं कि अंतरिक्ष से जमीन के अंदर घुसकर देखा जा सकता है कि कहाँ उपयोगी खनिज पदार्थ छिपे हैं। यहाँ हमारा अभिप्राय इस बात से है कि अंतरिक्ष से उन भौगोलिक स्थानों का अध्ययन सरल व संभव है, जहाँ उपयोगी खनिज पदार्थ हो सकते हैं। उदाहरण के तौर पर, भूमि की पर्पटी में गहराई पर हुए टुकड़े। अंतरिक्ष से खींचा चित्र भूमि की

पर्पटी की संरचना को भली भांति समझने में बहुत सहायक सिद्ध होता है। इससे उसके अन्दर छिपे उपयोगी खनिजों को ढूंढने में आसानी होती है।

"साल्यूत" स्टेशनों पर पृथ्वी के अध्ययन के लिए बहुत सारे कैमरे लगे होते हैं। इनमें से एक MKF-6M कैमरा है, जो सोवियत व जर्मन जनवादी गणतंत्र के विशेषज्ञों की अभिकल्पना के आधार पर जर्मन जनवादी गणतंत्र की "Karl Zeiss" फैक्टरी में बनाया गया है। यह बात जरूर है कि इस कैमरे को 200 कि०ग्रा० भार का संयंत्र कहना पूर्णतया सत्य नहीं होगा। सत्य तो यह है कि इसके इतने अधिक भार का कारण इसमें 6 लेन्सों की व्यवस्था, इसकी जटिल संरचना व अत्यधिक शक्तिशाली इलेक्ट्रॉनिक सिस्टम की मौजूदगी है।

दूसरा संयंत्र है—सोवियत मानचित्रकारी कैमरा KATE-140। इसका प्रत्येक चित्र पृथ्वी के कई सौ कि०मी० क्षेत्रफल को अंकित कर लेता है, जबकि यह पृथ्वी की 10 मीटर तक की वस्तुओं को अलग-अलग भी खींच सकता है।

निस्संदेह, अंतरिक्ष यात्रा के दौरान भारतीय क्षेत्र के जो नये चित्र खींचे गये, वे प्रथम नहीं कहे जा सकेंगे। यहाँ "भास्करों" को ही लें, जिन्होंने बहुत समय तक भारत के प्राकृतिक स्रोतों की जानकारी दी। पर वे चित्र स्वचलित यान से लिये गये थे, जबकि "साल्यूत" पर कैमरे का नियंत्रण स्वयं अंतरिक्ष-यात्री का रहा। इन दोनों बातों में महान अन्तर है। फोटो खींचने से पहले यात्री वस्तु का भली भाँति व पर्याप्त समय तक अध्ययन कर सकता है तथा सबसे रोचक, महत्वपूर्ण व उपयोगी दृश्यों का चित्र खींच सकता है। वह निश्चित कर सकता है कि किस कैमरे का प्रयोग किया जाये, कौन-सी फिल्म लगायी जाये, आदि, जबकि स्वचलित कैमरा ऐसा नहीं कर पायेगा। भारत के भूवैज्ञानिकों ने अपने अंतरिक्ष-यात्री की यात्रा के कार्यक्रम को बनाते समय इस बात का ध्यान रखा।

मानवचालित अंतरिक्ष-यानों द्वारा अंतरिक्ष अन्वेषण निस्संदेह भारतीय अंतरिक्ष विज्ञान की उन्नति में एक नया तथा अत्यधिक महत्व-पूर्ण कदम है। यह एक बार फिर इस बात की पुष्टि करता है कि यह महान देश वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रगति में किसी से पीछे नहीं है।

रोबोट : कक्षक में

मौसम ज्ञात करने के लिए स्पुतनिक : एक सोवियत जहाज अफ्रीका के दक्षिण से मुड़ कर मोजेम्बीक खाड़ी की ओर जा रहा था। जहाज के रेडियो प्रचालक को एक रेडियोग्राम मिला। मौसम वाले विशेषज्ञों ने सुदूर मास्को में पूर्वानुमान कर चेतावनी दी: जहाज की ओर विपरीत दिशा से एक शक्तिशाली उष्ण-कटिबंधीय चक्रवात आ रहा है। उन्होंने कहा कि इस चक्रवात की चपेट से बचने के लिए जहाज को मेडागास्कर के पूर्वी भाग से गुजरना चाहिए। लेकिन स्थानीय मौसम सम्बन्धी सूचनाओं के अनुसार इस द्वीप पर पूर्व दिशा से एक तूफान आने की आशंका थी।

जहाज ने पूर्व की ओर यात्रा आरम्भ की। कुछ दिनों पश्चात् मेडागास्कर के समीप हल्के-से तूफान को झेलते हुए बिना किसी बड़ी कठिनाई के जहाज ने अपनी यात्रा सफलतापूर्वक जारी रखी। और इस समय अफ्रीका के तटों पर एक विराट उष्ण-कटिबंधीय चक्रवात छाया हुआ था।

मास्को में बैठे विशेषज्ञों को स्थानीय मौसम वैज्ञानिकों की तुलना में आधक यथातथ्य सूचना किस प्रकार प्राप्त हुई ? इसमें इनकी सहायता पृथ्वी के कृत्रिम स्पुतनिक "कॉस्मोस-184" ने की। इस स्पुतनिक द्वारा मास्को प्रेषित किये गये हिन्द महासागर के चित्रों से स्पष्ट था कि स्थानीय तूफान की अपेक्षा चक्रवात अधिक हानिकारक होगा।

कृत्रिम स्पुतनिकों की मदद से मानव प्रथम बार अपने ग्रह को—उससे हटकर—देख सका। पहला सोवियत मौसमविज्ञानी स्पुतनिक "कॉस्मोस-122" 25 जून 1966 को अंतरिक्ष में भेजा गया था। एक वर्ष के अन्दर ही अंतरिक्षीय मौसमविज्ञानी विन्यास "मिट्योर", जो तीन स्पुतनिकों से बना था, कक्षक में भेजा गया। तब से अब तक यह विन्यास नियमित रूप से कार्य कर रहा है और इसमें नये-नये स्पुतनिक "मिट्योर" शामिल हो जाते हैं। ये स्पुतनिक पृथ्वी की सतह से लगभग 600 कि० मी० की दूरी पर गोलाकार कक्षकों में घूमते हैं और मौसम-वैज्ञानिकों को मौसम के बारे में सही पूर्वानुमान करने में मदद देते हैं।

लगभग डेढ़ घंटे में उक्त अंतरिक्षीय मौसम-वैज्ञानिक पृथ्वी की एक परिक्रमा पूरी करता है। सोवियत मौसमविज्ञानी स्पुतनिकों के कक्षों के समतल तथा भूमध्य रेखा के समतल के बीच के कोण 90° के लगभग हैं। अतएव, स्पुतनिक पृथ्वी के चारों ओर परिक्रमा करते समय हर बार उसके ध्रुवीय भागों के ऊपर से उड़ते हैं। पृथ्वी अपने अक्ष के चारों ओर चूंकि पश्चिम से पूर्व की ओर घूमती है, इसलिए प्रत्येक चक्कर, पहले के चक्कर की अपेक्षा, ग्रह के अधिक पश्चिमी क्षेत्रों के ऊपर से गुज़रता है।

अंतरिक्षीय मौसमविज्ञान स्टेशन किस प्रकार कार्य करता है: चित्र में "मिट्योर" विन्यास का स्पुतनिक दिखाया गया है। इसके उपकरणों को अधिक से अधिक समय तक कार्य करना चाहिए। इसीलिए डिजाइनरों ने निरंतर ऊर्जा प्रदाय के लिए विशेष सौर बैटरियां बनायीं। इनका स्वतः अभिविन्यास इनकी स्थिति से सौर किरणों के प्रति लम्ब बनाये रखता था। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, इसी स्थिति में धारा अधिकतम होती है।

स्वयं स्पुतनिक दो बेलनाकार विभागों से बना होता है। छोटे विभाग में मौसमविज्ञानी उपकरण लगे होते हैं, तथा बड़े विभाग में कार्यकारी

एवं सहायक यंत्र होते हैं। उड़ान में स्पुतनिक अभिविन्यस्त होता है। इसका मुख्य अक्ष हमेशा पृथ्वी के केन्द्र की ओर आमुख होता है। यदि अंतरिक्ष-यानों का अभिविन्यास तथा स्थिरीकरण मुख्यत: अभिक्रिया इंजनों से होता है, तो अंतरिक्ष में मौसमविज्ञानी स्पुतनिकों को निश्चित स्थिति में लाने तथा रखने का काम अनेक घूमने वाले गतिपालक चक्रों का सहायता से सम्पन्न होता है। इन गतिपालक चक्रों की चाल में परिवर्तन के परिणामस्वरूप, अंतरिक्ष-यान में नियंत्रण बल उत्पन्न होते हैं। सौर बैटरी की ऊर्जा से गतिपालक चक्र गतिमय हो जाते हैं: प्रत्येक गति-पालक चक्र वैद्युत इंजन का एक विशाल रोटर (घूर्णक) होता है। अतएव, स्पुतनिकों का अभिविन्यास एवं स्थिरीकरण कार्य दीर्घ समय तक चलता रहता है, क्योंकि अंतरिक्ष में सौर ऊर्जा का कोई अंत नही है।

स्पुतनिक "प्रेक्षक" दो दूरदर्शन कैमरों की सहायता से पृथ्वी के प्रकाशमान भाग की तस्वीर खीचता रहता है। इनके नीचे की ओर जमाये गये लेंस परस्पर एक कोण बनाते हैं। इस प्रकार दृश्य क्षेत्र दुगुना हो जाता है। निरंतर कार्य करते हुए दूरदर्शन कैमरे पृथ्वी की सतह या उसके अभ्र आवरण क्षेत्र के 1000 कि० मी० या अधिक चौड़ाई वाले क्षेत्र की तस्वीर लेते रहते हैं। यह तस्वीर चुम्बकीय रील पर अंकित हो जाती है, और सूचना ग्रहण बिन्दुओं पर से स्पुतनिक के गुजरने के समय पृथ्वी पर प्रेषित हो जाती है। पृथ्वी के छाया भाग से स्पुतनिक के बाहर निकलते ही, सूर्य की पहली किरण स्वत: दूरदर्शन को चालू कर देती है।

रात्रि को ग्रह के भाग का अध्ययन भी अंतरिक्ष मौसमविज्ञानी निरंतर करता रहता है। इस समय दूरदर्शन कैमरे के स्थान पर अवरक्त उपकरण प्रयुक्त होते हैं। अवरक्त कैमरे की "आंख", घड़ी के लोलक (पेंडुलम) की तरह, स्पुतनिक की उड़ान के समतल पर लम्ब बनाते हुए चित्र उतारती रहती है—अर्थात्, दूरदर्शन कैमरों द्वारा छायांकन की भांति ही पृथ्वी के समान विस्तार वाले क्षेत्र की तस्वीर उतारी जाती है।

अवरक्त ग्राही, पृथ्वी की सतह के तापीय उत्सर्जन को मापते रहते हैं। पृथ्वी की सतह की तुलना में अभ्र अधिक शीतित होते हैं, इसलिए अभ्रों की संरचनाएँ—उदाहरणतया प्रचंड तूफान, चक्रवात, आदि—ऐसी तस्वीरों में स्पष्टतः नज़र आते हैं। हमारे ग्रह के उत्तरी और दक्षिणी भागों में ध्रुवीय रात्रि के समय केवल मौसमविज्ञानी स्पुतनिकों की "रात्रि आँख" ही अभ्रों को देखने मे मदद करती है।

संचार स्पुतनिक : टेलिफोन नामक संचार साधन की आवश्यकता काफी तेजी से बढ़ती जा रही है। लेकिन हज़ारों किलोमीटर लम्बे केबिल बिछाना एक लम्बा, कठिन तथा खर्चीला कार्य है।

रेडियो भी सदा मददगार नही हो सकता। रेडियो स्टेशन कुछ दशको पहले—जब वे अपेक्षाकृत विरल थे—आरम्भ में केवल दीर्घ तथा मध्यम तरंगों पर कार्य करते थे; फिर उन्होंने लघु तरंगों पर कार्य करना आरम्भ किया। अब पृथ्वी पर रेडियो स्टेशनों की संख्या इतनी अधिक है कि यदि वे केवल इन्हीं तरंग दैर्घ्यों के क्षेत्र में कार्य करें, तो अवश्य ही परस्पर रुकावट उत्पन्न करेंगे। इसलिए रेडियो विशेषज्ञों ने अब अतिलघु तरंगों पर कार्य करना आरंभ किया है।

ये तरंगें यद्यपि बिना किसी रुकावट के संकेतों को प्रेषित कर सकती हैं, तो भी इनमें एक उल्लेखनीय कमी है : इनका विस्तारण सरल रेखा में होता है—जैसे कि प्रकाश की किरणों का—तथा आयनी वायुमंडल द्वारा इनका परावर्तन प्रायः नहीं होता। किन्तु पृथ्वी के कृत्रिम स्पुतनिकों ने—रेडियो-दर्पण के रूप में कार्य करते हुए—अतिलघु रेडियो तरंगों के परावर्तन के विचार को सम्भव बना दिया है। यह विचार पूर्णतया नया नहीं है। पृथ्वी का उपग्रह इसके लिए पहले प्रयुक्त किया जा चुका था, लेकिन यह कृत्रिम नही अपितु यथार्थ था। चन्द्रमा को प्रयुक्त करके इंग्लैड की जॉडरेल-बैंक वेधशाला तथा गोर्की शहर के निकट स्थित सोवियत

वेधशाला के बीच रेडियो संचार स्थापित किया गया था। लेकिन चंद्रमा की सतह से परावर्तन की मदद से रेडियो संचार एक सीमित समय में केवल कुछ ही देर के लिए सम्भव होता है—जब चन्द्रमा एक ही समय में दो संचार बिन्दुओं से नज़र आता रहता है।

पृथ्वी का कृत्रिम स्पुतनिक पूर्वनिश्चित कक्षक में प्रेषित होकर आवश्यक संचार बिन्दुओं के रेडियो दृश्य क्षेत्र में अधिक समय तक रह सकता है। इस प्रकार का सर्वप्रथम संचार स्पुतनिक—जिसका नाम "ऐको-1" रखा गया—1960 में अमरीका ने छोड़ा। यह गेंद जैसा स्पुतनिक, पृथ्वी से भेजी जानेवाली लगभग सभी रेडियो तरंगों को परावर्तित कर देता था, जबकि चन्द्रमा केवल 7 प्रतिशत तरंगों का परावर्तन करता था। लेकिन यथार्थ स्पुतनिक की भाँति कृत्रिम स्पुतनिक इस बात से उदासीन था कि वह परावर्तित ऊर्जा का किस ओर प्रकीर्णन करता है। इसीलिए स्पुतनिक से जमीन पर परावर्तित संकेतों को ग्रहण करने के स्थान पर प्रेषित्र द्वारा उत्सर्जित ऊर्जा की केवल तुच्छ मात्रा ही पहुँचती थी। इन तथा अन्य कमियों को दूर करने के लिए इस स्पुतनिक को श्रेष्ठतर बनाने के कार्य जारी रखे गये।

23 अप्रेल 1965 को सोवियत संघ ने अपना सर्वप्रथम संचार स्पुतनिक छोड़ा, जो एक सक्रिय पुनर्प्रेषित्र "मोल्निया-1" था। इसकी मदद से कई महीनों तक मास्को तथा व्लादीवोस्तोक के बीच दूरदर्शन कार्यक्रमों एवं टेलिफोन संचार का आदान-प्रदान जारी रहा। 14 अक्तूबर 1965 को एक और स्पुतनिक छोड़ा गया। और, इस प्रकार, प्रायोगिक रूप से दुतरफा दूरदर्शन कार्यक्रम तथा टेलिफोन-टेलिग्राफ संचार विनिमय का अगला चरण भी चालू हो गया। तृतीय "मोल्निया" स्पुतनिक फ्रांस तथा सोवियत संघ के बीच दूरदर्शन कार्यक्रमों के विनिमय के लिए प्रयुक्त किया गया था।

प्रथम सोवियत "मोल्निया" स्पुतनिक के बाद कुछ वर्षों में ही सोवियत

संघ ने कई और "मोल्निया" स्पुतनिक छोड़े। अंतरिक्ष में सचार स्पुतनिक "मोल्निया-2" तथा "मोल्निया-3" अपना कार्य जारी रखे हैं। "मोल्निया" स्पुतनिक की संचार प्रणाली निम्नलिखित प्रकार से कार्य करती है। एक कूर्चिका किरण-पुंज ऐन्टेना की सहायता से प्रेषित्र संकीर्ण रेडियो किरणों के रूप में संकेत स्पुतनिक को प्रेषित करता है। स्पुतनिक के प्रेषित्र-ग्राही ऐन्टेना द्वारा गृहीत होने पर यह संकेत उसके रेडियो-ग्राही उपकरण में आता है। यहां इस संकेत का अपवर्धन होता है, और स्पुतनिक का प्रेषित्र इसे वापिस पृथ्वी पर प्रेषित कर देता है, जहाँ इसे ग्राही ग्रहण कर लेता है।

चित्र में "मोल्निया" संचार स्पुतनिक को देखिए। एक संमुद्रित बेलनाकार बक्स में पुनर्प्रेषित्र उपकरण रखे होते हैं, जिसमें एक संवेदनशील ग्राही, शक्तिशाली प्रेषित्र और कई अन्य सहायक यंत्र होते हैं। स्पुतनिक पर परिशुद्धि इंजन यंत्र, अभिविन्यास के सूक्ष्म इंजन, और सौर बैटरी पैनल लगे होते हैं। स्पुतनिक के सभी यंत्रों व उपकरणों को वैद्युत ऊर्जा प्रदान करने वाली संचय बैटरी का पुनः-आवेशन सौर बैटरी करती रहती है। तापनियंत्रण तंत्र के विकिरक-प्रशीतक तथा पैनल-हीटर भी स्पुतनिक की सतह पर लगे होते हैं। स्पुतनिक के अन्दर हमेशा आवश्यक तापमान बना रहता है।

यदि सौर बैटरी के पैनल हर समय सूर्य की ओर आमुख रखने हों, तो परवलयिक ऐन्टेना की खुली हुई छतरियां हर समय पृथ्वी की ओर आमुख रहनी चाहिए। इसलिए पृथ्वी की ओर ऐन्टेना को आमुख करने के लिए, अभिविन्यास के प्रेषित्र के सकेतों के अनुसार स्पुतनिक घूमता है। पृथ्वी की ओर सुनिश्चित अवस्था उस समय प्राप्त होती है जब वह छड़ी घूम जाती है जिस पर छतरी लगी होती है। इसके पश्चात् इस अवस्था का स्थिरीकरण हो जाता है।

सोवियत संघ की महान् समाजवादी क्रांति की 50वीं वर्षगांठ के

उपलक्ष में अतिदूरस्थ दूरदर्शन कार्यक्रमों का स्टेशन "ऑर्बित" छोड़ा गया था। अंतरिक्ष संचार के भूमि पर स्थित स्टेशनों की इतनी बड़ी संख्या केवल सोवियत संघ में ही है। ये "मोल्निया" के माध्यम से यूरोप व एशिया या यूरोप व दक्षिणी अमरीका के देशों के बीच सम्पर्क स्थापित करते हैं।

"मोल्निया" के बाद अन्तरिक्ष में "रादूगा" नामक अन्य संचार उपग्रह छोड़े गये। पिछले अंतरिक्ष उपकरणो के विपरीत, ये उपकरण 40 हजार कि०मी० ऊंचाई पर गोल कक्षक में पृथ्वी की घूमने की गति के साथ भूमध्य रेखा के समतल पर उड़ान भरते हैं। इसीलिए पृथ्वी से देखने पर ये स्थिर प्रतीत होते हैं। इस प्रकार की कक्षा को स्थायी कक्षा कहते हैं। "रादूगा" स्पुतनिक साइबेरिया एवं सुदूर उत्तरी क्षेत्रों के लिए कार्य करते हैं।

"मोल्निया" के साथ सम्पर्क करने की तरह, "रादूगा" के संकेतों को ग्रहण करने के लिए भी विशाल ऐन्टेनाओं और विशाल ग्राही स्टेशनों की आवश्यकता होती है। स्थायी कक्षा में ही छोड़े गये नये संचार स्पुतनिक "एक्रान" अधिक शक्तिशाली प्रेषित्रों से लैस हैं। इनके संकेतों को पृथ्वी पर अपेक्षाकृत सरल तथा कम मूल्य वाले ऐन्टेना भी ग्रहण कर सकते हैं। अतएव, मास्को के दूरदर्शन कार्यक्रम हम "एक्रान" द्वारा उन क्षेत्रों में देख सकते हैं, जहां "ऑर्बित" ग्रहण स्टेशनों का निर्माण आर्थिक रूप से लाभदायक नहीं है।

सभी संचार स्पुतनिक केवल दूरदर्शन कार्यक्रमों को पुनर्प्रेषित करने के लिए ही नहीं, अपितु टेलीफोन और टेलीग्राफ कार्यों के लिए भी प्रयुक्त किये जाते हैं।

स्पतनिक प्रकाश-स्तम्भ : प्राचीन काल से ही यात्रियों को कठिन स्थिति में अभिविन्यास करने में आकाशीय तारे सहायता देते आये हैं। और अब

प्रत्येक संचालक के पास तारों, सूर्य या चन्द्रमा के आधार पर अपनी स्थिति निर्धारित करने के लिए एक सेक्सटैंट होता है। लेकिन धुन्ध या नभ में अभ्र छा जाने की स्थिति में वह क्या कर सकता है ? हाल ही में इस समस्या का भी समाधान प्राप्त हो गया है। रेडियोखगोल विज्ञान ने यहाँ मदद की। आकाशीय पिंडों के रेडियो उत्सर्जन में अभ्र कोई रुकावट उत्पन्न नहीं कर सकते। ग्राही ऐन्टेना, संचालकों को बादलों की घटा के पार देखने में सहायता करते हैं। लेकिन रेडियो सेक्सटैंट अधिक परिशुद्ध नही थी, तथा उसके पठन पर पूर्णतया निर्भर होना खतरे से खाली नही था। वायुयानों और जहाजों के संचालन में, विशेष संचालन स्पुतनिक की मदद ली गयी ।

पृथ्वी पर स्थित कोई भी वस्तु अथवा कोई आकाशीय पिंड केवल उसी स्थिति में अभिविन्यास के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है, जब हमारी पृथ्वी पर या हमारे ग्रह के प्रति उसकी स्थिति एकदम ठीक-ठीक ज्ञात हो। किसी भी क्षण पर, नियत सतह के किसी भी बिन्दु के प्रति स्पुतनिक की स्थिति अत्यधिक परिशुद्धता के साथ बतायी जा सकती है । इसके वास्ते केवल स्पुतनिक की प्रारम्भिक कक्षा के परिमाण का और आकाशीय यांत्रिकी के उन गुणों का ज्ञान आवश्यक है, जो स्पुतनिक की गति पर लागू होते हैं।

संचालन स्पुतनिकों की संख्या और उनकी कक्षाओं का चयन इस प्रकार किया जाता है कि ये अन्तरिक्षीय सीमाचिह्न पृथ्वी की सतह के प्रायः उन भागों के ऊपर पर्याप्त रूप से उड़ान भरते रहें, जहाँ का क्षेत्र विचाराधीन है। स्पुतनिक पर लगा रेडियो-प्रेषित्र समयानुसार संकेत उत्सर्जित करता रहता है। जहाज या वायुयान पर लगा स्टेशन उसके ऊपर स्पुतनिक की उड़ान के समय उसके कोणीय निर्देशांक—ऊँचाई और दिगंश या उस तक की दूरी—मापते हैं। अब प्रेक्षक के प्रति स्पुतनिक की स्थिति तथा सम्पर्क के समय उसके निर्देशांक ज्ञात होने पर, स्वयं प्रेक्षक,

अर्थात जहाज या वायुयान के निर्देशांक, सरलता से ज्ञात किये जा सकते हैं।

अपने निर्देशांकों के बारे में जानकारी स्वयं स्पुतनिक देता है। इसके वास्ते उन्हें पहले से ही परिकलित करके रेडियो द्वारा स्पुतनिक के स्मरण तंत्र में भर दिया जाता है। "अपने" क्षेत्र के ऊपर उड़ान भरते हुए स्पुतनिक स्वत: "स्मृति" में से आँकड़ों को पृथ्वी पर प्रेषित कर देता है।

स्पुतनिक से प्राप्त होने वाली यह सूचना जहाज या वायुयान के कम्प्यूटर में आती है, जहां से संचालक को आवश्यक खगोलविज्ञानी निर्देशांक प्राप्त हो जाते हैं।

पृथ्वी के कृत्रिम स्पुतनिक, विज्ञान के विकास में भी मदद करते है। 16 मार्च 1962 को सोवियत संघ ने अपनी विज्ञान अकादमी के कार्य-क्रम के लिए "कॉस्मोस" श्रेणी का पहला स्पुतनिक छोड़ा था। इस श्रेणी के स्पुतनिकों द्वारा किये जाने वाले वैज्ञानिक कार्यक्रमों की सूची बहुत बड़ी है। "कॉस्मोस" स्पुतनिक चुम्बकीय क्षेत्र और पृथ्वी के निकट की विकिरण स्थिति का अध्ययन करते हैं, सूर्य के एक्स-किरण तथा पराबैगनी उत्सर्जन का विश्लेषण करते हैं, तथा विभिन्न जीवविज्ञानी प्रयोग करते हैं।

इसके अतिरिक्त, "कॉस्मोस" स्पुतनिक डिज़ाइनरों के लिए अंतरिक्ष में प्रयोगशाला बन गये। इनकी मदद से अनेक तकनीकी समस्याओं का हल प्राप्त हुआ : हानिकारक उत्सर्जन से अंतरिक्ष-यात्रियों की रक्षा, उप-करणों के संरचनात्मक घटकों पर अन्तरिक्षीय स्थितियों का प्रभाव, कक्षा में स्वचलित यंत्रों द्वारा यानों की डॉकिंग, वायुमण्डल में प्रवेश तथा पृथ्वी पर अवतरण—ये इन समस्याओं के कुछ उदाहरण हैं। "कॉस्मोस" श्रेणी के द्वितीय स्पुतनिक का कार्य एक प्रयोगकर्ता का था। इस स्पुतनिक पर नये आयनी प्रेषित्रों के आधार पर अभिविन्यास-तंत्र के कार्य को प्रयुक्त किया गया।
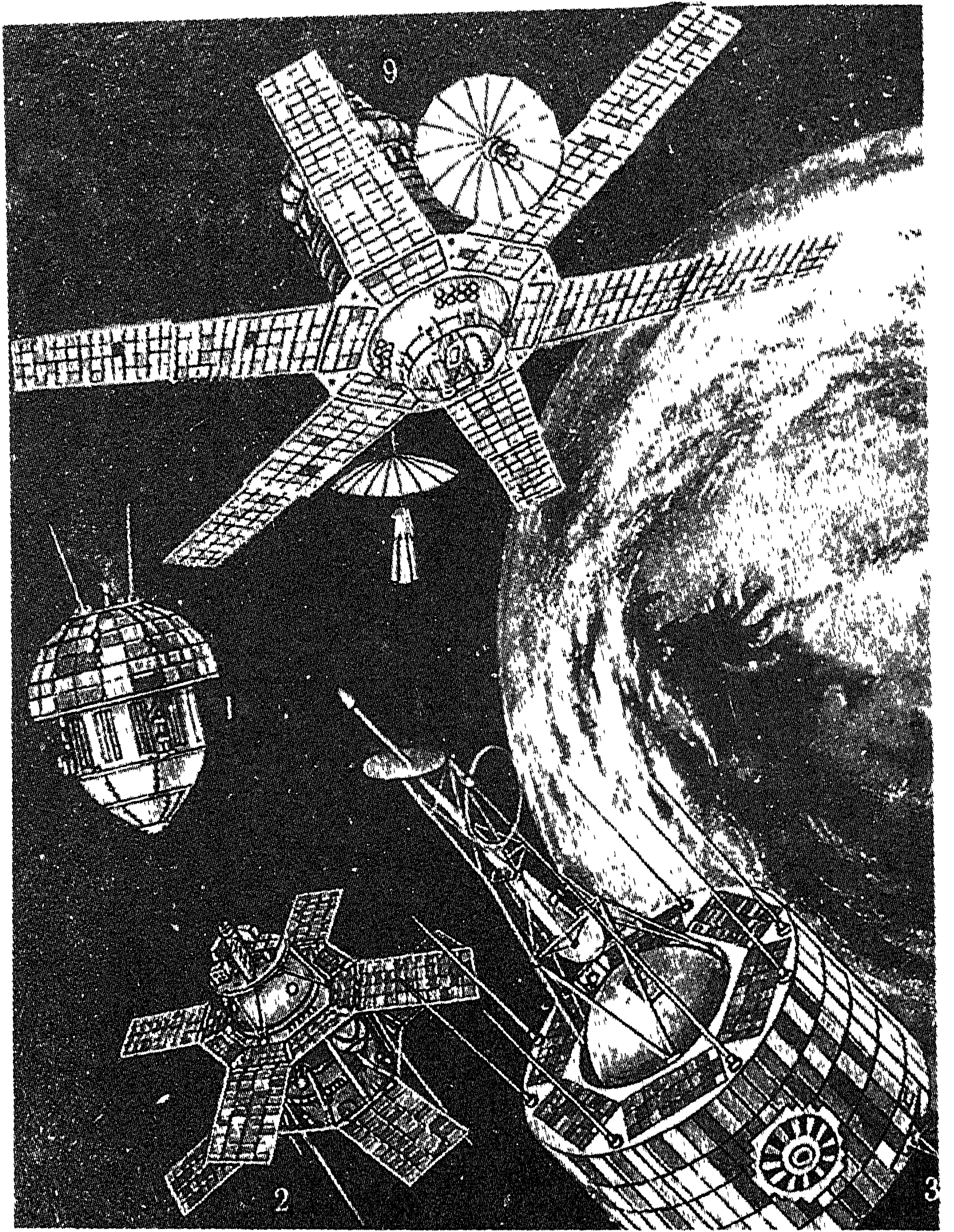
पृथ्वी के कृत्रिम उपग्रह
1, 3. "कॉस्मोस" 2. "इंटरकॉस्मोस" 4. तृतीय कृत्रिम सोवियत उपग्रह
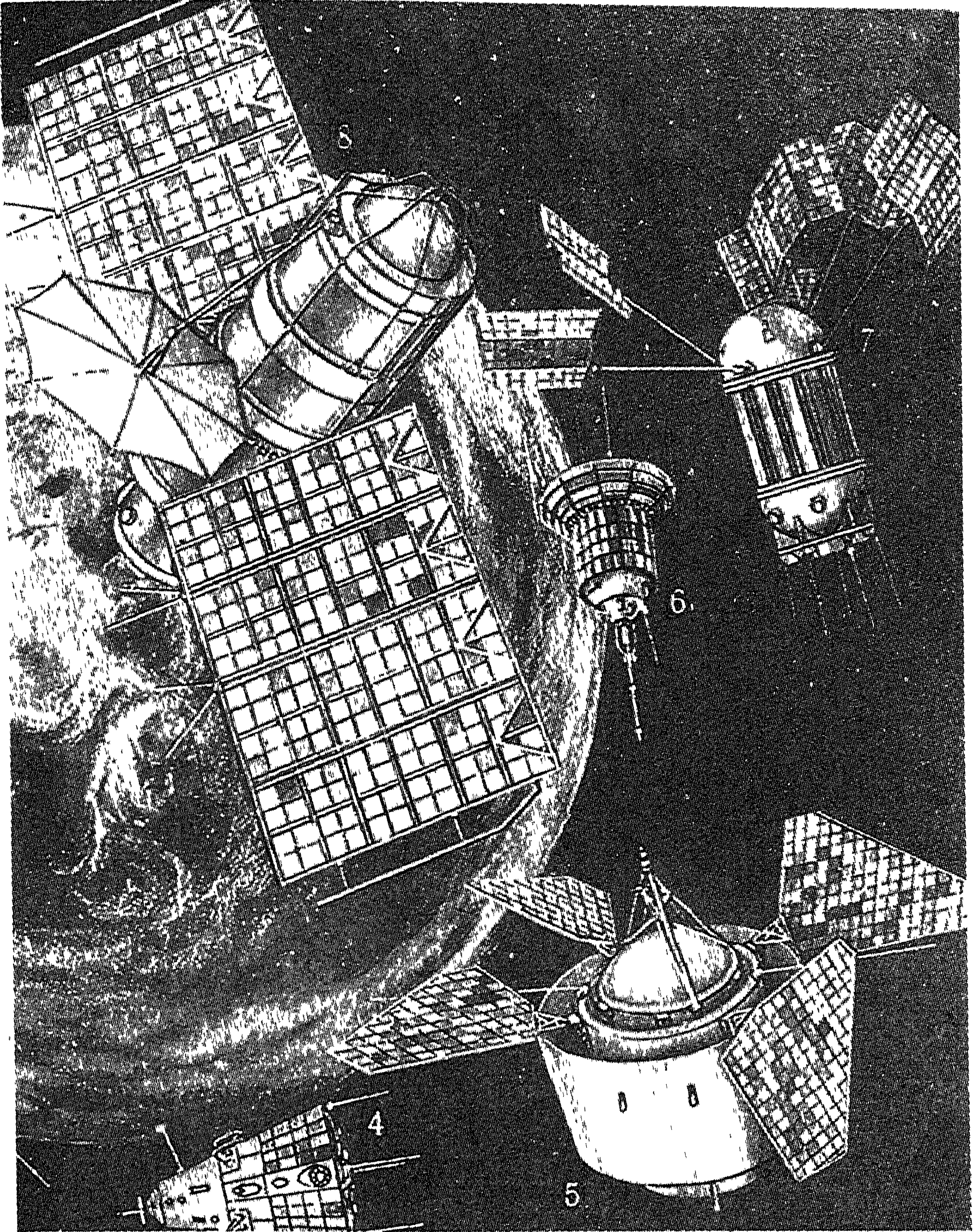
5. "प्रोटोन-1" 6, 7. "इलेक्ट्रॉन-2" व "इलेक्ट्रॉन-1" 8. "मिट्योर"
9 "मोलनिया"

"कॉस्मोस" स्पुतनिकों ने अनेक बार सूर्य का भी निरीक्षण किया। "कॉस्मोस-166" और "कॉस्मोस-230" ने हमारे प्राचीन प्रकाश-स्रोत के जीवन का बड़े ध्यान से अध्ययन किया; "कॉस्मोस-348" ने सौर-पृथ्वी सम्बंधों, विशेष रूप से पृथ्वी के वायुमण्डल पर सौर सक्रियता के प्रभाव, का अध्ययन किया।

सूर्य के अध्ययन में कई अन्य सोवियत स्वचलित उपकरणों ने भी भाग लिया। इनमें थे—स्वचलित स्टेशन "प्रॉगनोज़"। इन स्पुतनिको के वैज्ञानिक यंत्रों ने हमारे ग्रह द्वारा उत्सर्जित गामा तथा एक्स-किरणों का अध्ययन किया, सौर प्लाज्मा के प्रवाह, तथा पृथ्वी के चुम्बकीय क्षेत्र के साथ उसके परस्पर सम्बन्ध का भी अध्ययन किया। अनेक क्षेत्रों के विशेषज्ञों एवं शोधकर्ताओ के लिए सौर सक्रियता के बारे में यथातथ्य पूर्वानुमान—जिसके द्वारा उन स्पुतनिकों पर प्रयोग किये गये—प्राप्त होना काफी महत्व रखता है।

पृथ्वी के विकिरण क्षेत्र तथा चुम्बकीय क्षेत्र के अध्ययन के लिए 1964 में सोवियत संघ ने "इलेक्ट्रॉन" श्रेणी के स्पुतनिक छोड़े। इस समय एक रॉकेट दो स्पुतनिकों को विभिन्न कक्षाओं में ले गया। इस प्रकार विकिरण क्षेत्र के बाहरी व आंतरिक भागों का अध्ययन एक ही साथ किया जा सका।

उच्च तथा अतिउच्च ऊर्जा वाले अंतरिक्षीय कणों के अध्ययन के लिए आवश्यक भारी वैज्ञानिक उपकरणों को पृथ्वी के निकट की कक्षा में सोवियत स्टेशनों "प्रोटोन" द्वारा पहुँचाया गया। इन पर लादे गये उप-करणों का ही भार 12 टन से अधिक था।

अंतरिक्षीय आकाश के अध्ययन में सोवियत संघ सभी देशों के साथ मिलकर कार्य कर रहा है। सोवियत रॉकेट नियमित रूप से "इंटरकॉस्मोस" श्रेणी के स्पुतनिकों को कक्षा में पहुँचाते हैं। अनेक देशों के वैज्ञानिक एवं

विशेषज्ञ इन स्पुतनिकों पर वैज्ञानिक यंत्र, प्रयोगों की कार्य प्रणाली तथा उड़ान का कार्यक्रम मिलकर तैयार करते हैं। प्रत्येक उड़ान में उससे पूर्व की गयी उड़ान के फलस्वरूप प्राप्त परिणामों की पूर्ति की जाती हैं, तथा विचाराधीन प्रश्नों के बारे में नयी जानकारी प्राप्त होती है । और ऐसे प्रश्न मैत्री स्पुतनिको के पास काफी हैं—सूर्य तथा उसका पड़ोसी अन्त-रिक्षीय आकाश, पृथ्वी का वायुमण्डलीय एवं चुम्बकीय आवरण, ध्रुवीय प्रकाश, इत्यादि ।

"इंटरकॉस्मोस-15" के प्रक्षेपण के साथ अंतरिक्ष के अध्ययन एवं प्रयोग का एक नया अध्याय आरम्भ हुआ है। सभी गत स्पुतनिकों के अतिरिक्त, यह एक स्वचलित सार्वभौम कक्षकीय स्टेशन है, जिसकी मदद से अनेक प्रकार के वैज्ञानिक अनुसंधान किये जा सकते हैं। इस स्टेशन की विशेषता केवल यही नहीं है कि इस पर विभिन्न प्रकार के वैज्ञानिक उपकरण लगाये जा सकते हैं, बल्कि यह भी कि भाग लेने वाले विभिन्न देशों में ग्राही बिन्दुओं पर प्रत्यक्ष रूप से वैज्ञानिक सूचना प्रेषित करने का एकल दूरमापी तन्त्र इस पर पहली बार लगाया गया है।

अन्तारक्ष में परस्पर मिलकर कार्य करने से महत्वपूर्ण व्यावहारिक परिणाम प्राप्त होते है। इस प्रकार, अनेक देशों के वैज्ञानिकों में एक साथ मिलकर कार्य करने की इच्छा उत्पन्न होती है, परस्पर आदर-भाव बढ़ता है, तथा यह देशों के बीच आदर्श सम्बन्धों का एक सजीव उदाहरण बन जाता है।

मानव चन्द्रमा का अध्ययन करता है

पृथ्वी के प्रथम कृत्रिम स्पुतनिक छोड़ने के तुरन्त पश्चात् ही चन्द्रमा पर हमला चालू हो गया था। 1959 में रात्रि के प्रकाश स्रोत की दिशा में एक सोवियत स्वचलित स्टेशन "लूना-1" छोड़ा गया। यह प्रथम उप-

करण था, जो भू-कर्षण बल को पार कर सका और जिसने द्वितीय अन्त-रिक्षीय गति के साथ अंतरिक्षीय आकाश में प्रवेश किया। चन्द्रमा की सतह से 6000 कि०मी० की दूरी पर यह उपकरण पृथ्वी के प्रभाव क्षेत्र के बाहर आ गया और सौर-विन्यास का प्रथम कृत्रिम ग्रह बना।

एक वर्ष भी न बीता था कि एक नया सोवियत स्टेशन चन्द्रमा की ओर रवाना हुआ। इसने हमारे अमर ग्रह पर सोवियत संघ का राजकीय प्रतीक पहुँचाया। इसके अतिरिक्त द्वितीय चन्द्रयान ने अंतरिक्ष-विज्ञान की सहायता से चन्द्रमा के अध्ययन का आधार निर्मित किया। इस तरह, इसने सिद्ध किया कि चन्द्रमा का कोई प्रत्यक्ष चुंम्बकीय क्षेत्र नहीं है।

द्वितीय यान छोड़ने के पश्चात् एक महीने के अन्दर ही एक तृतीय चन्द्रयान रवाना हुआ। यह एक अंतरिक्षीय फोटोग्राफर था। "लूना-3" ने चन्द्रमा के चारों ओर परिक्रमा पूरी करके उसके पिछले भाग की तस्वीर उतारी और सर्वप्रथम मानव को उस भाग से परिचित कराया।

प्रथम स्वचलित स्टेशन चन्द्र उड़ान के प्रक्षेप में सीधे पृथ्वी से प्रेषित किये गये थे। उड़ान के समय प्रक्षेप-पथ में शुद्धि नहीं की गयी। इसके लिए आवश्यक था कि उड़ान के आरम्भिक क्षण का पूर्णतया, यथातथ्य रूप से, पालन किया जाये, साथ ही रॉकेट के सभी चरणों के कार्यक्रमों का भी परिशुद्धता से पालन किया जाये ताकि इंजनों के बन्द किये जाने के समय स्टेशन की गति की राशि तथा दिशा परिकलित राशि और गति के साथ एकदम मेल खायें। इन राशियों में मामूली-सा विचलन चन्द्रमा तक जैसी सुदूर उड़ान में बहुत भारी गलतियां उत्पन्न कर सकता है। इसके अतिरिक्त चन्द्रमा पर सीधे पृथ्वी से भेजे जाने वाले यान के लिए उन प्रक्षेप-पथों का चयन किया जाता है, जो ईंधन के व्यय के दृष्टिकोण से सर्वाधिक अनुकूल होते हैं।

इसलिए सभी भावी सोवियत स्टेशन, जो चन्द्रमा की ओर छोड़े गये,
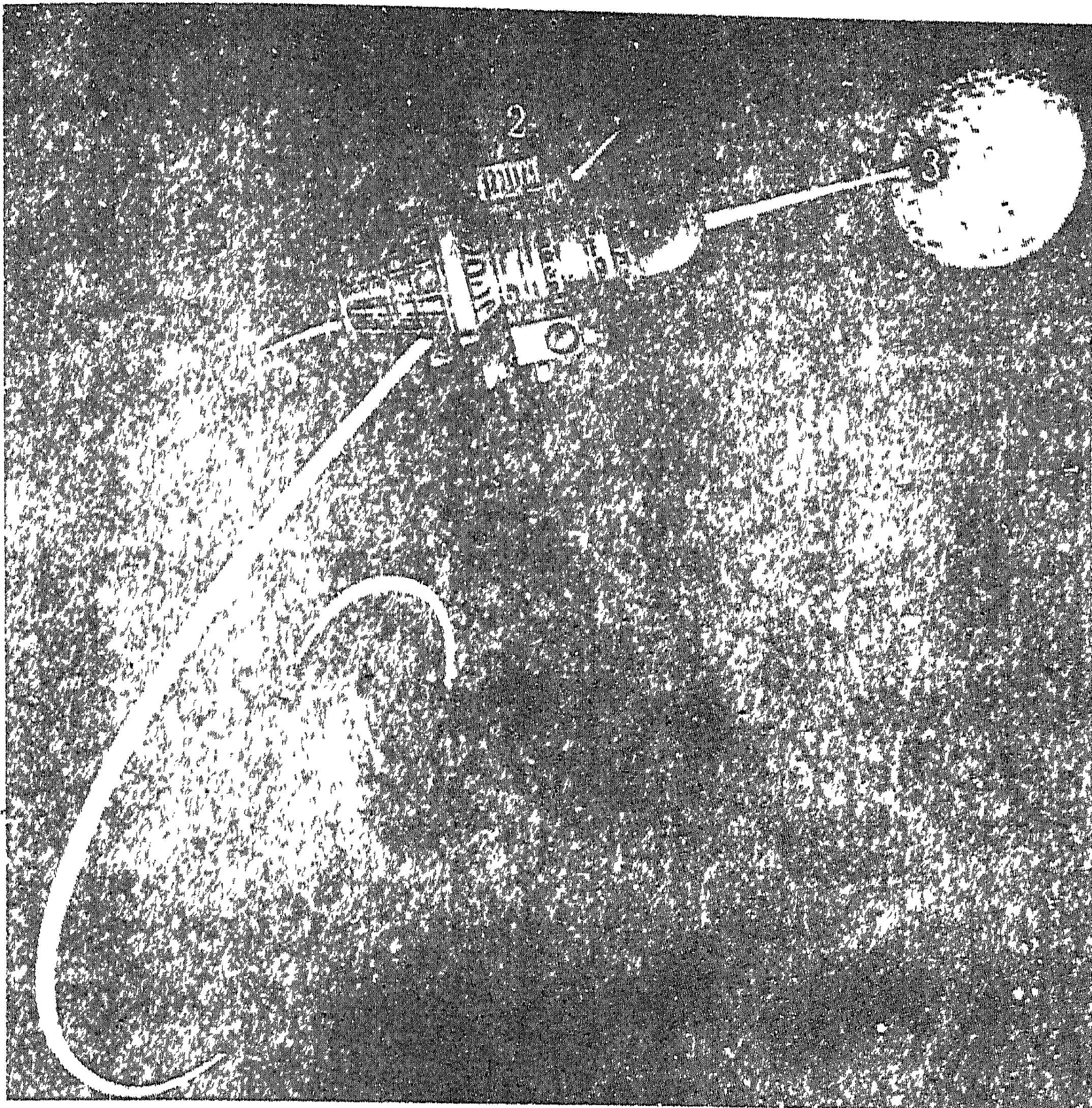
स्वचलित अंतरग्रहीय स्टेशन "लूना-9"
1. स्टार्ट 2. प्रक्षेप-पथ 3. अवतरण

अन्य प्रकार से भेजे गये। आरम्भ में, शक्तिशाली रॉकेट ने स्टेशन तथा रॉकेट विभाग को—अन्य सरल शब्दों में, निम्न कोटि के अन्तरिक्षीय रॉकेट के साथ स्टेशन को—पृथ्वी के कृत्रिम स्पुतनिक के प्रक्षेप-पथ में पहुँचाया; उसके उपरान्त, आवश्यक समय पर अग्रिम चरण आरम्भ हुआ तथा स्टेशन चन्द्रमा की ओर उड़ान के प्रक्षेप-पथ में प्रविष्ट हुआ। यदि इस प्रक्षेप-पंथ का परिकलित पथ से विचलन था, तो सहायता के लिए

परिशुद्धि इंजन उपलब्ध था। प्रथम उड़ानों की सफलता ने अग्रिम कार्य-क्रम—चन्द्रमा पर मृदु अवतरण—की वास्तविकता एवं समायोजन को सिद्ध किया। भावी उड़ानों के समय मृदु अवतरण की विधि, उपकरण एवं तंत्र का विकास किया गया।

लीजिए, 3 फरवरी 1966 का दिन आ गया। इस दिन पृथ्वी से भेजा गया उपकरण न केवल चन्द्रमा की सतह तक पहुँचा, बल्कि उसने बूर महासागर क्षेत्र में मृदु अवतरण किया। यह अवतरण सोवियत स्वचलित स्टेशन "लूना-9" ने किया।

जब स्टेशन तथा चन्द्रमा के बीच की दूरी कुछ हजार किलोमीटर रह गयी, तो स्टेशन का अभिविन्यास इस प्रकार रहा कि उसके ब्रेक-इंजन का तुंड चन्द्रमा के केन्द्र की ओर था। 75 किलोमीटर की दूरी पर इंजन चालू हो गया तथा इसकी अग्नि की लपटें चन्द्रमा की सतह की ओर थीं, और इस प्रकार, स्टेशन का अवतरण मृदु बना दिया गया था।

"लूना-9" पर एक विशेष उपकरण था—स्वचलित चन्द्रमा स्टेशन। ब्रेक लगने के समय इसके चारों ओर स्थित लचकदार आवरण में गैस भर गयी, और वह एक लचीली गेंद बन गया। सतह द्वारा लगने वाली चोट को मृदु बनाकर यह गेंद दो भागों में टूट गयी और चन्द्रमा-स्टेशन को स्वतन्त्र कर दिया। अपने ही स्थान पर स्वतः उठ जाने वाली गुड़िया की भाँति, यह स्टेशन अपनी कार्यकारी स्थिति में आ गया। इसका ऊपरी भाग खुल गया और उसने ऐन्टेना की चार प्लेटें बना दीं। इसके साथ ही चार ऐन्टेना—तार के रूप में—बाहर आ गये और ऐसा लगा कि चन्द्रमा की जीवनरहित भूमि पर कोई मोहक फूल खिल गया हो।

उपकरण पर लगे दूरदर्शी कैमरे ने चन्द्रमा के दृश्य पटल का चित्र लेना आरम्भ कर दिया। अगले दिन समस्त विश्व के समाचार पत्रों में इस उपकरण द्वारा लिये गये चन्द्रमा की सतह के चित्र छपे। इन्हें देख

कर ऐसा लगा कि मानो हम स्वयं ही चन्द्रमा की सतह पर होकर आये हों ।

"लूना-9" ने चन्द्रमा की सतह के केवल एक छोटे-से भाग से ही हमें परिचित कराया । सम्पूर्ण चन्द्रमा के बारे में अधिक विस्तृत ज्ञान प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक था कि हम उसका अध्ययन अधिक समीपता से तथा अधिक अवधि तक करें । यह केवल चन्द्रमा के एक कृत्रिम स्पुतनिक की सहायता से ही सम्भव था । ऐसा स्पुतनिक सर्वप्रथम सोवियत संघ द्वारा छोड़ा गया स्टेशन "लूना-10" बना । इस पर लगे वैज्ञानिक उपकरण ने चन्द्रमा का गहन अध्ययन किया । लेकिन चन्द्रमा की मृदा के बारे में अधिक विस्तृत ज्ञान, केवल प्रत्यक्ष रूप से मापने वाले विशेष उपकरणों द्वारा ही प्राप्त किया जा सका ।

"लूना-13" स्टेशन के अवतरण उपकरण ने दिसम्बर 1966 में चन्द्रमा पर मृदु अवतरण किया । ऐन्टेनाओं की प्लेटो के खुलने के साथ ही, दो डेढ़ मीटर लम्बाई वाले "हाथ" भी चन्द्रमा की सतह पर उतरे । ये भूमि को मापने के यन्त्र थे; ये भूमि वेधनमापी थे तथा विकिरण के घनत्व को मापने वाले थे । एक छोटे-से पाउडर रॉकेट इंजन की सहायता से एक धात्विक शंकु को चन्द्रमा की भूमि पर—निश्चित बल द्वारा—डाला गया । शंकु की गति, वैद्युत राशी में रूपांतरित होकर रेडियो संचार पथ से पृथ्वी तक पहुँची ।

भूमि का घनत्व, विघटनाभिक (रेडियोएक्टिव) पदार्थों की मदद से मापा गया । घनत्वमापी में विघटनाभिक विकिरण का स्रोत एवं आवेशित कणों के गणित्र रखे गये थे । विकिरण का कुछ भाग भूमि द्वारा अव-शोषित हो जाता था, तथा शेष भाग अनेक बार प्रकीर्णन के पश्चात् घनत्वमापी में लौट आता था, और गणित्रों द्वारा पंजीकृत कर लिया जाता था । वापिस लौटने वाले कणों की संख्या भूमि के घनत्व पर निर्भर करती थी ।
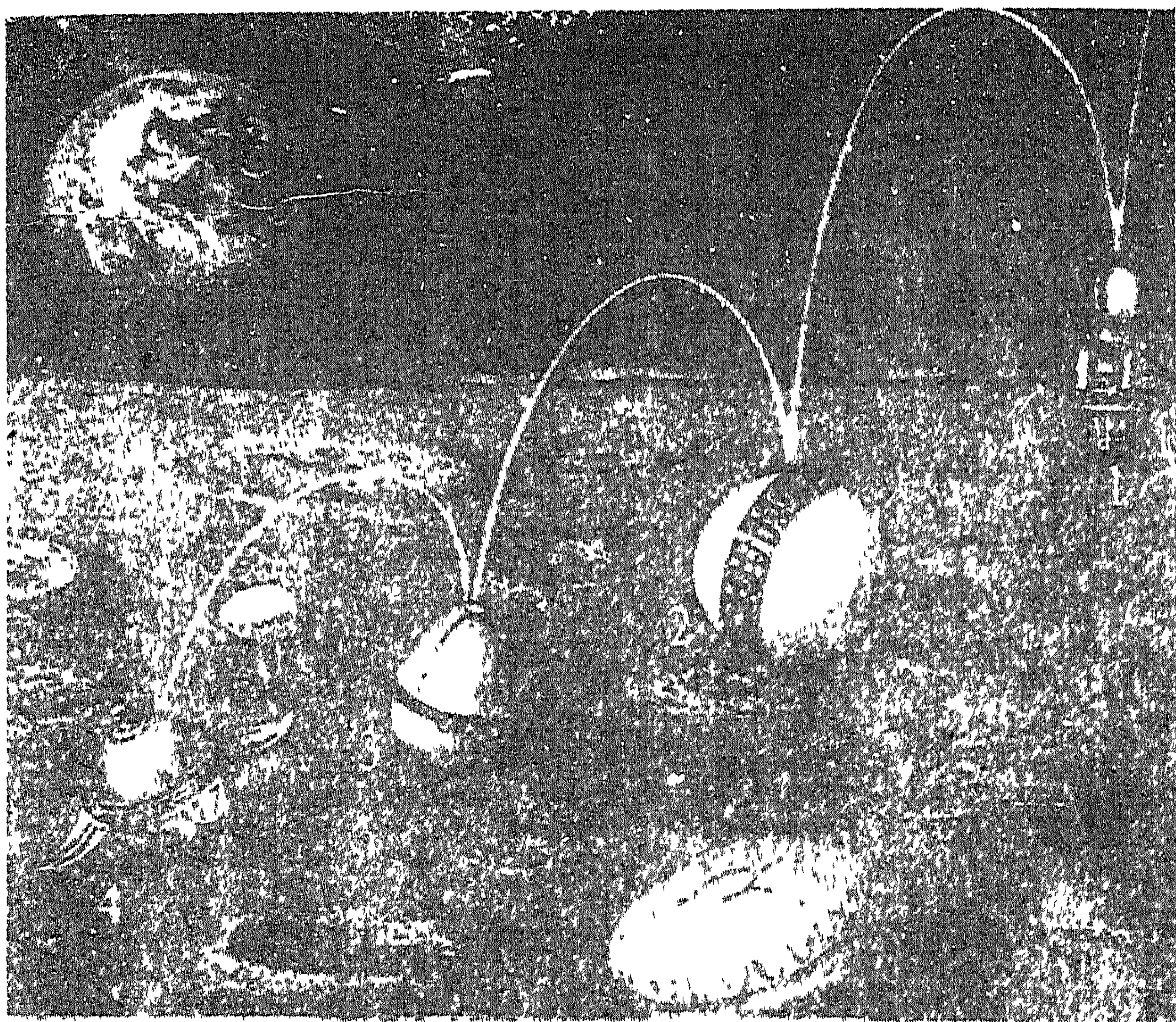
स्टेशन "लूना-9" के अवतरण का आरेख

1. स्टेशन का पृथक्करण 2. चद्रमा पर उतरने के बाद स्टेशन की स्थिति
3. बम्पर के फेंकने के बाद स्टेशन की स्थिति 4. कार्य-अवस्था में स्टेशन की स्थिति

स्वचालित स्टेशन "लूना-9"

"लूना-13" छोड़े जाने के कुछ महीने पश्चात्, चन्द्रमा की सतह को अमरीकी यान "सर्वेयर-3" पर लगे एक लघु खनित्र के करछुल ने हिलाया। लघु करछुल ने चन्द्रमा की भूमि में न केवल खन्दक बनायी, अपितु निश्चित बल के साथ कुछ गहराई मे से निकाले गये ढेलों को अवचूर्णित भी किया।

चन्द्रमा को भेजे जाने वाली सोवियत तथा अमरीकी अंतरिक्षीय उड़ानें जारी रही। स्वचलित यंत्रों ने चन्द्रमा की ऊपरी सतह के बारे में बहुत महत्वपूर्ण एवं रोचक जानकारी दी। हमें ज्ञात हुआ कि यह सतह इकट्ठी होने वाली रेत की भांति, आधार-शैलों से बनी होती है। हमने अब चन्द्रमा की भूमि से डरना बन्द कर दिया और हमारा साहस दृढ़ हो गया कि चन्द्रमा की सतह पर हम अधिक भारी यानों का अवतरण करा सकते हैं। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि चन्द्रमा तक मानव का मार्ग स्वचलित उपकरणों ने प्रशस्त किया।

बहुत अधिक समीपता से उड़ान के समय चन्द्रमा को सर्वप्रथम फ० बोरमैन, द० लोवेल तथा व० एंडर्स ने देखा। यह 1968 के अंत की बात है। इसके पश्चात् एक अन्य प्रायोगिक उड़ान चन्द्रमा पर भेजी गयी, जिसमें अंतरिक्ष-यात्रियों ट० स्टैफर्ड, द० यंग और यू० सेर्नान ने भाग लिया। 1969 के जून में केप कैनेवेरल से "अपोलो-11" अंतरिक्ष-यान को रॉकेट "सैटर्न-5" द्वारा छोड़ा गया। इस यान में अंतरिक्ष-यात्री न० आर्मस्ट्रांग, म० कॉलिन्स तथा ए० ऑल्ड्रिन थे।

"अपोलो" यान तीन भागों से बना था : यात्री-कक्ष, कार्य-कक्ष तथा चन्द्र-कक्ष। इस अंतरिक्षीय "गाड़ी" का "इंजन" कार्य-कक्ष था। इसमें लगा इंजन त्वरित्र तथा ब्रेक यंत्र दोनों का कार्य करता था। चन्द्र-कक्ष का कार्य था—अंतरिक्ष-यात्रियों को चन्द्रमा की सतह पर उतारना तथा उन्हें पुनः चांद्रकेन्द्रिक (सेलेनोसेंट्रिक) कक्षा में पहुंचाना। अष्टफलकीय आधार पर चार—लंगरनुमा—पैर टिके हुए थे। "इस आधार पर लगा

उपकरण दूर से देखने पर मानव के सिर जैसा लगता था।...प्रवेश-छिद्र मानव के मुख जैसा लगता था, तथा त्रिकोणीय प्रकाश-स्रोत 'आँख' जैसे"—एक अमरीकी समाचार-पत्र ने चन्द्र-कक्ष का इसी रूप में वर्णन किया।

चन्द्रमा के समीप की कक्षा में प्रवेश करने के पश्चात् तथा कुछ कौशल-कार्यों के बाद अन्तरिक्ष-यात्रियों न० आर्मस्ट्रांग एवं ए० ऑल्ड्रिन सहित अवतरण उपकरण ने नीचे उतरना शुरू किया। "अपोलो-11" ने, जिसका चालन कॉलिन्स कर रहे थे, चन्द्रमा के चारों ओर अपनी उड़ान जारी रखी।

चन्द्रमा पर भली प्रकार उतरने के पश्चात् अंतरिक्ष-यात्रियो ने अपने यान से बाहर निकलने की तैयारी आरम्भ की। 21 जुलाई 1969 को 5 बज कर 56 मिनट पर चन्द्रमा की सतह पर नील आर्मस्ट्रांग ने कदम रखा। इसके पश्चात् एडविन ऑल्ड्रिन भी चन्द्रमा पर उतरे। यात्रियों ने चन्द्रमा की मृदा के नमूने इकट्ठे किए। कुछ घंटों के बाद चन्द्रमा के यान का पुनः उड़ने वाला भाग, अवतरण भाग से पृथक हो गया तथा चन्द्रमा के चारों ओर कक्षा में प्रवेश कर गया। अन्तरिक्ष-यान "अपोलो" के साथ मिलन और उसमें अंतरिक्ष-यात्रियों के प्रवेश करने के पश्चात्, पुनः उड़ने वाला भाग पृथक होकर अंतरिक्ष में ही रह गया।

"अपोलो-11" ने चान्द्रकेन्द्रिक कक्षा को छोड़ दिया और पृथ्वी की ओर रवाना हुआ। 24 जुलाई को यान का अवतरण उपकरण सफलतापूर्वक प्रशान्त महासागर में जल में उतरा। इस प्रकार मानव की चन्द्रमा पर प्रथम उड़ान समाप्त हुई।

प्रथम चन्द्रमा-पदचारियों द्वारा तैयार किये गये मार्ग पर ही एक और यान "अपोलो-12" रवाना हुआ। अन्तरिक्ष-यात्री च० कॉनराड, र० गॉर्डन तथा अ० बिन चन्द्रमा से मृदा का एक और नमूना लाये।

"अपोलो-13" की उड़ान ने सभी लोगों को यह स्मरण कराया कि
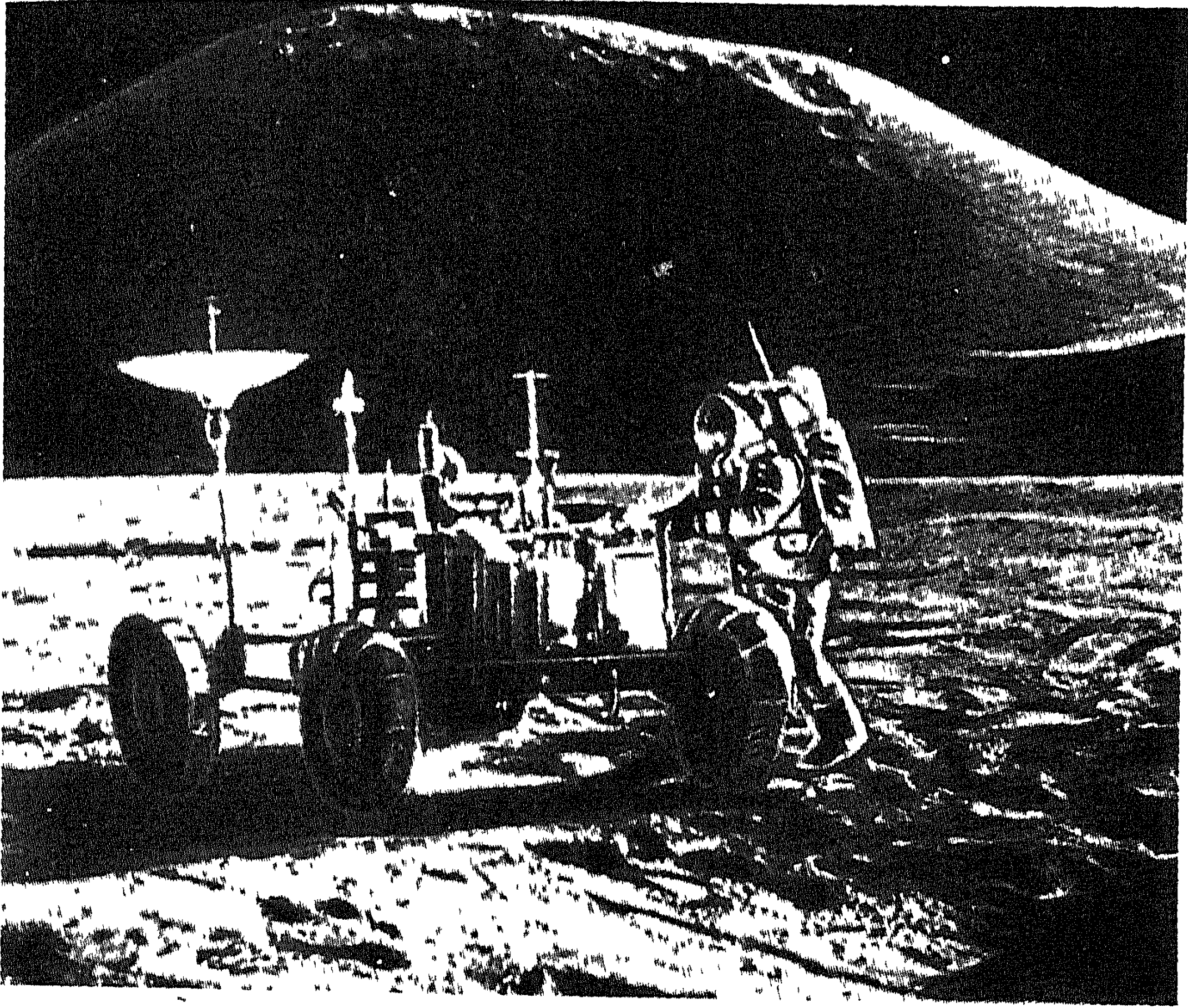
अमरीकी अंतरिक्ष-यात्री जेम्स इरविन चन्द्रमा पर वैद्युत मोटर गाड़ी के पास

अंतरिक्ष मार्ग आकस्मिक घटनाओं तथा खतरों से भरा है। यान पर घटी घटना के कारण उड़ान नियंत्रकों को यान का मार्ग परिवर्तित करना पड़ा। चन्द्रमा पर अवतरण न करके, चन्द्रमा की परिक्रमा की, और इस प्रकार साहस व स्वयं-नियंत्रण का प्रदर्शन करते हुए अंतरिक्ष-यात्री सुरक्षित रूप से पृथ्वी पर लौट आये।

इस उड़ान के पश्चात् चार अन्य "अपोलो" यान अंतरिक्ष-यात्रियों को चन्द्रमा पर ले गये। अन्तिम कुछ अभियानों के दौरान शोधकर्ता चन्द्रमा की सतह पर पैदल तो चले ही, उन्होंने विशेष वैद्युत मोटर गाड़ी

में बैठकर भी चन्द्रमा की सैर की। मानव द्वारा संचालित यानों की सहायता से चन्द्रमा के अध्ययन का अमरीकी कार्यक्रम "अपोलो-17" से समाप्त हुआ।

सितम्बर 1970 में सोवियत स्वचलित स्टेशन "लूना-16" ने उड़ान भरी। पहले चन्द्रयानों की भांति यह भी चन्द्रमा पर मृदु अवतरण करने वाला था। इसके अतिरिक्त, यह वह कार्य भी करने वाला था जिसे अभी तक किसी भी स्वचलित यान ने नहीं किया था—पृथ्वी पर वापिस लौटना। इसीलिए अवतरण चरण के अतिरिक्त इस पर एक विशेष रॉकेट भी था: "चन्द्रमा—पृथ्वी।"

बाहर से देखने में, यह प्रथम अन्तरिक्ष-यात्रियों के यान "वोस्तोक" के लघु संस्करण जैसा लगता था। दोनो यानों में वापिस लौटने वाला उपकरण गोलाकार था; केवल एक उपकरण में अन्तरिक्ष-यात्री की कुर्सी थी, तथा दूसरे उपकरण में चन्द्रमा मृदा के लिए एक बक्सा था। दोनों स्थितियों में वापिस लौटने वाले उपकरणों में पैराशूट तथा उपकरण की खोज को सरल करने हेतु दिशा-निर्धारक थे। "वोस्तोक" की भाँति "चन्द्रमा—पृथ्वी" मे भी यन्त्र विभाग के बाद इंजन विभाग था। चन्द्रमा से उड़ान भरने के लिए आरम्भ स्थल का कार्य अवतरण उपकरण ने किया।

इस स्टेशन का कार्य चन्द्रमा से अमूल्य सामान लाना था। इसके लिए इस पर मृदा इकट्ठी करने वाला यंत्र लगाया गया था।

यह स्टेशन विपुलता सागर में उतरा। पृथ्वी से आदेश दिये जाने पर वह ताला खुल गया जिसके द्वारा—वापिस लौटने वाले उपकरण के समीप लगा वेधन यंत्र—सुरक्षित रखा गया था। तत्पश्चात् वैद्युत इंजनों ने उसे चन्द्रमा की सतह पेर उतारा। रिक्त वेधन यंत्र घूमते हुए मृदा में प्रवेश कर गया और मृदा से परिपूर्ण हो गया। एक बार फिर छड़ी ने जटिल कार्य

किया—लेकिन इस बार विपरीत क्रम में । और, मृदा के साथ वेधन यन्त्र वापिस लौटने वाले उपकरण में रखे बक्से में बन्द हो गया । एक अन्य आदेश द्वारा वेधन यन्त्र अन्य यन्त्रों से पृथक हो गया तथा बक्से में ही रह गया ।

अब 'घर' लौटने का समय आ गया । रॉकेट की अवस्था का आखिरी निरीक्षण; और, यथातथ्य समय पर—आरम्भ । चकाचौंध कर देने वाले प्रकाश ने अवतरण उपकरण को प्रदीप्त कर दिया, जो हमेशा के लिए चन्द्रमा पर रह गया । गति को बढ़ाते हुए "चन्द्रमा—पृथ्वी" रॉकेट, पृथ्वी की ओर दौड़ने लगा । तीन दिन की यात्रा के पश्चात् रॉकेट से पृथक होकर पृथ्वी पर अवतरण का उपकरण पृथ्वी के वायुमंडल में प्रविष्ट हुआ ।

लीजिए, चन्द्रमा की मृदा पृथ्वी पर आ गयी । लेकिन जो अभी कुछ समय पूर्व आश्चर्य था, अब वैज्ञानिकों को सन्तुष्ट नहीं करता था । यह ज्ञात करने के बाद कि 'सागर' की सतह किस-किस मृदा की किस्मों से बनी है, वे यह जानने को उत्सुक हो उठे कि चन्द्रमा के शैल किससे बने हैं । अवतरण के लिए स्थितियाँ हालाँकि काफी जटिल थीं, फिर भी अवतरण सफल हुआ । शीघ्र ही वैज्ञानिकों ने चन्द्रमा की मृदा के नमूने सूक्ष्मदर्शी के नीचे रखे । पाँच वर्ष के अन्दर ही एक अन्य यान चन्द्रमा के संकट सागर के "तट" से मृदा का नमूना पृथ्वी पर लाया । इस नमूने का विशेष महत्व था । कारण यह कि स्टेशन "लूना-24" ने यह नमूना चन्द्रमा की सतह से नहीं, अपितु लगभग 2 मी० की गहराई से लिया था ।

सर्वाधिक विचित्र संरचना वाली हर प्रकार की सतह पर चल सकने योग्य गाड़ियाँ अब चन्द्रमा के "सागरों" में सैर कर चुकी थीं, उनकी दरारों को पार कर चुकी थीं तथा खाइयों की सपाट दीवारों पर चढ चुकी थीं ।

धात्विक इल्ली, प्लास्टिक गोले, ऐसे स्क्रू-वाहक जो अद्भुत कीड़ों

जैसे लगते व लम्बे-लम्बे डग भरते थे—न जाने किस-किस प्रकार की चन्द्रमा पर चलने वाली गाड़ियाँ चलीं। अंततः इन प्रयोगात्मक गाड़ियों में पुराने समय से प्रचलित पहिया प्रयुक्त किया गया, जो सर्वाधिक सफल सिद्ध हुआ।

इस प्रकार, प्रथम चन्द्रमा-गाड़ी के पहियों ने "वर्षा सागर" पर मार्ग बनाया। इस गाड़ी को सोवियत यान "लूना-17" चन्द्रमा पर ले गया था। "लूनाखोद-1" को देखने पर उसका आकार विचित्र लगता था: छोटे-छोटे खुरदुरे पहियों पर एक भारी बाक्स—यंत्र बाक्स—रखा हुआ था। फिर एकदम ख्याल आया कि पृथ्वी की तुलना में चन्द्रमा पर सभी वस्तुओं का भार छः गुना कम हो जाता है।

चन्द्र-गाड़ी का प्रत्येक पहिया अपने वैद्युत इंजन से चलता था तथा उसका अपना ब्रेक था। लेकिन वैद्युत इंजन क्यों? इसलिए कि यह एकमात्र इस प्रकार की मोटर है, जिसके लिए आवश्यक ईंधन चन्द्रमा पर उपलब्ध है। असीमित मात्रा मे सूर्य यह ईंधन देता है। ऊपरी ढक्कन के अन्दर की ओर सौर बैटरी के पैनल लगे होते हैं। यह ढक्कन क्षैतिज स्थिति तक किसी भी कोण पर उठ सकता था। और इस प्रकार, वैद्युत ऊर्जा के रासायनिक स्रोत को आवेशित करने वाली धारा के बल को नियंत्रित किया जा सकता था।

चन्द्र-गाड़ी न केवल आगे व पीछे जा सकती थी, बल्कि वह मुड़ भी सकती थी: जिस समय एक ओर के पहिये चलते थे, तो दूसरी ओर के पहियों पर ब्रेक लग जाते थे। इस प्रकार विभिन्न कार्य-कौशल सम्भव थे। यह गाड़ी न तो किसी खाई मे गिरती थी, और न ही किसी चट्टान के सामने आ जाने पर रुक जाती थी। अनुमत कोण में वृद्धि होने पर, गाड़ी स्वयं रुक जाती थी।

अंतरिक्षीय निर्वात के कारण यंत्र-बाक्स को संमुद्रित करना पड़ा

तथा ताप में एकदम परिवर्तन—चन्द्र दिवस की 130° गर्मी से चन्द्र रात्रि की —170° शीत तक—के कारण ताप नियंत्रण का एक जटिल विन्यास बनाना पड़ा। चन्द्र दिवस में यह विन्यास उन उपकरणों से ऊष्मा दूर करता था जो वाक्स में लगाये गये थे, तथा रात्रि को उनमें भरी गैस को गर्म करता था।

चन्द्र-गाड़ी की आंखें थी—दूरदर्शन कैमरे। मार्ग को देखते हुए, ये सभी दृश्य अपने कर्मीदल तक प्रेषित करते थे। चन्द्र-गाड़ी के कमांडर, मंचालक तथा चालक व इंजीनियर सैकड़ों हजारों किलोमीटर की दूरी पर बैठे थे—पृथ्वी पर; सुदूर अंतरिक्षीय सम्पर्क के नियंत्रण केन्द्र में! हाँ, यहाँ से रेडियो की सहायता से कर्मीदल यान का नियंत्रण करते थे। यह कोई सरल कार्य नही था। कारण यह कि उस समय तक जब रेडियो संकेत चन्द्रमा तक जाता और चन्द्र-गाड़ी से उत्तर लाता था, तब तक गाड़ी कुछ मीटर आगे चली जाती थी।

चन्द्र-गाड़ी के आसपास की भूमि पर अभिविन्यास के चिह्न बहुत ही क्षीण थे। लेकिन फिर भी, कर्मीदल ने अपनी गाड़ी को एकदम निर्धारित मार्ग के अनुसार चलाया। अतः, "वर्षा सागर" की काफी लम्बी सैर करने के पश्चात् गाड़ी, स्टेशन "लूना-17" के अवतरण स्थल पर एकदम सही पहुँच गयी—और वह भी, वापिसी में नये मार्ग पर चल कर! चन्द्र-गाड़ी के चालक को किन यंत्रों की सहायता से इसमें सफलता प्राप्त हुई?

चन्द्रमा पर कम्पास की चुम्बकीय सुई किसी सहायता योग्य नहीं होती: चन्द्र का अपना कोई चुम्बकीय क्षेत्र नहीं है। लेकिन इसकी सतह पर आप सरलता से—तारों, सूर्य तथा पृथ्वी की सहायता से—अभि-विन्यास कर सकते हैं। चन्द्रमा के आकाश में बादल नहीं होते जो प्रदीप्त नभ पिंडों को देखने में कठिनाई उत्पन्न करें। खगोलीय संचालन के लिए "लूनाखोद-1" पर दो दूरदर्शन कैमरे—खगोलीय टेलीफोटोमीटर—लगाये गये थे। इनकी मदद से उपकरण, सूर्य तथा पृथ्वी को देख सकता था।

चन्द्रमा के नभ में इन विशाल प्रदीप्त पिंडों के पृथ्वी पर स्थित सुदुर अंतरिक्षीय सम्पर्क के नियंत्रण केंद्र में भेजे गये चित्रों की सहायता से, संचालक चन्द्र-गाड़ी की स्थिति व दिशा निर्धारित करता था।

स्वचलित गाड़ी के मुड़ने का कोण मार्गदर्शक जाइरोदर्शी द्वारा निर्धारित होता था। चन्द्र-गाड़ी के मुड़ने पर जाइरोदर्शी अपनी प्रारम्भिक अवस्था में रहता था, जबकि बाक्स—जिसमें वह रखा गया था—जाइरो-दर्शी के प्रति अपनी स्थिति परिवर्तित कर देता था।

स्वचलित गाड़ी द्वारा तय की गयी दूरी उसके पहियों के घूमने के चक्करों की गिनती से निश्चित होती थी; प्रत्येक पहिये पर विशेष सूचक लगे होते थे। यदि किसी स्थान पर गाड़ी फिसल जाती थी, तो एक नवां पहिया, जो स्वतंत्र था, घूमता था जिसके चक्करों की गिनती से तय की गयी दूरी निर्धारित हो जाती थी। कोण में होने वाले विचलन के बारे में कर्मीदल तक सूचना एक अन्य जाइरोदर्शी सूचक प्रेषित करता था—तथाकथित जाइरो-ऊर्ध्वाधर।

चन्द्र-गाड़ी में विभिन्न विशेष विषयों के अध्ययन के यंत्र लगे थे। इस गाड़ी ने अपने चारों ओर की स्थिति के दसियों चित्र पृथ्वी पर प्रेषित किये। उस पर लगे उपकरणों ने क्रमागत रूप से चन्द्रमा की मृदा की कठोरता, घनत्व तथा रासायनिक संरचना निश्चित की। विघटनाभिक समस्थानिकों (रेडियोएक्टिव आइसोटोप्स) से ढकी प्लेट ने चन्द्र-गाड़ी के पास की मृदा पर विकिरण किया और प्रत्येक रासायनिक तत्व ने विकिरण के प्रति अपने निजी "स्वर" में उत्तर दिया।

चन्द्र-गाड़ी पर लेसर प्रकाश परावर्तक भी लगा हुआ था। पृथ्वी से प्रेषित तथा पुनः पृथ्वी पर परावर्तित लेसर किरण के प्रकीर्णन के समय के आधार पर पृथ्वी से चन्द्रमा की यथातथ्य दूरी निश्चित की गयी।

चन्द्र-गाड़ी ने खगोलीय-भौतिकी का भी अध्ययन किया। गाड़ी पर

लगे एक्स-किरण दूरदर्शी के प्रेषित्र, शिराबिन्दु की दिशा में आमुख किये गये।

प्रथम स्वचलित प्रयोगशाला द्वारा चन्द्रमा का अभियान लगभग एक वर्ष तक जारी रहा। इस समय में वैज्ञानिकों ने चन्द्रमा के बारे में बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त किया। चन्द्र-गाड़ी के इंजीनियरों ने इन प्रयोगों के परिणामों को किस तरह इस्तेमाल किया यह उस समय स्पष्ट हुआ, जब 1972 के आरम्भ में स्पष्टता सागर में "लूनाखोद-2" ने अपने कदम रखे, जिसे चन्द्रमा तक स्टेशन "लूना-21" ने पहुंचाया था।

नयी चन्द्र-गाड़ी अधिक स्पष्टता से देख सकती थी। इंजीनियरों ने उसके दूरदर्शन कैमरे की स्थिति और ऊँची करके उसका दृश्य-क्षेत्र बढ़ा दिया था। इसके साथ चालक की स्क्रीन पर चित्रों के प्रकट होने की आवृति भी बढ़ गयी थी। गति भी दिखायी देने तथा अनुभव होने लगी —मानो चालक तथा 400 हजार किलोमीटर की दूरी का "मार्ग" केवल दूरदर्शी की स्क्रीन के कांच द्वारा पृथक किया गया हो। नयी चन्द्र-गाड़ी अधिक तेजी से चलती थी, चलती हुई ही मुड़ जाती थी तथा आदेशों का पालन स्वतंत्रता से करती थी।

अपने से पूर्व की चन्द्र-गाड़ी के विपरीत, "लूनाखोद-2" ने न केवल चन्द्र सागरों का बल्कि चन्द्र पर्वतों का भी अध्ययन किया। वैज्ञानिक उपकरणों में किये गये परिवर्तनों तथा परिशुद्धियों के फलस्वरूप भी इस चन्द्र-गाड़ी की कार्य क्षमता बढ़ गयी थी।

निस्संदेह, हम अभी तक पृथ्वी के यथार्थ उपग्रह के बारे में सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं कर सके हैं। लेकिन, जैसे कि महान भौगोलिक खोजों के बाद हमेशा बस्तियाँ बन जाती थीं और नयी भूमि पर विजय प्राप्त की जाती थी, उसी प्रकार चन्द्रमा के अध्ययन के फलस्वरूप उसकी विपुलता का लाभ पृथ्वी के लोगों तक अवश्य पहुँचेगा।
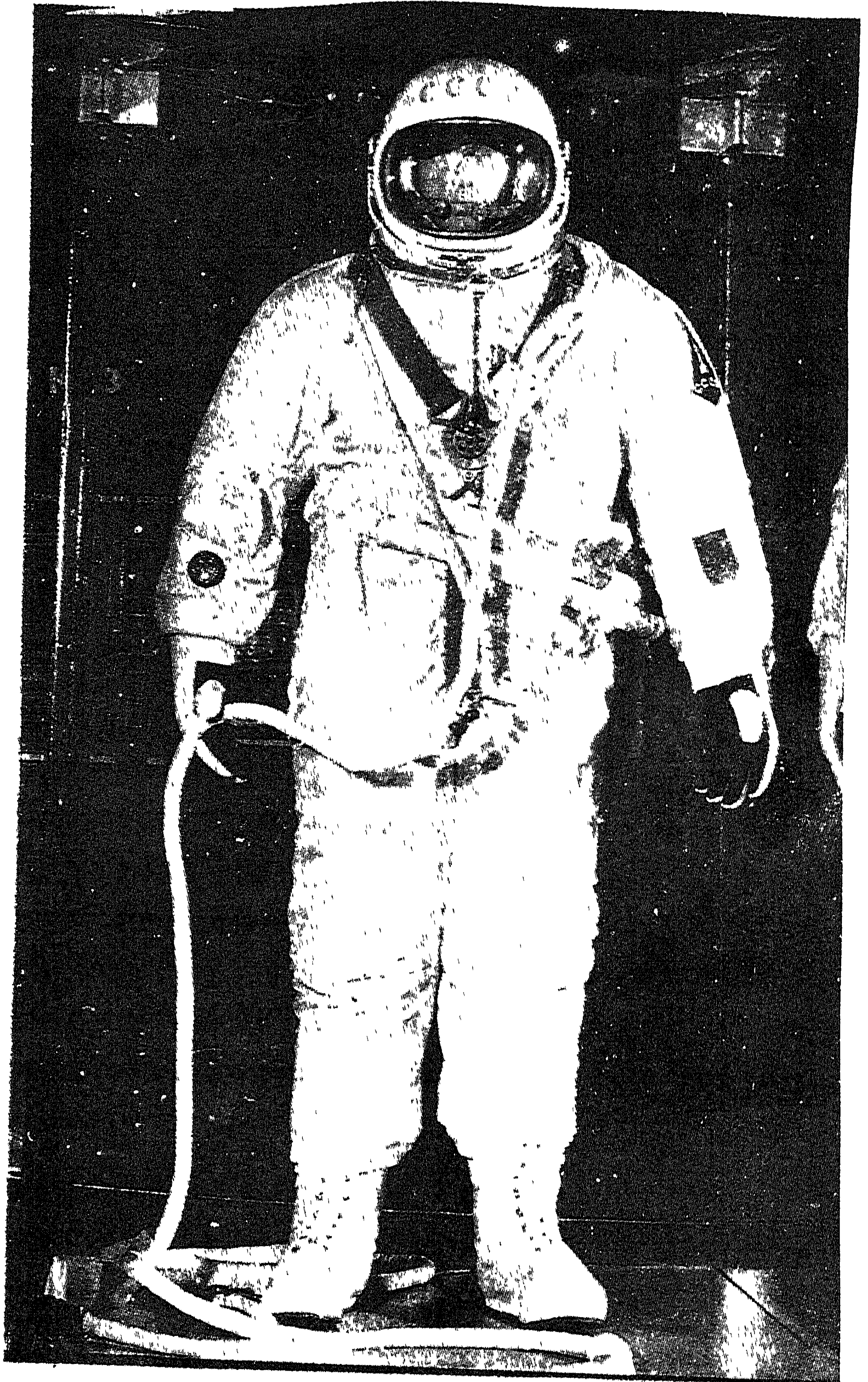
मंगल ग्रह पर अतिथि

अभी हाल ही तक मंगल ग्रह के बारे में हमारी कल्पना खगोलीय अन्वेषण पर ही आधारित थी। लेकिन अब अंतरिक्षीय तकनीक खगोलविदों की सहायता करने लगी है।

मंगल की दिशा में सर्वप्रथम यान—सोवियत स्टेशन "मार्स-1" था। 1962 में इस उपकरण ने सुदूर अंतरिक्षीय रेडियो-संचार का रेकार्ड स्थापित किया। लेकिन यह अपने ध्येय में असफल रहा।

7वें दशक के अंत में छोड़े गये अमरीकी उपकरणों "मैरिनर"—4, 6 तथा 7 ने मंगल ग्रह के समीप उड़ान भर कर बहुत नजदीकी से उसके चित्र लिये। लेकिन मंगल ग्रह के समीप ये उपकरण अधिक देर तक नहीं रहे, इसलिए ये अधिक विस्तृत ज्ञान एकत्र नही कर सके।

इस समय तक पृथ्वी के उदाहरण ने जैसा कि सिद्ध कर दिया था—किसी ग्रह का "सामान्य" अध्ययन उसके कृत्रिम स्पुतनिकों की कक्षा से करना अधिक सरल होता है। ये कृत्रिम स्पुतनिक मंगल ग्रह पर भी प्रकट हो गये। 1971 में मंगल ग्रह के चारों ओर अमरीकी उपकरण "मैरिनर-9" तथा सोवियत स्टेशन "मार्स-2" तथा "मार्स-3" उड़ान भरने लगे।

स्टेशन "मार्स-2" की मंगल ग्रह तक उड़ान के समय एक कैप्स्यूल पृथक कर दिया गया था। यह सोवियत संघ का एक राजकीय चिह्न मंगल की सतह तक ले गया। स्वयं स्टेशन कृत्रिम स्पुतनिक की कक्षा

स्टेशन "लूना-*21*" के वातावरण का आरेख

1. चन्द्रमा की सतह के समीप आना 2. ब्रेक-इंजन को कार्यगति में लाना 3. मृदु अवतरण के लिए इंजनों को चालू करना 4. "लूनाखोद-2" स्टेशन से अलग हो रहा है

परिकलन आरम्भ हुए। शुद्धिकरण के उपरान्त स्टेशन प्रक्षेप-पथ में प्रवेश करना चाहिए था, जो ग्रह की सतह से 1500 कि० मी० की दूरी पर था। इसे ध्यान में रख कर मशीन ने यह निश्चित कर लिया कि इंजन यंत्र का तुंड किस ओर होना चाहिए। और, उसने अभिविन्यास के सूक्ष्मइंजनों को आदेश दिया कि वे स्टेशन को तदनुरूप दिशा दें। इसी के साथ इसके मस्तिष्क ने कार्य-समय यंत्र को आदेश दिया कि वह कब तथा कितनी देर के लिए मुख्य इंजन को चालू करे। निर्धारित क्षण पर तुंड से निष्कासित गैसों के प्रवाह ने स्टेशन को एक नये प्रक्षेप-पथ में धकेल दिया। सूर्य तथा कैनोपस ने यह बताया कि किस ओर मुड़ा जाये ताकि ऐन्टेना पृथ्वी की ओर आमुख हो जाये।

शुद्धिकरण की प्रक्रिया एक घंटे से अधिक समय तक चालू रही। इस समय स्टेशन के साथ सम्पर्क कट गया था। प्रेषित्र के पुनः कार्य आरंभ करने के बाद भी पृथ्वी को तुरंत उसके संकेत सुनायी नहीं दिये : रेडियो संकेत को मंगल ग्रह से पृथ्वी पर स्थित सुदूर अंतरिक्षीय सम्पर्क केन्द्र के ऐन्टेनाओं तक पहुँचने में पूरे 8 मिनट लगे। यही कारण था कि स्टेशन का नियंत्रण, अन्तरग्रहीय उड़ान के अन्तिम चरण के समय, स्वयं स्टेशन के "हाथों" सौंप दिया गया था।

प्रक्षेप-पथ के शुद्धिकरण के एकदम बाद ही "मार्स-3" से अवतरण उपकरण पृथक हो गया। कुछ समय तक यह तथा स्टेशन साथ-साथ उड़ान भरते रहे। इसके बाद, उपकरण को उसके इंजन ने ग्रह के साथ मिलन के लिये प्रक्षेप-पथ में डाल दिया। साढ़े चार घंटों के बाद शंकुनुमा आवरण ने—जिसने अवतरण उपकरण को आगे की ओर से ढक रखा था—ग्रह के गैसीय अभ्रों में प्रवेश किया।

मंगल ग्रह का वायुमंडल बहुत ही विरल है, तथा उसकी ऊपरी परतों में इसका घनत्व बहुत ही नगण्य है। इसीलिए चाल की गति अत्यधिक होने के बावजूद, उपकरण ने कुछ समय तक प्रतिरोध महसूस नहीं किया।

लेकिन जैसे-जैसे उपकरण की ऊंचाई कम होती गयी, वैसे-वैसे वायुमडल का घनत्व बढ़ता गया, तथा रक्षी शंकु पर उसकी पकड़ दृढ़ होती गयी। शीघ्र ही, वायुमंडल के प्रतिरोध ने उपकरण की अवतरण गति को धीमा कर दिया तथा अतिभार कम होने लगा। अतिभार के प्रेषित्र के आदेश पर पाउडर अभिक्रिया इंजन ने पैराशूट खोल दिया। एक छोटे क्यूपोला (छतरी) के बाद, एक बड़ा क्यूपोला प्रकट हुआ। अवतरण की चाल कम हो गयी; लेकिन, अभी भी यह चाल ध्वनि की चाल से अधिक थी। अपना कार्य समाप्त करने के उपरान्त यह छोटा पैराशूट पृथक हो गया तथा छोटे अभिक्रिया इंजन ने इसे एक ओर फेंक दिया। मुख्य पैराशूट एकदम से नहीं खुला। इस प्रकार, यह मंगल ग्रह की "वायु" की तेजी द्वारा फटने से बचा।

उपकरण की चाल और भी धीमी हो गयी, तथा कार्यक्रम-समय-यंत्र ने पैराशूट को पूर्णतया खोल दिया। रक्षी शंकु पृथक होकर नीचे गिर गया, तथा उपकरण पर मृदु अवतरण के रेडियो ऊंचाई-मापी यंत्र के ऐन्टेना खुल गये।

ग्रह की सतह समीप आती गयी। जब यह दूरी 30 मी० से कम रह गयी, तो एक अन्य अभिक्रिया इंजन ने मुख्य पैराशूट को एक ओर फेंक दिया ताकि इतना बड़ा कैनवेस उपकरण पर गिर कर उसे ढक न ले।

इसी बीच कार्यक्रम-समय-यंत्र ने मृदु अवतरण के इंजन चालू कर दिये। अन्तिम ब्रेक लगा। निर्धारित समय तक कार्य करने के पश्चात्, इंजन एक ओर उड़ गया। एक क्षण और बीता, तथा...उपकरण ने मंगल की सतह को स्पर्श किया। कार्यक्रम-समय-यंत्र ने अपना कार्य जारी रखा। इसके आदेश पर मानव के इतिहास में प्रथम बार अंतरिक्षीय उपकरण ने "लाल ग्रह" से संकेत प्रेषित किये।

अन्तरग्रहीय स्टेशन के निर्माता जानते थे कि मंगल ग्रह पर रेत के तूफान उठते हैं। इसलिए उन्होंने उपकरण की इनसे रक्षा के प्रयत्न किये थे। लेकिन इस बात का कि सितम्बर के महीने में मंगल ग्रह पर असाधारण बल का तूफान आयेगा, जो कई महीनों तक सम्पूर्ण ग्रह को रेत की चादर पहना देगा, पूर्व ज्ञान होना असम्भव था। ऐसा लगा मानो मंगल ग्रह ने युद्ध के देवता को स्मरण किया हो, जिसे उसने अपना नाम—(मार्स)—दे दिया था। ग्रह की सतह पर वायु की चाल तूफान की चाल के समान हो गयी। हो सकता है, मंगल के साथ सम्पर्क इतनी शीघ्रता से टूटने का कारण यही रहा हो।

लेकिन इस समय अन्तरग्रहीय स्टेशन "मार्स-3" कहां था ? अपने मुसाफिर—अवतरण उपकरण—से विलग होकर, वह मंगल के अधिक समीप आ रहा था। परन्तु इसका मार्ग ग्रह से कुछ हट कर था।

अब ब्रेक लगाने की तैयारी आरम्भ हुई। एक बार फिर कम्प्यूटर ने स्टेशन को घुमाया और निर्धारित समय पर इंजन चालू कर दिया। ग्रह की सरलतापूर्वक परिक्रमा करके "मार्स-3" उसका नया स्पुतनिक बन गया।

स्टेशन ने अपने अवतरण उपकरण के मृदु अवतरण स्थल के ऊपर से जब उड़ान भरी, तो उसे उसकी "आवाज" सुनायी दी। वह इतनी अधिक क्षीण थी कि दो ग्रहों के बीच की विशाल दूरी को पार करने में असमर्थ थी। स्टेशन के शक्तिशाली प्रेषित्रों ने उसे पृथ्वी तक "पहुँचाया"।

वैज्ञानिकों ने "मार्स-2" तथा "मार्स-3" को अनेक शोधकार्यों के लिए उपयुक्त बना दिया था। स्पुतनिकों पर विविध प्रकार के वैज्ञानिक यंत्र लगाये गये थे। इनमें से एक यंत्र मंगल का तापीय चित्र—ग्रह की सतह पर ताप का विस्तारण—बनाता था, तो दूसरे यंत्र उसके वायुमंडल

का घनत्व एवं संरचना मापते थे, और अन्य कुछ यंत्र ग्रह की सतह की विशेषता ज्ञात करते थे।

स्पुतनिकों पर विभिन्न फोटोकैमरे भी लगाये गये थे। कुछ कैमरे सतह के बड़े भागों की तस्वीर ले रहे थे, तो कुछ अन्य कैमरे—बारीकियों से चित्र उतार रहे थे। "मार्स-2" और "मार्स-3" स्टेशनों ने विभिन्न दूरियों से तथा विभिन्न प्रकाशकीय फिल्टरों को प्रयुक्त करके, मंगल ग्रह के चित्र खींचे। फिल्म का "डेवेलपिंग", स्टेशन पर ही हो जाता था, और फिर दूरदर्शन कैमरों की सहायता से तस्वीर को पृथ्वी पर प्रेषित कर दिया जाता था।

इन चित्रां ने मंगल के बारे में नयी जानकारी दी। अविदित विशाल ज्वालामुखियों ने अत्यधिक आश्चर्य उत्पन्न किया (इनमें से एक ज्वाला-मुखी—निक्स ऑलिम्पिक—की ऊँचाई लगभग 20 कि०मी० तथा आधार का व्यास लगभग 500 कि०मी० था)। इसी प्रकार आश्चर्यजनक वे खाइयां थीं, जिनकी तुलना में कॉलोरैडो घाटी एक खरोंच के समान लगती थी; फिर वे बृहत रेगिस्तान थे, जो मेज के समान चिकने थे।

लेकिन यह सब ग्रह-अध्ययनकर्ताओं के लिए उतना आश्चर्यजनक नहीं था। उनका ध्यान तो उन विचित्र दरारों ने आकृष्ट किया, जो मंगल ग्रह की पहाड़ियों तथा पर्वतों में थीं।

1973 की गर्मियों में एक साथ चार सोवियत स्टेशन मंगल की ओर रवाना हुए। "मार्स-4" तथा "मार्स-5" नये वर्ष 1974 में ग्रह के समीप पहुंचे। आरम्भ में "मार्स-4" ने ग्रह की सतह से 2200 कि०मी० की दूरी से पृथ्वी पर चित्र प्रेषित किये; इसके दो दिन पश्चात्, "मार्स-5" ने ग्रह के चारों ओर कक्षा में परिक्रमा की।

इसके साथ ही एक अमरीकी यान "वाइकिंग" मंगल पर भेजा गया जिससे प्राप्त चित्रों व सूचनाओं ने बताया कि मंगल पर जीवन नहीं है।
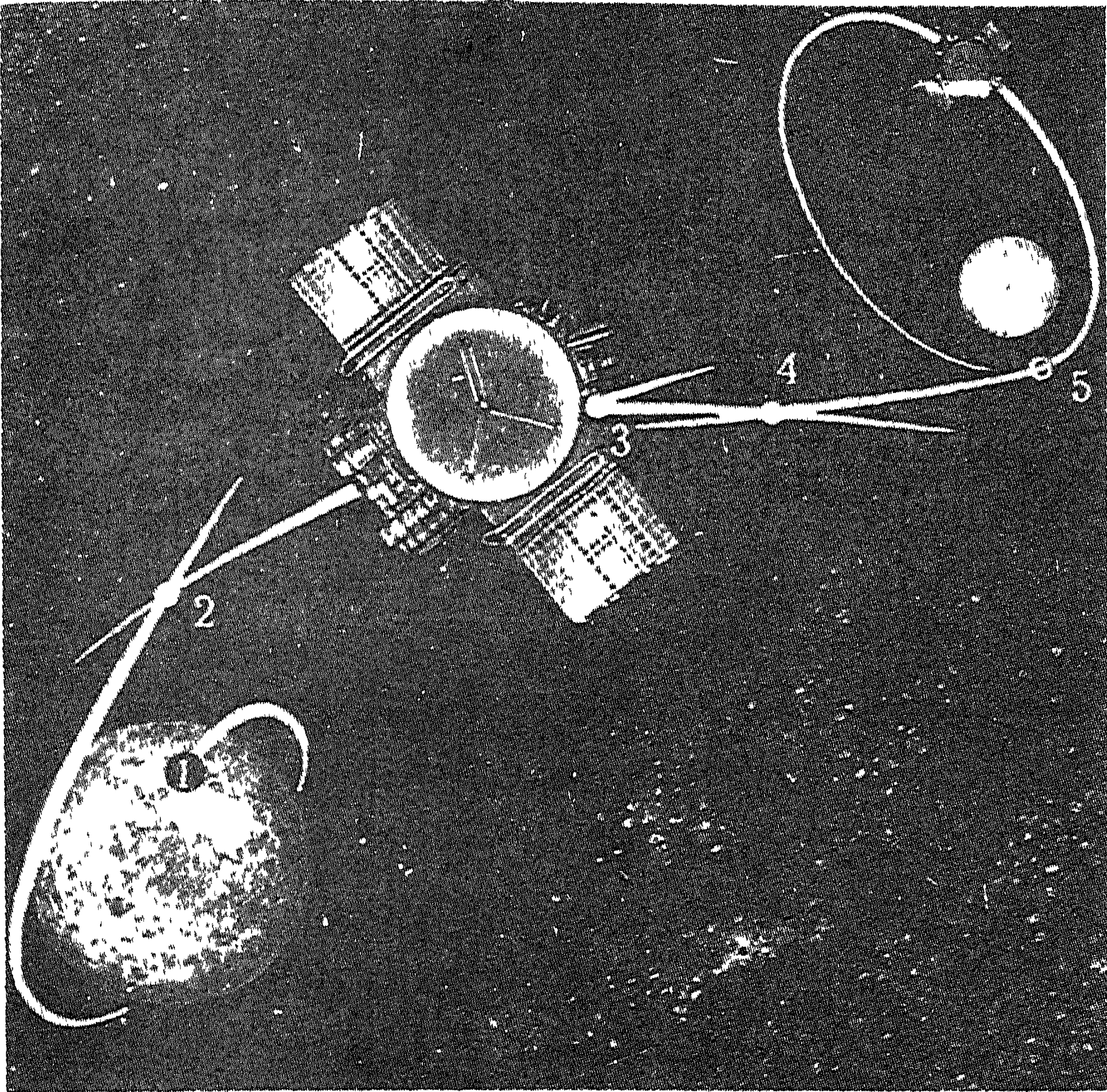
स्वचलित अंतरग्रहीय स्टेशन "मार्स-5" की उड़ान का मार्ग

1. स्टार्ट 2.4. प्रक्षेप-पथ 5. स्टेशन को मंगल ग्रह के कृत्रिम उपग्रह पर उतारने के लिए ब्रेक को लगाना

इस निष्कर्ष ने जीव वैज्ञानिकों को परास्त कर दिया। लेकिन फिर भी उन्होंने आशा नहीं छोड़ी और दूसरे "वाइकिंग" के अवतरण की प्रतीक्षा की। यह "वाइकिंग" प्रथम यान की अपेक्षा ग्रह की दूसरी ओर— प्रथम अवतरण स्थल से चंद हजार किलोमीटर की दूरी पर—उतरा।

स्पुतनिक की कक्षा से "यूटोपिया" का क्षेत्र, प्रथम उपकरण के अवतरण

के स्थल से बहुत अधिक भिन्न था। लेकिन सभी लोगों को पुनः आश्चर्य हुआ क्योंकि अभी भी पहले जैसा ही चित्र देखने को मिला। पिछले चित्रों की भांति जीवनरहित लाल मैदान, पत्थरों का भण्डार, वही गुलाबी धूल तथा वैसा ही आकाश। यदि आप पुराने व अभी-अभी लिये गये चित्र को पास-पास रखें, तो आप इनमें भेद नहीं कर सकेंगे। लेकिन इससे भी अधिक अद्भुत बात यह थी कि वैज्ञानिक उपकरणों ने भी समान आँकड़े व्यक्त किये।

तो भी, आइए विचार करें—क्या मंगल ग्रह पर जीवन है ? "वाइकिंग" कार्यक्रम के निदेशकों ने इस प्रश्न का निम्न उत्तर दिया : "हम नहीं जानते कि मंगल ग्रह पर जीवन है, लेकिन हमारे पास ऐसे तथ्य भी नहीं हैं कि हम इस सम्भावना को अस्वीकार कर दें।" प्रसिद्ध खगोलविद् जीव-वैज्ञानिक प्रोफेसर क० सागन ने अधिक स्पष्ट शब्दों में कहा : "अपने स्वरूप, रासायनिक संरचना तथा व्यवहार के आधार पर जीवन के सबसे बृहत रूप भी इतने असामान्य एवं विचित्र हो सकते हैं कि इन्हें जीवन का स्वरूप मानना असम्भव हो सकता है। 'वाइकिंग' के प्रयोग नकारात्मक हो सकते हैं; और हो सकता है कि इस समय मंगल ग्रह के जीव ग्रह पर उतरने वाले यानों की रंगीनी का आनन्द प्रसन्नता से ले रहे हों !"

इसके साथ ही "वाइकिंग" की परिकल्पना ने काफी अधिक आधार बना लिये। उदाहरणस्वरूप, उन्हीं क० सागन ने मंगल ग्रह पर जीवन के पृथक-पृथक क्षेत्रों की सम्भावना को नहीं ठुकराया। ग्रह पर जल की बहुत अधिक मात्रा का विद्यमान होना इस परिकल्पना का समर्थन करता है। एक स्पुतनिक के आंकड़ों ने सिद्ध किया कि मंगल की उत्तरी ध्रुवीय टोपी वस्तुतः सामान्य बर्फ की लगभग एक कि० मी० मोटी परत से ढकी हुई है।

प्रसिद्ध सोवियत ग्रह-वैज्ञानिक व० ई० मोरोज ने कहा : "वाइकिंग'

वैज्ञानिक प्रयोग के मुख्य आधार तीन जीवविज्ञानी प्रयोग थे, जो इस मूल प्रश्न का उत्तर देने वाले थे : 'क्या मंगल पर जीवन है ?' लेकिन इन प्रयोगों के परिणाम ने वैज्ञानिकों के समक्ष एक दीवार खड़ी कर दी। इन प्रयोगों को सकारात्मक या नकारात्मक उत्तर नही माना जा सकता।" लेकिन अमरीकी वैज्ञानिकों को उनके परिश्रम का श्रेय देते हुए सोवियत वैज्ञानिक ने उनके द्वारा प्रस्तुत किये गये मंगल ग्रह के क्षेत्रों की भूविज्ञानी विशेषताओं, वायुमंडल की ऊर्ध्वाधर संरचना, मंगल की भूमि की यांत्रिकीय विशेषताओ और उसके वायुमंडल की अवस्था सम्बंधी आंकड़ों एवं तथ्यों की बहुत प्रशंसा की।

अन्तिम स्टेशन—वीनस

वीनस के वैज्ञानिक अध्ययन का इतिहास दो महान नामों से आरम्भ होता है : गैलिली तथा लोमोनोसोव। गैलिली ने 1610 में सर्वप्रथम इस ग्रह की कलाओं की खोज की; लोमोनोसोव ने 1761 में इस ग्रह पर वायुमंडल की उपस्थिति सिद्ध की। लोमोनोसोव की खोज के पश्चात् लगभग दो शताब्दियों तक वीनस (शुक्र ग्रह) सम्बन्धी ज्ञान का विकास बहुत धीरे-धीरे हुआ। और, वैज्ञानिक-तकनीकी क्रांति का युग आरम्भ हुआ—बीसवीं शताब्दी आरम्भ हुई।

शुक्र ग्रह पर प्रेषित की गयी तथा उससे परावर्तित रेडियो तरंगों की सहायता से ग्रह के घूर्णन की दिशा निर्धारित हुई तथा उसके दिवस की अवधि भी ज्ञात हुई। शुक्र ग्रह का एक वर्ष दो दिन-रातों से बनता है; और, प्रत्येक दिन-रात पृथ्वी के 118 दिन-रात के बराबर होती है। इस ग्रह पर कोई मौसम भी नहीं होते।

ग्रह के ऊष्मीय विकिरण का पृथ्वी से अध्ययन करने के फलस्वरूप, वीनस को हर समय घेरे रहने वाले अभ्रों के ऊपरी स्तरों का तापमान

तथा उनकी रासायनिक संरचना सम्बंधी ज्ञान प्राप्त हुआ। इसके वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड गैस मिली, लेकिन वैज्ञानिकों के मतानुसार इसकी सान्द्रता अधिक नहीं थी और ग्रह का गैसीय आवरण मुख्यत: नाइट्रोजन से बना हुआ है। रेडियो-टेलीस्कोप की सहायता से वीनस के अपने रेडियो-विकिरण का भी अध्ययन किया गया। ज्ञात हुआ कि ग्रह की सतह काफी अधिक गर्म है। लेकिन उसके तापमान के बारे में वैज्ञानिकों में सहमति नहीं थी। दाब के प्रति भी किसी निश्चित निर्णय पर नहीं पहुंचा जा सका था।

अंतरिक्षीय युग को आरम्भ हुए चार वर्ष बीत चुके थे—और, अब वीनस की दीर्घकालीन यात्रा पर एक सोवियत स्वचलित स्टेशन रवाना हुआ। 1965 में इसी के पदचिह्नों पर अन्य दो उपकरण भेजे गये। इनमें से एक—"वीनस-3"—ग्रह तक पहुँचा। अंतरिक्ष विज्ञान के इतिहास में, सर्वप्रथम अन्तरग्रहीय उड़ान सफल हुई।

प्राप्त होने वाले अनुभव के आधार पर, सोवियत इंजीनियरों एवं वैज्ञानिकों ने एक वर्ष के अन्दर ही वीनस के वायुमंडल के अध्ययन से सम्बंधित प्रयोग किया। यह प्रयोग "वीनस-4" द्वारा पूर्ण किया गया। इसके अवतरण उपकरण ने, द्वितीय अंतरिक्षीय गति के साथ वीनस के वायुमंडल में प्रवेश करके, पैराशूट द्वारा अपना अवतरण जारी रखा। इस उड़ान के पश्चात् यह स्पष्ट हो गया कि ग्रह का घना आवरण लगभग पूर्णतया कार्बन डाइऑक्साइड गैस से बना है। सर्वप्रथम, प्रत्यक्ष रूप से वायुमंडल के ताप, दाब व घनत्व को मापा गया।

1969 में एक साथ ही दो स्वचलित स्टेशनों "वीनस-5 और 6" ने ग्रह के विभिन्न भागों में वायुमंडल का गहराई से अध्ययन किया। कार्बन डाइऑक्साइड के अतिरिक्त नाइट्रोजन, जलीय वाष्प एवं ऑक्सीजन की नगण्य मात्रा भी पायी गयी। स्टेशनों ने सतह से लगभग 20 कि० मी० की ऊंचाई पर परिमाप लिये। इस प्रकार इकट्ठे किये गये आंकड़े

"वीनस-4" और अमरीकी उपकरण "मैरीनर-5" द्वारा एकत्रित आँकड़ो से पूर्णतः मेल खाते थे। अमरीकी यान ने ग्रह के समीप उड़ान भर कर, रेडियो-प्रकाश विधि से ग्रह का अध्ययन किया। उपकरण जब ग्रह से दूर हो जाता था, तो उसके प्रेषित्र द्वारा पृथ्वी पर भेजी जाने वाली रेडियो तरंगों के गुणों में बहुत अन्तर उत्पन्न हो जाता था। इसका कारण यह था कि ग्रह एवं "मैरीनर" की इस पारस्परिक स्थिति में संकेत, वायुमंडल की गैसों में से गुजरते थे।

लेकिन अभी भी ग्रह की सतह अप्राप्य थी। यही स्थिति 15 दिसम्बर 1970 से पहले तक बनी रही। 15 दिसम्वर 1970 को अज्ञात कठोर सतह पर सोवियत स्टेशन "वीनस-7" का अवतरण उपकरण उतरा।

इसी कोटि के अन्य स्टेशनों की भाँति स्टेशन "वीनस-7" भी दो मुख्य भागों से बना हुआ था—कक्षीय विभाग एवं अवतरण उपकरण। कक्षीय विभाग—एक विशाल धातु से बना सिलिंडर था, जिसके अन्दर स्टेशन की उड़ान के नियंत्रण यन्त्र, रेडियोग्राही, प्रेषित्र तथा अन्य उपकरण लगे थे। पृथ्वी के साथ सम्पर्क स्थापित करने के लिए स्टेशन पर एक बड़ी-सी छतरी खुल जाती थी—यह छतरी एक ऐन्टेना था।

कक्षीय विभाग में परिशुद्धि इंजन यंत्र लगा था। इसके जरिये स्टेशन को उसके लक्ष्य की ओर आमुख किया जा सकता था। इसी कक्ष के साथ अवतरण उपकरण लगा हुआ था।

स्टेशन के उपकरण एवं यंत्र अपनी वद्युत ऊर्जा उस बैटरी से प्राप्त करते थे, जो कक्षीय विभाग में लगी थी। ऊर्जा के संचय की पूर्ति सौर बैटरियाँ करती थीं।

लगभग सम्पूर्ण उड़ान के समय स्टेशन सूर्य की ओर अभिविन्यस्त था। प्रकाशीय प्रेषित्र अपने दृश्य क्षेत्र में हर समय सूर्य एवं पृथ्वी को, या सूर्य और एक अन्य विशेष रूप से निर्धारित तारे को, रखते थे।
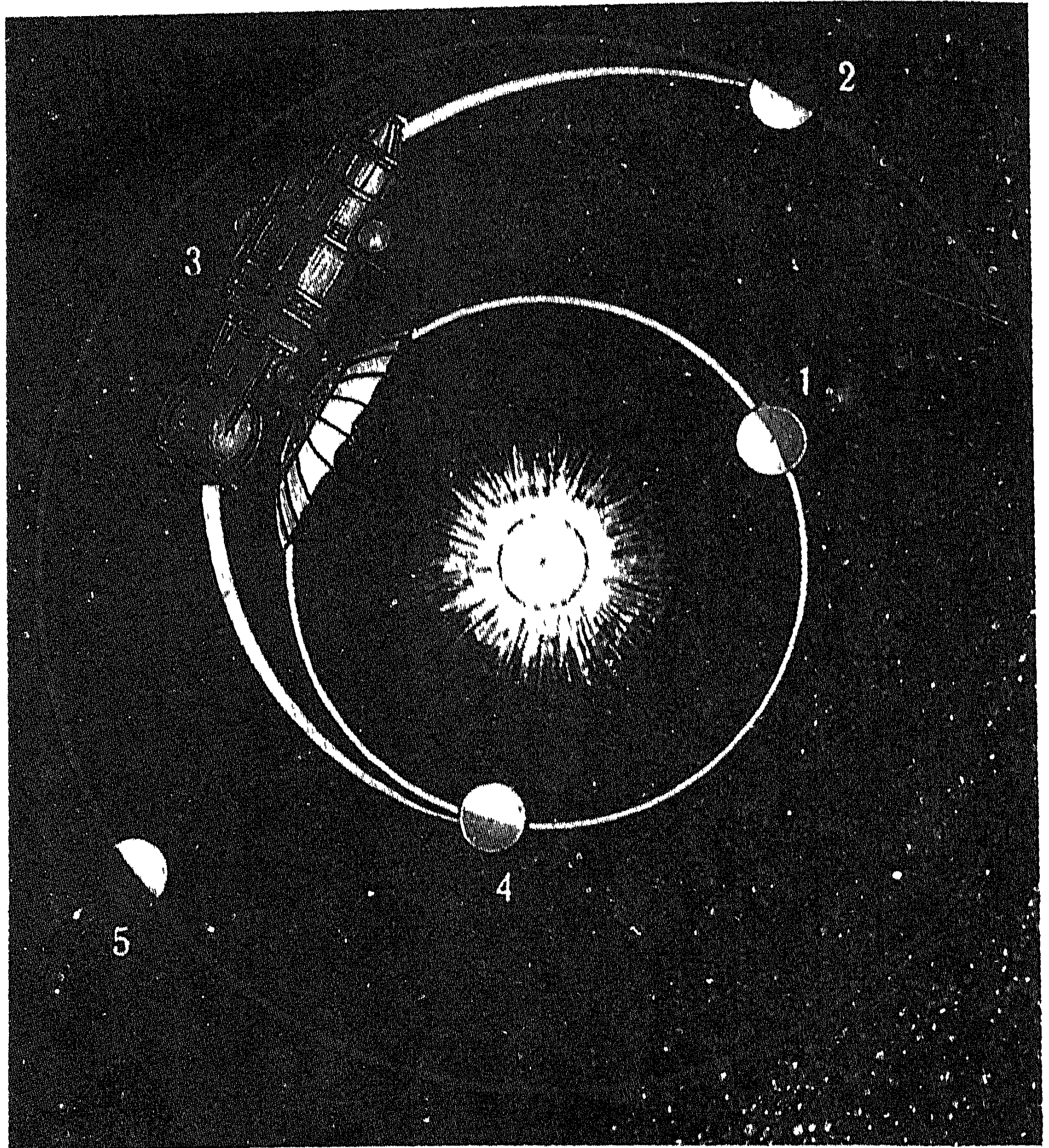
स्वचलित स्टेशन "वीनस-5" की उड़ान का मार्ग

12.वीनस ग्रह व पृथ्वी की स्टेशन के स्टार्ट होने के समय स्थिति 3. प्रक्षेप-पथ 4 वीनस की स्टेशन के उसकी ओर उड़ते समय स्थिति 5. पृथ्वी की स्टेशन के वीनस की ओर उडते समय स्थिति

प्रेषित्रों के आदेश पर अभिविन्यास के स्वचलित यंत्र गैसीय-अभिक्रिया सूक्ष्म इंजन चालू व बंद करते थे।

कक्षीय विभाग का मुख्य कार्य था—अवतरण उपकरण को ग्रह तक

पहुँचाना। बाद की उड़ानों में यह कार्य अधिक सरलता से किया जाने लगा। इसीलिए नये स्टेशनों के डिजाइनरों ने अधिक ध्यान अवतरण उपकरण पर दिया। इसकी आकृति एक विशाल अण्डे जैसी थी। यदि हम उसे बीच में से काटते तो अण्डे का "पीत"—गोलाकार—यन्त्र कक्ष देखते। इस कक्ष के ऊपर एक अन्य कक्ष था—पैराशूट कक्ष। इसी में ऐन्टेना रखा गया था।

वायुमंडल के साथ टकराव होने पर उपकरण का गुरुत्वीय बल एकदम बढ़ जाता था—प्रत्येक पेच, प्रत्येक यंत्र का भार पृथ्वी पर उसके भार की तुलना में 300-350 गुना अधिक हो जाता था। उपकरण के समक्ष एक तथाकथित चोट करने वाली तरंग आ गयी। इसके तथा उपकरण के बीच का तापमान लगभग एकदम 11,000° तक पहुँच गया। लेकिन ऊष्मारक्षी पदार्थ की मोटी परत और ताप नियंत्रण विन्यास ने उपकरण की रक्षा की। यंत्र विभाग में तापमान सामान्य रहा।

वायुमंडल ने गति को तीव्रता से धीमा करना आरम्भ किया। शीघ्र ही उपकरण का अवतरण आरम्भ हुआ। परिचित 20 कि० मी० की दूरी तय की गयी। अब उसके आगे सब कुछ अज्ञात था। तापमान बढ़ता ही जा रहा था : 400°, 450°, तथा अंत में 475°। एक बार पुनः 475°; और, एक मिनट के पश्चात् भी वही संख्या। तापमान का बढ़ना बंद हो गया। इसी के साथ, ग्रह की तुलना में उपकरण की गति—जो यान के प्रेषित्र के आवर्ती परिवर्तन के आधार पर मापी गयी थी—शून्य हो गयी। इसका केवल एक ही अर्थ था—उपकरण वीनस की सतह पर उतर चुका था। तापमान लगभग 500°, तथा दाॅब लगभग 100 वायुमंडल के बराबर था। इस प्रकार की भट्ठी में सामान्य इस्पात का प्रगलन हो जाता है। लेकिन ऊष्मरोधी ऐलाॅयों से बनी उपकरण की बाॅडी ने ग्रह के गर्म आगोश को सहन कर लिया।

अभी तक वीनस के सभी अध्ययन उपकरणों ने ग्रह के रात्रि भाग में

अवतरण किया था। नये सोवियत अन्तरग्रहीय स्टेशन "वीनस-8" के अवतरण उपकरण ने वीनस ग्रह के प्रकाशमान भाग पर कदम रखा। लेकिन उपकरण का यह दिवसीय अवतरण, रात्रि भाग में किये गये गत अवतरणों की अपेक्षा अधिक जटिल था।

पृथ्वी एवं अंतरिक्ष-यान के बीच रेडियो सम्पर्क की आशा, सर्वप्रथम उनके बीच की दूरी पर निर्भर करती है। इसलिए स्टेशन के लिए आवश्यक था कि वह वीनस पर उस समय से पहले पहुँचे, जब ग्रह की पृथ्वी से दूरी अधिक हो जाये। वीनस की कक्षा—पृथ्वी की कक्षा की तुलना मे—सूर्य के चूकि अधिक समीप है, इसलिए इन ग्रहों के बीच परस्पर दूरी सबसे कम उस समय होती है, जब ये सूर्य के एक ओर होते हैं। और इस समय हमारी ओर वीनस का भाग पृथ्वी पर स्थित मानव को दिखायी नही देता है। अधिकतम समीपता प्राप्त करने के पश्चात् ये ग्रह जब दूर होने लगते हैं, तो पृथ्वी से वीनस के एक भाग को थोड़ा-सा देखा जा सकता है—जो एक नन्हे-से प्रदीप्त क्रिसेन्ट के जैसा लगता है। इसी क्रिसेन्ट भाग में उपकरण का अवतरण होना था।

वीनस के प्रदीप्त भाग में अवतरण की कठिनाइयाँ यहीं समाप्त नहीं होतीं। उड़ान की समाप्ति वीनस के वायुमंडल में एक तीखी गिरावट द्वारा हुई—उपकरण, सम्भव है, इस प्रकार उत्पन्न होने वाले गुरुत्वीय बल को सहन न कर पाता; वह बहुत अधिक टेढ़े प्रक्षेप-पथ पर उड़ान करते हुए ग्रह के समीप से गुजर जा सकता था। इसका अर्थ यह हुआ कि उपकरण को ग्रह के समीप इस प्रकार आना चाहिए कि वायुमंडल में उसके प्रवेश का कोण निर्धारित कोण से न तो अधिक और न ही कम रहे। यही कारण था कि अवतरण स्थल सभी अन्य दृष्टिकोणों से उत्तम —वीनस के प्रदीप्त भाग पर एक लघु "धब्बा-सा"—था, और पृथ्वी से कम दिखायी देता था।

इस लक्ष्य पर उतरना बहुत ही कठिन कार्य था। और अब अंत-

रिक्षीय "तीर" की सहायता, "तीर" और "लक्ष्य" के बीच करोड़ों कि० मी० की दूरी ने की—जिसे हम अभी तक रुकावट मानते आये थे ! इस विशाल दूरी की सहायता से हम लक्ष्य की ओर जाते हुए स्टेशन की गति की दिशा में परिशुद्धि कर सकते हैं। सच है कि प्रक्षेप-पथ को परिशुद्ध करने के लिए यह ज्ञात होना आवश्यक है कि अवतरण के समय लक्ष्य-ग्रह की स्थिति क्या होगी। खगोलविदों ने वीनस और स्टेशन के मिलन के समय होने वाली वीनस की स्थिति निर्धारित की। लेकिन फिर भी अचूक रूप से सही अवतरण के लिए परिकलन आवश्यक थे। ये परिकलन उड़ान के समय पृथ्वी से वीनस की क्रमबद्ध रेडियोस्थिति द्वारा प्राप्त किये गये।

प्रक्षेप विशेषज्ञों ने इस कठिन कार्य को सफलतापूर्वक पूरा किया।

स्टेशन "वीनस-8" का अवतरण उपकरण, निर्धारित स्थल पर एकदम सही उतरा।

स्वचलित प्रयोगशाला का कार्य पैराशूट द्वारा अवतरण के समय ही आरम्भ हो गया था। वीनस के प्रदीप्त भाग पर सर्वप्रथम ताप व दाब मापे गये। प्रतीत हुआ कि रात्रि भाग की भाँति, इस भाग पर भी ये परिमाप उतनी ही तीव्रता से परिवर्तित होते हैं।

हमारी दृष्टि से, वीनस को हमेशा छिपाने वाले अभ्रों के आवरण ने काफी समय से इस ग्रह को सौर-विन्यास का सर्वाधिक रहस्यपूर्ण ग्रह बना रखा है। लेकिन वैज्ञानिकों की रुचि वीनस के अभ्रों में भी उतनी ही है, जितनी कि अभ्रों के नीचे छिपे ग्रह में। और, इसके विशेष कारण हैं।

सूर्य के समीप स्थित वीनस ग्रह इतना अधिक लाल-तप्त है, कि उस पर जिंक एवं लेड की विद्यमानता केवल द्रवित अवस्था में सम्भव है। इतने अधिक ताप एवं दाब पर ग्रह की सतह पर जीवन असम्भव है। लेकिन बहुत अधिक ऊँचाई पर स्थित अभ्रों पर स्थिति दूसरी है। यहां

दाब तथा ताप दोनों ही कम हैं, लगभग वैसे ही जैसे कि पृथ्वी पर। अत-एव, सम्भवतः अभ्रों की परत ही जीवन का पालना व पालक हो ?

पहले बताइए कि ये अभ्र किससे बने होते हैं—उक्त बात का उत्तर जैव-वैज्ञानिकों ने इस प्रश्न से दिया। लेकिन उन्हें ज्ञात न था। अनेक परिधारणाएं प्रस्तुत की गयी। वीनस ग्रह के अभ्रों के संरचनात्मक पदार्थों के रूप में विचित्र तत्वों को देखा गया। मिसाल के लिए, अमरीकी खगोलविद स० रसूल ने यह विचार प्रस्तुत किया कि अभ्रों में मर्करी के विषैले यौगिक हैं। खगोलविदों को एक बार फिर अचम्भा हुआ जब सोवियत वैज्ञानिकों ने तथाकथित त्रुटिपूर्ण जल की खोज की—जो सामान्य जल की तुलना में अधिक घनत्व वाला था।

केवल इसी प्रकार के जल से वीनस ग्रह के अभ्र बने हैं—कुछ ग्रह-अध्ययनकर्ताओं का यही कथन था। बाद में कुछ शोधकर्ताओं ने कहा कि इन अभ्रों में अमोनिया भी है।

अब वीनस के अभ्रों की संरचना का प्रश्न इतना महत्वपूर्ण हो गया कि उसका पूर्णतया अध्ययन करने का निश्चय किया गया। "वीनस-8" उपकरण पर, अमोनिया को ज्ञात करने वाला यंत्र लगाया गया। अवतरण उपकरण जब पैराशूट की सहायता से नीचे आ रहा था, तो यंत्र ने अभ्रों में अमोनिया की विद्यमानता सिद्ध की। लेकिन अभी भी बहस समाप्त नहीं हुई।

ग्रह के रहस्यों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए, वीनस के अभ्र आवरण को थोड़ा-सा "खोलना" आवश्यक था। उसकी सतह कैसी है ?—यह जानना आवश्यक था। लेकिन, आप वही देख सकते हैं जो प्रकाशमान है। सम्भव है कि ग्रह पर सदैव रात्रि बनी रहती हो ? सो, उपकरण के अवतरण के समय पैराशूट पर प्रकाश परिमापी—फोटोमीटर—लगाया गया था। उपकरण जितना अधिक नीचे जाता था, उतना ही अधिक अन्धकार उसके

चारों ओर छाता जाता था। लेकिन फिर भी पर्याप्त प्रकाश था। अब हम जानते हैं कि वीनस पर दिन के बारह बजे उतना प्रकाश होता है, जितना पृथ्वी पर बादलों के छाये होने के दिन होता है।

वीनस की सतह पर उपकरण ने लगभग एक घंटे कार्य किया। डिजाइनरों ने उपकरण की तापीय रक्षा हेतु नये पदार्थों को प्रयुक्त किया था—अत्यधिक ऊष्मारोधी पदार्थों का उपयोग किया गया था। "पृथ्वी के दूत" पर जब लाल-तप्त गैसों ने हमला किया, तो इन पदार्थों ने प्रथम वार सहन करके ऊष्मा का अधिकांश भाग ले लिया। और, इस प्रकार कार्यकारी यंत्रों तक उस प्रहार को एकदम से नहीं पहुँचने दिया। इन यंत्रों में से एक यंत्र—गामा-स्पेक्ट्रोमीटर—ने सर्वप्रथम वीनस की भूमि की रासायनिक संरचना का अध्ययन किया। इस उपकरण ने, ऊष्मारोधी आवरण से बाहर आये बिना ही, इस भूमि की "छानबीन" की।

पहाड़ों, चट्टानों को उनमें परस्पर विद्यमान रेडियोऐक्टिव तत्वों की मात्रा के आधार पर पृथक किया जा सकता है। रेडियोऐक्टिव क्षय के फलस्वरूप प्रकट होने वाले गामा-विकिरण से उनकी संरचना ज्ञात होती है। अवतरण-स्थल पर, सतह की गामा-विकिरण तीव्रता एवं ऊर्जा को गामा-स्पेक्ट्रोमीटर ने मापा। इस नियम के अनुसार, वीनस की भूमि व चट्टानें पृथ्वी की चट्टानों जैसी ही लगीं।

1975 की ग्रीष्म ऋतु में सोवियत कॉस्मोड्रोम से दो नये प्रकार के "वीनस" उपकरण, ग्रह की ओर रवाना हुए। इनका कार्य था वीनस ग्रह का सर्वप्रथम कृत्रिम स्पुतनिक बनना। इसके लिए पुराने उपकरण अयोग्य थे। इसीलिए डिजाइनरों ने "मार्स" उपकरणों को याद किया। कारण यह कि इन उपकरणों ने ऐसा ही कार्य 1971 तथा 1973 में किया था। यह सही है कि "मार्स" यानों के कक्षीय विभाग में कुछ परिवर्तन करने पड़े। उदाहरण के लिए, सौर बैटरियों का आकार कम हो गया; वीनस

मंगल ग्रह की अपेक्षा चूंकि सूर्य के अधिक निकट है, इसलिए ऊष्मारोधी यंत्रों को भी परिवर्तित किया गया। विशाल "मंगलीय" ऐन्टेना की भी आवश्यकता नहीं रही—पृथ्वी से वीनस की दूरी अधिक नहीं है।

अन्तरग्रहीय यात्रा की अवधि चार महीने से अधिक की थी। वीनस और यान की दूरी जब दो दिवस के बराबर रह गयी, तो यान से अवतरण उपकरण पृथक हो गया। पहले की भांति ये ग्रह की ओर चलने लगे तथा यान नये प्रक्षेप-पथ में प्रवेश करने लगा; ग्रह की सतह से यान की दूरी 1500 कि०मी० तक थी। पूर्वनिर्धारित समय पर स्टेशन के इंजन बन्द हो गये तथा ये वीनस के स्पुतनिक बन गये।

इन पर लगे वैज्ञानिक यंत्रों ने कुछ महीनों तक ग्रह का अध्ययन किया। वायुमण्डल की ऊपरी सतहों के भौतिक मान एवं संरचना का विश्लेषण किया गया, अभ्रों की परत की बाहरी सीमा का तापमान मापा गया तथा ग्रह के समीप के अन्तरग्रहीय चुम्बकीय क्षेत्रों का अध्ययन किया गया।

आइए, अवतरण उपकरण को देखें। इसे पुनः बनाया गया। चित्र देखकर आप तुरन्त यह अन्तर अनुभव करेंगे। यंत्र कक्षक के चारों ओर का "घागरा"—एक प्रकार का धात्विक पैराशूट है। तथाकथित वायुगतिज ब्रेक यंत्र ने, वस्तुगत पैराशूटों के खुलने के समय, वीनस के वायुमण्डल की घनी परतों में उपकरण की गति को धीमा कर दिया। उपकरण पर आप कोई बड़ा ऐन्टेना नहीं देखेंगे। इसकी आवश्यकता नहीं थी। कारण यह कि अवतरण उपकरण अपने संदेश पास में उड़ान भर रहे स्टेशन को प्रेषित करता था, तथा स्टेशन इन संदेशों को सुदूर अन्तरिक्ष सम्पर्क केंद्रों के ऐन्टेनाओं को प्रेषित कर देता था। उपकरण के पार्श्व में आप उसके "नेत्र"—टेलीफोटोमीटर—को देख सकते हैं। इस प्रकार, हम वीनस की सतह को प्रथम बार देख सके। यह सब इस प्रकार हुआ था।

"पृथ्वी पर स्थित परिमापी केन्द्र ने वीनस की सतह के चित्र ग्रहण किये। चित्र बहुत अच्छे आये।"—उद्घोषक के इन शब्दों ने कमरे में उपस्थित सभी लोगों का ध्यान आकर्षित किया। इलेक्ट्रानी किरण-पुंज अब कैसी तस्वीर बनायेगा ? यह किसी भी व्यक्ति को ज्ञात नहीं था।

लीजिए, उत्तर प्रस्तुत है। अकादमीशियन म०व० केल्दिश ने ध्यान से चित्रों को देखा और कहा : "विवरण में यह चित्र, चन्द्रमा के प्रथम चित्रों के समान ही होगा।" अगले दिन अमरीकी नासा केन्द्र के एक निदेशक स० रसूल ने भी यही कथन दोहराया : "प्राप्त चित्रों से सिद्ध होता है कि सतह पर कार्बन डाइऑक्साइड गैस निस्संदेह पारदर्शी है, तथा प्रकाश—सतह तक पहुँचने के लिए—अभ्रों की परतों को पार करता है।"

चट्टानें—ये भी भली प्रकार प्रकाशमान हैं, दृष्टिगोचर हैं; पर इनकी छाया स्पष्ट नहीं है। ये विशाल भी हैं, व छोटे आकार की भी। नयी चट्टानें समतल नहीं हैं तथा नुकीली हैं। पुरानी चट्टानें गोल हैं तथा उनके किनारे समतल हैं। इन चट्टानों की आकृति में कम रहस्य नहीं छिपा है। वीनस की चट्टानों के किनारों को किन प्रक्रियाओं ने समतलीय बनाया ? पृथ्वी पर यह सब वायु, नमी, तापमान में एकदम परिवर्तनों के कारणों से होता है। वीनस पर ऐसा किन कारणों से होता है ?

तीन दिन बाद ही "वीनस-10" ने हमें एकदम नयी तस्वीर दिखायी। उपकरण एक समतलीय प्रकाशमान चट्टान पर खड़ा था। इस चट्टान के कटे हुए किनारों पर गहरी दरारें थी। इसी प्रकार के प्रकाशमान टुकड़े, जो चारों ओर बिखरे हैं, हमारी दृष्टि को आकृष्ट करते हैं। इनके बीच अन्धकारमय—लगभग श्याम—भूमि है। सभी कुछ समतलीय है। कहीं भी कंकड़, इत्यादि, नहीं हैं।

वीनस से आये इन चित्रों ने हमारे अन्तरिक्षीय पड़ोसी में हमारी जिज्ञासा को और अधिक बढ़ा दिया। लेकिन हमारी इस जिज्ञासा को शांत करने में तीन वर्ष से अधिक समय लगा। प्रक्षेप-पथ की

"खिड़कियाँ"—वीनस की यात्रा पर जाने की सर्वोत्तम अवधि—हमेशा प्राप्त नहीं होतीं। फलतः, अगली खिड़की का प्रयोग एक साथ ही दोनों अन्तरिक्षीय महाशक्तियों ने किया—सोवियत संघ तथा अमेरिका ने। सोवियत कॉस्मोड्रोम से "वीनस-11" तथा "वीनस-12" रवाना हुए तथा कैनेवरल द्वीप से "पायनियर—वीनस-1" तथा "पायनियर—वीनस-2" रवाना हुए।

नये सोवियत यान पहले यानों की भाँति ही थे। प्रत्येक यान पर अवतरण उपकरण था; स्वयं यान, उड़ने वाले प्रेषित्र का कार्य करता था। पहली बार ये स्टेशन वीनस के कृत्रिम स्पुतनिक बने थे; इस बार ये स्टेशन अवतरण उपकरण से संदेश प्राप्त करके पृथ्वी पर प्रेषित करते थे।

दो "पायनियरों" के कार्य भिन्न-भिन्न थे। प्रथम उपकरण का कार्य वीनस का कृत्रिम स्पुतनिक बनना था; दूसरे उपकरण का कार्य वीनस के वायुमण्डल में चार "जोन्द" (अन्वेषी शलाकाएं) ले जाना था।

अवतरण उपकरण, अपने स्टेशनों से उड़ान की समाप्ति से थोड़े समय पूर्व, पृथक हुए। उपकरणों ने वीनस की ओर अपनी उड़ान जारी रखी; तथा, स्टेशनों ने प्रक्षेप-पथ में प्रवेश किया—जिसकी दूरी वीनस की सतह से लगभग 30,000 कि०मी० थी। इस पथ में उड़ान भरते हुए उनका कार्य था : उपकरण के संदेशों को ग्रहण करके पृथ्वी तक पहुँचाना।

जब दोनों उपकरणों ने वीनस के वायुमण्डल में प्रवेश किया, तो नियंत्रण केन्द्र अन्धकार में डूबा हुआ था। लेकिन वहाँ, जहाँ "पृथ्वी के दूत" रंगीन पैराशूटों द्वारा लटके हुए थे, सूर्य का प्रकाश था। इसे यन्त्रों द्वारा लिये गये परिमापों ने भी सिद्ध किया, जिन्होंने उपकरण के ऊपर छाये हुए नभ के प्रकाश को मापा। ताप व दाब के मान बढ़ते ही जा रहे थे।

वायुमण्डल में उपकरण ने प्रवेश किया—तो इसका पता भी नहीं चला। ये अभ्र—जो दूर से घने व अधिक मोटे लगते थे—हल्की धुंध के समान थे। स्पष्ट हुआ कि भ्रांतिपूर्ण विचार का कारण कई कि०मी० मोटी परत थी। वीनस के अभ्रों की संरचना ज्ञात नहीं थी। इस बारे में अनेक परिधारणाएँ प्रस्तुत की गयी थीं। पृथ्वी पर किये गये अध्ययनों से पता चला कि अभ्रों में एक ऐसा द्रव अवश्य होना चाहिए, जो बहुत अधिक निम्न तापमान पर भी जमता नहीं है—ये तापमान अभ्रों की बाहरी सीमा पर होते हैं। अमरीकी वैज्ञानिक सिल तथा यंग ने सिद्ध किया कि इस प्रकार की विशेषता सान्द्रित सल्फ्यूरिक अम्ल में होती है।

प्रत्येक 10 सकेण्डों में स्पेक्ट्रोमीटर अभ्रों में, तथा उनके नीचे, चालू हो जाते थे। प्रत्येक बार यंत्रों के चारों ओर की गैसों के चिह्न वर्णक्रम-मापी पर अंकित हो जाते थे। यंत्रों ने अभ्रों को "छू कर" उनका अध्ययन किया। अभ्रों के नमूनों को एकत्रित कर उनका फिल्टरन किया गया। इस प्रकार एक्स-किरण का विकिरण उत्तेजित हुआ, जिसकी विशेषता से यह निर्धारित किया गया कि कौन-से परमाणु तथा अणु इसे विकिरित करते हैं। यकायक, अनुमानित गन्धक के अतिरिक्त इसमें क्लोरीन भी पायी गयी।

अमरीकी उपकरण "पायनियर—वीनस-2" से छोड़े गये चार "जोन्द" वीनस पर दो सप्ताह पूर्व उतरे। पृथक्करण से पूर्व उपकरण को घुमाया गया, जिससे अपकेन्द्रीय (सेन्ट्रीफ्यूगल) बल ने इन्हें विभिन्न दिशाओं में भेज दिया। इस प्रकार "जोन्द" के नामों का कारण भी सिद्ध हुआ—"उत्तर", "दिन" तथा "रात्रि"। इनमें से प्रथम ने, वायुमंडल में ग्रह के उत्तरीय गोलार्द्ध की ओर से प्रवेश किया—जो सूर्य द्वारा प्रकाशमान नहीं था। चतुर्थ जोन्द, जो सबसे बड़ा था—अन्य जोन्दों के विपरीत—पैराशूट द्वारा उतर कर मध्यरेखा के क्षेत्र का अध्ययन करने लगा। स्वयं

"पायनियर—वीनस-2", जैसा कि कार्यक्रम में सम्मिलित था, वायुमंडल में ज्वलित होकर भस्म हो गया ।

वैज्ञानिक कार्यों के एकसमान होने के कारण अमरीकी तथा सोवियत संघ के परिणामों की तुलना की सम्भावना विरल थी । सभी छः क्षेत्रों में, सोवियत संघ का दूसरा उपकरण प्रथम उपकरण के अवतरण स्थल से 800 कि०मी० की दूरी पर उतरा था; अभ्रों की परत एक ही ऊँचाई पर थी तथा मोटाई भी समान थी । तापमापी प्रेषित्रों ने सल्फ्यूरिक अम्ल की परिधारणा की अचानक पुष्टि कर दी । चारों जोन्द 12 कि०मी० की दूरी पर खराब हो गये । एक वैज्ञानिक के मत के अनुसार : उपकरण के यन्त्रों को अम्ल ने "खा" लिया । यह नहीं भूलना चाहिए कि हाइड्रोक्लोरिक अम्ल भी—जिसमें अभ्रों में विद्यमान क्लोरीन होती है—सल्फ्यूरिक अम्ल की तरह ही धातु को खा जाता है ।

सोवियत अवतरण उपकरणों पर तूफानमापी लगाये गये थे । इनकी सहायता से वैज्ञानिकों ने वीनस के वायुमण्डल पर प्रभाव डालने वाली प्रक्रियाओं की खोज की । पृथ्वी पर तूफान, वायु में ओजोन व नाइट्रोजन ऑक्साइड बनाते हैं । वीनस पर भी तूफानों की सम्भावना है । वीनस पर रात्रि नभ के प्रकाशमय होने के कारण, वहां प्रायः उठने वाले शक्तिशाली तूफान हो सकते हैं । तूफानमापियों पर शक्तिशाली एवं दीर्घकालिक विद्युत आवेशों ने हमला किया । क्या वस्तुतः इनका कारण तड़ित थी ? इसका कारण स्पष्ट करना अभी शेष था ।

सतह का तापमान ज्ञात करके नये "वीनस" उपकरणों ने 470° की ओर इंगित किया । इस प्रकार, एक बार पुनः ग्रह के तप्त होने के कारण पर विचार करने को विवश होना पड़ा । ग्रह के तप्त होने का मुख्य कारण "वाष्पीय प्रभाव" माना जाता है । निष्कर्ष यह है कि कार्बन डाइऑक्साइड गैस, जो ग्रह के वायुमण्डल का 95% भाग है, सौर किरणों को सतह पर आने देती है तथा परावर्तित ऊष्मीय विकिरण को रोक लेती है ।

पिछले दिनों इस अवधारणा की प्रतिद्वन्दी एक अन्य अवधारणा बन गयी है ।

ग्रह की धीमी ध्रुवण गति का कारण स्पष्ट करते हुए (पहले बताया जा चुका है कि ग्रह पर एक दिन-रात पृथ्वी के 118 दिन-रात के बराबर होता है) विशाल प्राकृतिक स्पुतनिक के प्रभाव के आधार पर, जो कभी-भी ग्रह को अकेले नहीं छोड़ता था, खगोलविदों ने आशा के विपरीत मरक्यूरी ग्रह (बुध ग्रह) में पाया । कम्प्यूटर पर किये गये बुध ग्रह की गति के विकास के परिकलनों से पता चला कि वीनस की कक्षा में स्थित यह ग्रह अपने "मालिक" से दूर क्यों भागता है ।

लेकिन यदि किसी समय पर ग्रहों के बीच इतना अधिक सम्बन्ध था, तो अवश्य ही उनके बीच विशाल ऊर्जा का उत्सर्जन होना चाहिए । इसके साथ ही, ऊर्जा का कुछ भाग दोनों आकाशीय पिंडों के गर्भ को गर्म करने में व्यय होना चाहिए तथा उनके प्रारम्भिक पदार्थों द्वारा गैसों के उत्सर्जन पर भी व्यय होना चाहिए । लेकिन दो ग्रहों के बीच सम्बन्धों की वास्तविकता की पुष्टि केवल प्रयोग ही कर सकते थे ।

इसके वास्ते, सर्वप्रथम वीनस के वायुमंडल में निष्क्रिय गैसों की मात्रा निश्चित करना आवश्यक था । बात यह है कि ग्रह के जन्म के समय उसके वायुमंडल में प्रवेश करके ये किसी भी अन्य तत्वों के साथ रासायनिक रूप से आबन्धित नहीं हो सकती हैं, तथा व्यावहारिक रूप से ये उसकी उत्पत्ति के प्रारम्भिक चरणों के प्रमाण बन कर रह जाती हैं ।

आर्गन के विभिन्न समस्थानिकों के बीच अनुपात को जानना भी अत्यन्त आवश्यक है । पृथ्वी पर आर्गन सर्वाधिक भारी समस्थानिक में पायी गयी है, जिसका पारमाण्विक द्रव्यमान 40 है । यह उसी पारमाण्विक द्रव्यमान वाले पोटेशियम के विघटनाभिक क्षय के परिणामस्वरूप बनती है तथा वायुमंडल में उसकी मात्रा निरंतर बढ़ती जाती है । वायु में हल्के

समस्थानिकों की मात्रा कम होती है तथा समय के साथ-साथ लगभग अपरिर्वतित रहती है।

पृथ्वी तथा वीनस की आयु, द्रव्यमान तथा आकार चूकि समान हैं, अतः लगता है कि दोनों ग्रहों के वायुमंडल में आर्गन की मात्रा में भी समानता होनी चाहिए। और यदि किसी भी समय में वीनस पर तीव्र प्रचंड विकास हुआ था, जो उपग्रह और उसके गर्भ से वाष्पशील पदार्थों के तीव्र उत्सर्जन के साथ सम्बंधित था, तो उस पर पृथ्वी की तुलना में हल्के व भारी ममस्थानिकों का अनुपात अधिक होना चाहिए। लेकिन वस्तुतः घटित क्या हुआ था ?

स्पष्ट हुआ कि वीनस पर हल्के व भारी समस्थानिकों की मात्रा समान है। लेकिन पृथ्वी के वायुमंडल की तुलना में वीनस के वायुमंडल में आर्गन की मात्रा 100 गुना अधिक है। यह एक नयी पहेली है। क्या इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि पृथ्वी एवं वीनस की प्रोटोग्रहीय धुन्ध से विकास प्रक्रियाएँ आरम्भिक काल में विभिन्न प्रकार से घटी थीं ?

वीनस की एक विचित्र बात जल से सम्बंधित है। वीनस का सम्पूर्ण जल उसके वायुमंडल में विलीन है। लाल-तप्त सतह पर, 100 वायुमंडल दाब पर भी, द्रवित जल सम्भव नहीं है। पृथ्वी की अपेक्षा वीनस के वायुमंडल में जलीय वाष्प बहुत कम थी। इसका कारण समझना अत्यन्त आवश्यक है। यदि वीनस पर जल की मात्रा अधिक होती, तो उस पर कार्बन डाइऑक्साइड गैस की मात्रा इतनी अधिक नहीं होती। पृथ्वी की भांति वह जल के साथ क्रिया-प्रतिक्रिया करता, तथा ठोस कार्बोनेट चट्टान बनाता। साथ ही, कम कार्बोनेट—"वाष्प प्रभाव" क्षीण होता और, फलतः, सतह पर तापमान इतना उच्च नही होता, इत्यादि।

यह नोट करना रोचक होगा कि वायुमंडल का शुष्क होना, कुछ-कुछ अभ्रों में सल्फ्यूरिक अम्ल की विद्यमानता द्वारा समझाया जा सकता है—सान्द्रित सल्फ्यूरिक अम्ल का विलयन जल को भली प्रकार अवशोषित

कर लेता है। हो सकता है कि वीनस पर जल कभी भी अधिक मात्रा में था ही नही। विज्ञान मे जैसा कि प्रायः होता है, एक प्रकार के प्रश्नों के उत्तर नये प्रश्नो को जन्म देते है।

वीनस के अध्ययन में सोवियत अंतरिक्ष अध्ययन की विशेष रूपरेखा दिखायी देती है। योजना, स्थायित्व, धीरे-धीरे समस्याओ का समाधान, नयी तकनीकी आधुनिक विधियों की खोज—यही सफलता की कुंजी है।

पुच्छल तारे के बारे में

पुच्छल तारा लौट आया है। कुछ लोग डींग मार सकते हैं कि उन्होंने गालेई के पुच्छल तारे को देखा है। अंतिम बार वह आज से 70 वर्ष पूर्व आकाश में दिखायी दिया था। पुच्छल तारे के प्रकटन की पूर्वघोषणा हो चुकी थी। लोग उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। पर, सदा की भांति सब बहुत घबराये हुए थे। अखबारों की सुर्खियां आग में घी का काम कर रही थीं : "क्या वर्ष 1910 में दुनिया नष्ट हो जायेगी ?" बीसवीं शताब्दी का आरम्भ इसी चिन्ता से हुआ।

इस बार भी पुच्छल तारे ने जमीन को कोई हानि नहीं पहुंचायी। इसके बाद, लोगों का ध्यान अन्य अधिक महत्वपूर्ण घटनाओं की ओर केन्द्रित हो गया। 1917 में पुच्छल तारा यूरेनस के कक्षक में पहुंच गया था और द्वितीय विश्व युद्ध के अंत के समय वह सूर्य से अधिकतम दूरी पर पहुंच कर वापिस लौटने लगा था। अब वह फिर हमारी ओर आ रहा है। सन् 1986 की शीत ऋतु में वह उपसौर पार कर जायेगा। इस दिन उत्तरी गोलार्द्ध के खगोलज्ञ पुच्छल तारे को शाम के समय तथा दक्षिणी गोलार्द्ध वाले बहुत सुबह देख सकते हैं। अंतरिक्ष से आने वाला यह मेहमान, वैज्ञानिकों को अस्पष्ट रूप से ही दिखायी देगा। आकाश में स्थित

सब ग्रहों व तारो में वह सबसे कम चमक वाला एक छोटा-सा बिन्दु मात्र होगा ।

गालेई का पुच्छल तारा सर्वप्रथम कब दिखायी दिया ?—इस प्रश्न सही उत्तर किसी भी किताब में नही मिलेगा। लोगों को वह ईसा से पूर्व के युग मे भी दिखायी दिया था। पर इसका यह मतलब नही कि पुच्छल तारा अति प्राचीन होने के कारण खगोलज्ञों को प्यारा है ! खगोलीय आकाश के छोटे आकार वाले नक्षत्रों के समूह का एक सदस्य होने के नाते, पुच्छल तारे ने अपने अन्य साथियों के बारे में जानकारी दी।

इसकी गति ने न्यूटन के नियम की पुष्टि की तथा यह सत्य बताया कि पुच्छल तारे वास्तव में सूर्य की परिक्रमा करते हैं। सन् 1910 में इसके अध्ययन से इनकी प्रकृति के बारे में प्रथम जानकारी मिली ।

मंगल व शुक्र ग्रह पर भेजे उपग्रहों तथा शुक्र एवं शनि पर भेजे उपकरणों की सफलताओं ने पुच्छल तारे का अध्ययन कर रहे वैज्ञानिकों का उत्साह बढ़ा दिया है। इस शताब्दी के सातवें दशक में अमरीकी वैज्ञानिक फ० उईप्ल ने लिखा : "पुच्छल तारो के बारे में आवश्यक जानकारी केवल उनके ऊपर उड़ान द्वारा ही संभव हो सकती है।" इन्ही दिनों प्रसिद्ध सोवियत पुच्छल तारा विशेषज्ञ अकादमीशियन ओ० दोब्रो-वोल्स्की से भेंट करने के पश्चात् एक वैज्ञानिक ने उनके शब्दों को दोहराया : "रॉकेट को पुच्छल तारे पर भेजना पड़ेगा। 1986 में वह उपसौर पार कर जायेगा। 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में इस अभियान के लिए यह सबसे महत्वपूर्ण अवसर होगा।"

सौर मंडल का.शैशव काल : आइए, प्रथम अंतरग्रहीय उड़ानों को याद करें। उन दिनों शायद ही किसी ने प्रश्न उठाया हो—किस लिए ?

आख़िरकार, क० त्सिओल्कोव्स्की ने जैसा कि लिखा था—चंद्रमा से पत्थर उठाना, मंगल पर उतर कर उसके दसियों मील इलाके का अध्ययन करना, संभव हो गया। महान वैज्ञानिक के सपने साकार हो गये हैं। प्रथम बार अति दूर की अनजानी दुनिया को जानने का अवसर मिला। नही, उस समय किसी ने भी नही कहा—किस लिए। इसके विपरीत सब पूछते थे—आखिर कब ?

पुच्छल तारे ! इनके अध्ययन के लिए अभियान पर इतना अधिक धन व्यय करना ठीक होगा या नहीं ? वह जमाना गया जब आकाश में पुच्छल तारे को देखकर लोग घबरा जाते थे। आज स्कूल के छात्र भी समझते हैं कि पुच्छल-तारे क्या हैं व किस चीज से बने हैं। पर फिर भी, कुछ वर्ष पहले अंतरिक्ष पर प्रयोग संबन्धी बच्चों की एक प्रतियोगिता में पुच्छल तारे से मिलन के प्रयोग को सर्वाधिक रोचक व महत्वपूर्ण स्थान दिया गया। इसका मतलब यही हुआ कि आज इस की आवश्यकता है, क्योंकि भावी वैज्ञानिकों तक ने इसकी कल्पना कर ली है।

पुच्छल तारों के बारे में बहुत कम जानकारी है। ग्रह हमेशा दिखायी देते हैं। अत: उनका अध्ययन काफी सरल है। पर पुच्छल तारे शताब्दी में दो या तीन बार ही दिखायी देते हैं—और वह भी गिने-चुने हफ्तों या महीनों के लिए। छोटे पुच्छल तारों को—उनका आकार लघु होने के कारण तथा वायुमंडल में उत्पन्न विभिन्न रुकावटों के कारण—देखना और भी अधिक कठिन है।

आज तक यह ठीक-ठीक पता नहीं चला कि पुच्छल तारे किस चीज से बने होते हैं। हो सकता है, उनकी बनावट में, उनके गुणों में, कई रहस्य छिपे हों। इन रहस्यों का भेद खुलने पर सौर्य मंडल की कई अज्ञात बातों का पता चल सकता है।

पुच्छल तारे साधारण बर्फ से नहीं बने हैं। उन पर आज से हजारों

लाखों वर्ष पूर्व हुए परिवर्तनों ने अपनी छाप छोड़ी है। जब बड़े-बड़े ग्रह बने थे, इन ग्रहों ने पुच्छल तारों के एक भाग को अपने में ग्रहण कर लिया व दूसरे भाग को परिधि पर फेंक दिया जहाँ उसने बर्फ के ढेलों के ढेर इकट्ठे कर लिये। आज भी सूर्य व पृथ्वी के क्षेत्र में पुच्छल तारे इन्ही ढेरों से बनते हैं।

छोटे ग्रह बड़े ग्रहों की भांति गर्म होने की अवस्था मे कभी भी नही पहुंचे, क्योकि उनका द्रव्यमान बहुत कम होता है—जिस प्रकार रेफ्रिजेरेटर मे रखी चीज में कोई परिवर्तन नही होता। हाँ, कुछ वैज्ञानिक इस विचार से सहमत नही हैं। हॉलेंड के ज्योतिविद य० ओरट ने पुच्छल तारों की आयु हजार वर्ष के लगभग कम कर दी है। उनका अनुमान है कि पुच्छल तारे फाऐटन ग्रह से बिखरे बर्फ के टुकड़े है। यह ग्रह सूर्य के चारों ओर मंगल व शुक्र के बीच घूम रहा था तथा आज से 50 लाख वर्ष पूर्व यह टूट गया था।

कीव के खगोलज्ञ स० वसेखस्वयात्सकी के अनुसार पुच्छल तारे अन्तरग्रहीय ज्वालामुखियों के फटने के फलस्वरूप बने है। शुक्र पर खीचे गये चित्रों ने इस संभावना की पुष्टि में काफी सहायता की है। पर सच क्या है—यह इन पुच्छल तारों का और भी करीब से अध्ययन करके ही पता चलेगा। पुच्छल तारे पर उड़ान आज के वैज्ञानिक संसार मे एक अति महत्वपूर्ण व अद्भुत कदम होगा।

पुच्छल तारों का मनुष्य जीवन पर प्रभाव : अंतरिक्ष आइसबर्ग की ओर केवल ज्योतिविद ही ध्यान नहीं देते हैं। इंग्लैड के वैज्ञानिकों—फ० हॉल व स० विक्रमसिंह—का विचार है कि पुच्छल तारे पृथ्वी पर एवं अन्य ग्रहों पर तारों की बारिश-सी करके सूक्ष्म रोगाणु फैला देते हैं। यही कारण है कि पृथ्वी जब उल्का-पिंडों के पास से गुजरती है, तो जमीन पर महामारी फैल जाती है।

पुच्छल तारों का पृथ्वी के जीवों पर क्या प्रभाव पड़ता है, इसका गंभीर अध्ययन विभिन्न वैज्ञानिक कर रहे हैं। प्रसिद्ध अमरीकी जीव व रसायन विज्ञानी स० पोनाम्पेरूम ने मेरीलैंड यूनिवर्सिटी में 1986 में पुच्छल तारे के प्रकटन के बारे मे एक विशेष गोष्ठी का आयोजन किया।

क्या पुच्छल तारे वास्तव में भूमि पर रोगाणु लाते हैं?—इस बात की पूर्णतः पुष्टि अभी नही हुई है। हाँ, इस बात पर बहुत समय से शक किया जा रहा है कि पुच्छल तारों पर जैव पदार्थ हो सकते हैं। और क्यों नही!—जिन तत्वों से ऐसे जैव पदार्थो का निर्माण होता है, वे पुच्छल तारों पर विद्यमान होते हैं। उल्का-पिंडों पर जैव पदार्थों की उपस्थिति भी इस बात की सच्चाई सिद्ध करती है।

इतना ही नहीं। एक अमरीकी वैज्ञानिक ने जल, मैथेन, हाइड्रोजन के शीतित मिश्रण का प्रोटोनों से संश्लेषण किया; परिणामस्वरूप उसने यूरिक व सिरका अम्ल के अंश प्राप्त किये। सोवियत वैज्ञानिकों ने अतिशीतित वातावरण में रासायनिक प्रक्रियाओ को उपस्थित पाया।

लेनिनग्राद के भौतिक संस्थान व ताजिकिस्तान के खगोलभौतिक संस्थान में पुच्छल तारों के आदि प्ररूपों के साथ प्रयोग किये जा रहे हैं। वायुरिक्त कमरा व रेफ्रीजरेटर—ये यहाँ अंतरिक्ष का काम करते हैं; विभिन्न प्रकाश स्रोत सूर्य का कार्य करते हैं। प्रकाश में कमी या बढ़ती करके विभिन्न प्रयोग किये जाते हैं।

मंगल के कृत्रिम उपग्रहों ने इन प्रयोगों की सफलता की पुष्टि की। ताजिकिस्तान में भी इन उपग्रहों की उड़ान पर बहुत अधिक ध्यान दिया गया। इस संस्थान में ग्रहों का विशेष अध्ययन नही किया जाता है, पर यह देख कर कि मंगल के उत्तरी भाग का तापक्रम कृत्रिम पुच्छल तारे के तापक्रम के लगभग बराबर-सा है, यहाँ के वैज्ञानिकों को बहुत संतोष व प्रसन्नता हुई।

परिकल्पना अथवा सत्य : उपकरणों द्वारा खगोल पिंडों के अध्ययन की व्यावहारिकता की युक्ति 100 वर्ष पूर्व खोजी गयी थी। इसके अनुसार कठोर ग्रहों के पास जाकर उनको देखा जा सकता है। परिधि पर गैसों के बर्फीले गुब्बारों का दूर से अध्ययन किया जाना चाहिए तथा यात्रा का पथ इस प्रकार का होना चाहिए कि सूर्य की तप्त आग से दूर रहा जा सके।

तीन छोटे ग्रहों पर इस प्रकार का अध्ययन करने में सफलता मिली। इन तीनों का आकार यद्यपि एक-सा था, पर इनकी प्रकृति पूर्णतः भिन्न थी। इनमें से एक पूर्णतः ठंडा व बिना गैस के था; दूसरा, तप्त एवं गहरी, अपारदर्शी गैसों से घिरा था; तथा तीसरा, न तो ठंडा और न गर्म था एवं नीले सफेद बादलों से भरा था।

इस सफेद नीले ग्रह पर अध्ययन करने में उपकरण को काफी कठिनाई हुई। यह ग्रह लगातार विद्युत चुम्बकीय लहरें बना रहा था। अतः इसी कारण स्वचलित उपकरण ने पृथ्वी पर भ्रामक सूचना दी—ग्रह पर जीवन है।

सन् 1881 में ब्रिस्टल के ज्योतिविद ट्रेनिंग ने एक अति रोचक पुच्छल तारे की खोज की। वह एक अजीब प्रकार का पुच्छल तारा था। वह सूर्य की ओर नही बढ़ रहा था और न ही उसकी पूंछ थी। इतना ही नहीं। वह मंगल की ओर 90 लाख कि० मी० दूर और अधिक बढ़ा। उसकी आकृति डिस्क की भाँति थी जिसके बीच में बिन्दु चमक रहे थे। यह कहना आवश्यक है कि वह पुच्छल तारा शुक्र व शनि ग्रहों के कक्षकों के काफी पास पहुंच गया था।

सोवियत वैज्ञानिकों व० बुरदाकोव तथा यू० दानिलोव ने भी ट्रेनिंग के पुच्छल तारे का अध्ययन किया। आज उस पुच्छल तारे के बारे में बहुत कुछ ज्ञात होने पर भी—जिसे अरेन्द-रोलान ने खोजा था—उस

पुच्छल तारे की आकृति के बारे में पूर्णतः ठीक नहीं बताया जा सका है; कुछ वैज्ञानिकों का मत है कि पुच्छल तारा एक प्रकार का अंतरग्रहीय यान है जिस पर अंतरिक्ष मोटर लगी है।

अंतरिक्ष चौराहों पर : अगर आपको किसी से मिलना है तो यह आवश्यक है कि आपको पता हो कि कब व कहाँ आप दोनों के रास्ते मिलते है। कृत्रिम उपग्रहो की दिशा व चाल बदली जा सकती है; पर पुच्छल तारो की नही।

पुच्छल तारे इतने छोटे होते हैं कि बहुत दूर से दिखायी नहीं देते। वे जब सूर्य के पास आते हैं, तो देखने वाले को शुद्ध रूप में नही दिखायी देते है। वे स्वयं की भाप में घिरे होते हैं। अतः जब पुच्छल तारा बहुत तेजी से घूम रहा हो, तब उसको केवल कुछ समय के लिए दूरदर्शी में अच्छी तरह देखा जा सकता है। इसकी गति को रोका भी तो नही जा सकता! इस पुच्छल तारे से मिलन कराने के लिए पृथ्वी से कृत्रिम उपग्रह इस प्रकार छोड़ा जायेगा कि जब पुच्छल तारा उपसौर को पार कर जाये, तब कृत्रिम उपग्रह उसके सामने की ओर से आये। अधिक समय पाने के लिए, उपग्रह पर ऐसा उपाय किया जायेगा जैसा कोई फोटोग्राफर चलती गाड़ी में फोटो खीचने के लिए अपने कैमरे के लेन्स को ठीक करता है, व किसी प्रकार की विशेष कठिनाई का अनुभव नहीं करता।

शनि के कैदी : अंतरिक्ष उपकरणों ने बहुत दिनों से पुच्छल तारों का अध्ययन जारी कर रखा है। सन् 1970 में पृथ्वी के एक कृत्रिम उपग्रह ने पुच्छल तारे के चारों ओर के वातावरण में हाइड्रोजन को मौजूद पाया। 10 वर्ष बाद अंतरग्रहीय स्टेशन ने और भी महत्वपूर्ण सूचनाएं दी। अभी हाल में खोजे गये पुच्छल तारे 'ब्रेडफील' पर ऐसे तत्वों को पाया गया है, जो पहले कभी पुच्छल तारों पर नही मिले। अन्तरिक्ष से एक

और बिल्कुल नयी घटना की रिपोर्ट आयी । वह यह कि पुच्छल तारा सूर्य से टकरा गया है । सूर्य की किरणो का प्रकाश अति तीव्र होने के कारण इस प्रकार की घटनाएं प्रायः दिखायी नही देती हैं । पर इस बार कक्षक से मिले चित्रों ने बताया कि किस प्रकार 50 लाख कि०मी० लम्बी पूछ वाला एक पुच्छल तारा सूर्य की ओर बढ़ा व टुकड़े-टुकड़े हो गया ।

इसमे भी कोई शक नही कि अंतरिक्ष से पुच्छल तारे का बिल्कुल पास से चित्र खीचा जा चुका है । 1981 मे अमरीकी उपकरण 'वॉयजर-2' ने पृथ्वी पर शनि के सबसे दूर के उपग्रह फेबी के चित्र भेजे । यह उपग्रह शनि के सब सेटेलाइटों की ओर घूम रहा है व वैज्ञानिक इसके रंग व आकृति के कारण इसे पुच्छल तारा ही समझते हैं ।

पुच्छल तारे से मिलन : गालेई के पुच्छल तारे को मध्यकालीन इटली में भी देखा गया था । तभी महान् चित्रकार 'जोटो' ने पादुए के चर्च मे इसका चित्र बनाया था । चित्रकार की मृत्यु के 700 वर्ष बाद, आज एक बार फिर उसका नाम पुच्छल तारे के साथ जीवित हो गया है । 'जोटो'—यह उस उपकरण का नाम है जो गालेई से मिलने के लिए पृथ्वी से भेजा जायेगा ।

1980 में पश्चिमी यूरोप की अंतरिक्ष सोसाइटी ने तय किया कि पुच्छल तारे से मिलन का उपकरण बनाया जायेगा । इसके लिए लगभग 1 अरब 50 करोड़ डालर धन एकत्रित किया गया है । अमरीका भी इस प्रोग्राम में भाग लेने का इच्छुक है । 1977 में अमरीका में पुच्छल तारों के अध्ययन के लिए एक विशेष समिति बनायी गयी । परन्तु नयी सरकार ने इस समिति को आर्थिक सहायता देनी बन्द कर दिया है । इस परिस्थिति में अमरीकी लोगो ने चन्दा करके धन एकत्रित करना शुरू कर दिया । अमरीकी अंतरिक्ष सोसाइटी ने 'जोटो' को छोड़ने के लिए अपने रॉकेट के प्रयोग तथा अध्ययन के लिए अपने स्टेशनों के प्रयोग की सहमति दी है—

पर इस शर्त पर ही कि उड़ान के दौरान सभी महत्वपूर्ण प्रयोगों पर अमरीका का नियंत्रण रहेगा। लेकिन यूरोप के वैज्ञानिकों को यह शर्त मंजूर नही है। यह देखकर अमरीकी वैज्ञानिकों ने एक नयी योजना बनायी।

अमरीकियों ने यह फैसला किया कि वे गालेई का अध्ययन अंतरिक्ष-यान 'स्पेस शटल' पर लगे टेलीस्कोप से करेंगे। इस टेलीस्कोप को तीन बार पृथ्वी के पास के कक्षक की ओर उठाया जायेगा। पहली बार 1985 में, जब यह पुच्छल तारा पृथ्वी से 8 करोड़ कि०मी० दूरी पर होगा; दूसरी बार मार्च 1986 में, जब कई स्वचलित उपग्रह पुच्छल तारे पर पहुंचेंगे; और अन्तिम बार 1986 की गर्मियों में, जब पूंछ वाला यह मेहमान हमारे ग्रह के समीपतम होगा।

अमरीकी वैज्ञानिकों ने जब तक सबसे सस्ते व उपयोगी ढंग को सोचा, तब तक यूरोप वाले भी अपनी योजना पर कार्य करते रहे। जुलाई 1985 में फ्रेंच रॉकेट 'ओरियन-2', 'जोटो' को पृथ्वी के कृत्रिम उपग्रह पर भेज देगा। इसके बाद, उपकरण 'जोटो' को चलाकर गालेई के पुच्छल तारे की ओर भेज दिया जायेगा व महीने भर बाद 'जोटो' उसकी पूछ के बहुत पास पहुंच जायेगा। इस प्रकार 4 महीने 'जोटो', पुच्छल तारे का अध्ययन करेगा तथा उसके चित्र खींचेगा। वैज्ञानिकों को आशा है कि इन चित्रों पर वे पुच्छल तारे पर स्थित छोटी से छोटी वस्तु को अलग से भली भांति देख पायेंगे तथा वैज्ञानिक उपकरण वहां पर उत्पन्न गैस के अणुओं, परमाणुओं व धूल आदि का भली भांति अध्ययन कर सकेंगे।

क्या सोवियत संघ कुछ नहीं करेगा? अंतरिक्ष में प्रथम कदम रखने वाला देश भी इस दिशा में महत्वपूर्ण योग देगा। अन्य समाजवादी देशों तथा फ्रांस, आस्ट्रिया व पश्चिमी जर्मनी के साथ मिलकर 'इन्टरकॉस्मोस' प्रोग्राम के अन्तर्गत सोवियत संघ एक वैज्ञानिक अभियान की तैयारी

कर रहा हैं। सोवियत कॉस्मोड्रोम 'बाइकानूर' से दो स्वचलित स्टेशन छोड़े जायेंगे। ये 'वीनस' श्रेणी के स्टेशनों से श्रेष्ठतर होंगे। वीनस तक पहुँचने में इनको लगभग 6 महीने लग जायेंगे। ये स्टेशन बाद में गालेई के पुच्छल तारे से जाकर मिलेंगे। इसमें 9 महीने का समय और लग जायेगा। अर्थात्, मार्च 1986 में कहीं जाकर ये स्टेशन पुच्छल तारे से लगभग 10 हजार कि०मी० दूर होंगे। इससे और अधिक पास वे शायद ही पहुंच पायें। दोनों गतिशील वस्तुओं (पुच्छल तारे व कृत्रिम स्टेशन) का वेग 70 कि०मी० प्रति सेकेंड होगा।

कई दूसरे सोवियत स्टेशन तथा जापानी उपकरण भी अधिक दूरी तक पुच्छल तारे का अध्ययन करेंगे। वे पृथ्वी पर विभिन्न प्रकार की उपयोगी सूचनाएं भेजेंगे।

विरल खगोलीय घटनाओं में सारी दुनिया बहुत दिलचस्पी लेती है। पिछले पूर्ण सूर्य ग्रहण के अवसर पर, दूसरे देशों से सैकड़ों ज्योतिविद सोवियत संघ आये थे। गालेई के पुच्छल तारे के सिलसिले में भी ऐसा ही होगा। ऊपर जैसा कि बताया है, जापानी भी इस अभियान में भाग लेने की तैयारी कर रहे हैं। वे यूरोप व अमरीका के अपने प्रति-द्वन्दियों से पीछे नहीं रहना चाहते। टोकियो विश्वविद्यालय का अंतरिक्ष अनुसंधान विभाग, दो जापानी उपकरण छोड़ेगा जो 'जोटो' व सोवियत स्टेशनों की सूचनाओं के भंडार को और अधिक रोचक व उपयोगी बनायेंगे।

आइए भविष्य में झांकें, पर इससे पहले अतीत में भी तो झांकें। वाल्तेयर ने अपनी कथा 'माइक्रोमेगास' में लिखा था, "पुच्छल तारा चन्द्रमा के बहुत पास उड़ रहा था। वे उसके ऊपर अपने सेवकों व वैज्ञा-निक उपकरणों के साथ कूद गये।" उस समय फ्रेंच दार्शनिक का विचार एक कल्पना मात्र लगता था। पर आज इस की सच्चाई में कोई शक नहीं है।

पुच्छल तारे सूर्य की परिक्रमा करते-करते कभी उसके पास आ जाते हैं, तो कभी करोड़ों कि०मी० दूर हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त, इनमें से बहुत से तारों के कक्षक उस ओर झुके हैं जिधर सारे ग्रह व पृथ्वी से भेजे कृत्रिम स्वचलित स्टेशन घूमते रहते हैं। इसी कारण, अगर उपकरणों को पुच्छल तारों द्वारा भेजा जाये तो वे उनको इतनी अधिक दूरी तक ले जा सकते हैं जहां मनुष्य भविष्य में बहुत समय तक नहीं पहुंच पायेगा। पर, इसके लिए पुच्छल तारे पर उतरना पड़ेगा। कल्पना कीजिए, यह किस प्रकार होगा !

ये दृश्यपट दर्शकों के बिना सूने-सूने हैं। मंजिल तक पहुँचने में अभी काफी समय लगेगा। तारे को सिर्फ देखने की इच्छा किसी की भी नहीं है। तब भी भेजा चित्र नहीं आया जब उपकरण पुच्छल तारे के सिर पर से गुजरा। दूर से ऐसा लगता है जैसे उस पर धुंध छायी है। अंत में उसकी नाभि दिखायी देने लगी। चमकदार बिन्दु धीरे-धीरे आकार में बढ़ता गया—जब तक कि वह भूरे रंग के विशाल ढेले में नहीं बदल गया। कितने आश्चर्य की बात है कि वह बहुत धीरे-धीरे घूम रहा है ! यह उबलती भाप फेंकता है; साथ ही, बर्फ के टुकड़े भी अपने चारों ओर फेंकता है।

कई हफ्ते टेलीविजन कैमरे पुच्छल तारे का ध्यानपूर्वक अध्ययन करते रहे। इस समय उपकरण उसके चारों ओर घूमता रहा। कभी वह उसकी नाभि से दसियों किलोमीटर दूर चला जाता था, कभी बिल्कुल पास आ जाता था।

अंत में सुनिश्चित दिन आ गया। आज लैन्डिग होगी। रेडियो आदेश कुछ सेकेंडों में पुच्छल तारे पर पहुंच जायेंगे। अब उपकरण नाभिक के पास पहुंचने लगता है। पर्दे पर उसका चित्र बड़ा होता जाता है व कुछ समय में वह पूरे पर्दे पर फैल जाता है। किसी क्षण चित्र झटके से हिलता है व उसमें एक छोटा रॉकेट आ जाता है।

अभी यह कहना बहुत कठिन है कि पुच्छल तारे के साथ मिलन ऐसे होगा, या किसी और प्रकार से । अभी तो यह भी ठीक-ठीक नही पता कि किस दिन यह मिलन होगा । यहाँ हम सिर्फ यही कहेंगे कि चन्द्रमा की मृदा को देखने की बात भी कुछ समय पहले हमको इसी प्रकार असंभव लगती थी ।

"आज का असम्भव कार्य कल सम्भव हो जायेगा"

"...अन्तरिक्ष पिंडों पर पैर रखना, चन्द्रमा के पत्थर को हाथ में उठाना, ईथर के आकाश में गतिमय स्टेशनों की मरम्मत करना, पृथ्वी, चन्द्रमा, सूर्य के चारों ओर सजीव घेरे बनाना, अनेक कि०मी० की दूरी से मंगल का अध्ययन करना, उसके उपग्रहों पर या उसकी सबसे समीपतम सतह पर अवतरण करना—पागलपन कहा जा सकता है !"—केवल 60 वर्ष पूर्व क० अ० त्सीओलकोव्स्की ने ये शब्द कहे थे। अंतरिक्ष विज्ञान के निरंतर विकास ने उनके स्वप्नों को साकार बना दिया है । लेकिन "आज का असम्भव कार्य, कल संभव हो जायेगा ।" शताब्दियों तथा हजारों वर्षों के बाद होने वाली घटनाओं का अनुमान करना असम्भव है । लेकिन फिर भी, कुछ वर्षों के बाद की घटनाओं के चित्र से अवगत होना सम्भव है ।

तकनीकी विकास का स्तर सर्वप्रथम ऊर्जा की स्थिति से निर्धारित होता है । भावी अंतरिक्ष-यानों को भेजने के लिए सर्वप्रथम आर्थिक रूप से उन्हें कम खर्चीला बनाना हमारा ध्येय होगा । यथातथ्य शब्दों में इसका अर्थ हुआ कि नये प्रकार के इंजनों का निर्माण करना आवश्यक है ।

उदाहरण के लिए, अंतरिक्ष में शान्तिपूर्ण परमाणु को भेजने की

तयारी की जा रही है। हां, वही परमाणु जो अपनी विशाल शक्ति से हमें अभी तक चकित करता आया है। यह नाभिकीय ईंधन में नगण्य मात्रा में विद्यमान होगा।

अभिक्रियाशील आण्विक ईंधन में ऊर्जा, जो यूरेनियम या प्लूटोनियम के नाभिकों के विघटन के फलस्वरूप प्राप्त होगी, ऊष्मा में रूपांतरित हो जायेगी तथा तापीयवाहक—द्रव या गैस—को गर्म करेगी, जो रिऐक्टर में से निकलती है। कई हजार डिग्री तक गर्म तथा उसके बाद तुंड में से बाहर प्रेषित की जाने वाली वाष्प या गैस, अत्यधिक शक्तिशाली अभिक्रिया क्षेप-बल बनाती है। हम पहले ही वैद्युत रॉकेट इंजनों के बारे में बता चुके हैं जिनका भविष्य भी काफी उज्ज्वल है।

आज जबकि पृथ्वी ने अभी-अभी अपने अंतरिक्षीय पड़ोसियों से परिचित होना आरम्भ किया है, तो वैज्ञानिक पहले से ही तारों तक अंतरिक्ष उड़ान भरने की तैयारी कर रहे हैं। अन्तरतारकीय यात्रा पर मानव शायद तभी जायेगा, जब रॉकेट की गति प्रकाश की गति के बराबर हो जायेगी। अन्यथा, ऐसी यात्रा के लिए मानव का जीवन असम्भव है। इस प्रकार के इंजनों के मॉडल बनाये जा रहे हैं, जिनकी गति प्रकाश की गति के समान होना सम्भव है। उदाहरण के लिए, "समबिंदु" इंजन, जिसमें वायु के स्थान पर ऐसा "पारदर्शी" पदार्थ इस्तेमाल किया जायेगा जैसे—अन्तरतारकीय गैस।

निकट भविष्य में अन्तरिक्ष विज्ञान को अनेक जटिल तकनीकी समस्याओं का समाधान करना है। इनमें से एक समस्या है—ऐसे मालवाही यानों का निर्माण, जि हें अनेक बार प्रयोग किया जा सके। इस प्रकार के यानों को पृथ्वी के निकट अंतरिक्ष आकाश में कक्षीय स्टेशनों एवं अन्य अंतरिक्षीय निर्माण स्थलों पर यन्त्र व उपकरण पहुंचाने हैं तथा इसके पश्चात् वे सामान्यतः पृथ्वी पर लौट आयेंगे।

भविष्य के कक्षीय स्टेशन, केवल थोड़े-से प्रारम्भिक अंतरिक्षीय "घरों" की भांति होंगे। विशाल निवास-घरों में ऐसी स्थितियां एवं अवस्थाएं होंगी कि दीर्घकालीन अवधि के लिए कर्मीदल वहाँ रह सकें। कृत्रिम गुरुत्वीय बल द्वारा भारहीनता की कठिनाई दूर हो जायेगी; इसी प्रकार अंतरिक्ष-यात्रियों के भोजन व श्वसन की समस्या भी हल हो जायेगी।

सम्भव है कि निकट भविष्य में पृथ्वी के कृत्रिम स्पुतनिकों की कक्षा में, कारखाने लग जायेंगे। विदित है कि कक्षीय उड़ानें असामान्य अवस्थाओं में स्थान लेती हैं। दीर्घकालीन भारहीनता, अत्यधिक निर्वात, सौर ऊर्जा को प्रयोग करने की असीमित सम्भावना—इन सभी कारणों से पृथ्वी के निकट की कक्षाएं अनेक प्रकार के तकनीकी कार्य करने के लिए उपयुक्त स्थान हैं।

भारहीनत्ता में अनेक प्रकार के ऐलॉय वनाये जा सकते हैं, जिन्हें पृथ्वी पर बनाना असम्भव है। उदाहरण के लिए, ऐलुमिनियम एव टंग्स्टन। सामान्य अवस्था में ऐलुमिनियम भारी टंग्स्टन में गलित हो जायेगा। धातु में गैस को प्रवेश कराना भी एक विचित्र कार्य है। गैसीय बुदबुदों से संतृप्त धातु ठंडी होने पर अपना स्वरूप बनाये रखेगी, और अपनी दृढ़ता बरकरार रखती हुई हल्की हो जायेगी।

अनेक जैवविज्ञानी दवाइयों के पृथक्करण की प्रक्रियाएं भी भारहीनत में भली प्रकार होती हैं। इस प्रकार, औषधि विज्ञान में नई कारगर दवाइयां आ जायेंगी। इनमें से प्रथम तो अभी ही प्राप्त की जा चुकी हैं।

अंतरिक्ष में आप आवश्यक संमिश्रण वाले निश्चित स्पष्टता के बड़े व साफ क्रिस्टल तैयार कर सकते हैं। इस प्रकार के क्रिस्टल महीनतम अर्धचालक यन्त्रों में प्रयुक्त क़िये जाते हैं, जो रेडियो-इलेक्ट्रानिकों में अग्रणी हैं।

अंतरिक्षीय प्रौद्योगिकी अभी अपने प्रथम डग भर रही है। इसके बाद अन्य डग भरे जायेंगे।

ऐसा प्रतीत होता है कि हम चन्द्रमा पर प्रथम निवास के साक्षी बनेंगे, सौर-विन्यास के ग्रहों की यात्रा को देखेंगे, तथा आप में से कोई सम्भवत: प्रथम अन्तरग्रहीय यात्री-उड़ान का यात्री भी बनेगा।

आइए, अब कुछ और आगे भविष्य में देखें।

...अध्ययन काल शीघ्र ही समाप्त हो गया। कुछ दिनों पूर्व उच्च-तर अंतरिक्षीय विद्यालय के छात्रों को भेजने वाली कमेटी ने आपको अन्तरग्रहीय उड़ान केन्द्र में भेजा है। यहां अन्तरिक्ष उड़ान विभाग में तृतीय श्रेणी के चालक का स्थान रिक्त है। अभी आप तृतीय श्रेणी के योग्य हैं, क्योंकि द्वितीय श्रेणी के चालक बनने के लिए आवश्यक है कि आप चन्द्रमा तक दस बार उड़ान भर चुके हों या कुछ वर्षों तक अंतर-कक्षकीय उड़ानों में भाग ले चुके हों। इस विभाग में अनेक कुशल चालक हैं; और केवल वे ही अन्तरग्रहीय उड़ान भरते हैं, जो बुद्ध एवं शनि ग्रह पर कार्य का वैज्ञानिक आधार बनाते हैं। इससे पूर्व कि वे सौर-विन्यास के सुदूर ग्रहों पर उड़ान भरें, उन्होंने सैकड़ों यात्रियों को चन्द्रमा व मंगल ग्रह पर पहुंचाया है।

लेकिन आप निराश न होइए। अभी आप युवा हैं तथा आपका भविष्य उज्ज्वल है। आपके लिए स्वचलित स्टेशन, जो अभी पिछले दिनों प्लूटो ग्रह तक पहुंच चुके हैं, शोधकार्य कर रहे हैं। सम्भव है कि कई बार मंगल ग्रह की यात्रा करने के पश्चात् आप वहीं पर किसी एक वैज्ञानिक विभाग में कार्य करने के लिए रुक जायें। हो सकता है, आपकी रुचि पृथ्वी के बाहर सभ्यता की खोज में हो जाये और आप ब्रह्माण्ड में वहां प्रथम उड़ान भरें, जहां से अज्ञात विवेकशील जीवों के संकेत प्राप्त किये गये हैं!

अब हम अतिशयोक्ति नहीं करेंगे। केवल इतना आपको स्मरण रहे कि वास्तविकता ने अभी पहली बार ही वैज्ञानिकों के विचारों एवं परि-कल्पनाओं को पार नहीं किया है। लेकिन स्वप्न को यथार्थ में परिणत करने के लिए, मानव को बहुत कड़ा प्रयत्न करना पड़ा है। सफलता प्राप्त करने के लिए आपको ज्ञान भी बढ़ाना होगा। हम भविष्य में और ज्ञान हासिल करेंगे, तथा यह ज्ञान भविष्य के लिए अत्यधिक लाभकारी होगा।

अंतरिक्ष विज्ञान का भविष्य हमारे ग्रह के सभी लोगों का भविष्य है। इसे प्राप्त करना प्रत्येक मानव, समूह तथा देश का कर्तव्य है।

सोवियत देश में कोई भी इस बात को नहीं भूला है। इसीलिए शान्तिपूर्ण कार्यो के लिए अंतरिक्षीय शोधकार्यो व अध्ययन पर इतना अधिक ध्यान दिया जाता है। सभी व्यक्ति भली प्रकार जानते हैं कि त्सीओलकोव्स्की कितने सही थे, जब उन्होने कहा था कि भविष्य में अन्त-रिक्ष विज्ञान "समाज को रोटी देगा तथा असीमित शक्ति देगा।"

●

भारत-सोवियत संयुक्त अंतरिक्ष-उड़ान

3 अप्रैल 1984 का दिन भारतीय-सोवियत मैत्री के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा जायेगा। इसी दिन प्रथम भारतीय अतरिक्ष-यात्री राकेश शर्मा सोवियत कास्मोड्रोम बाइकानूर से दो सोवियत अंतरिक्ष-यात्रियों कमांडर यूरी मालिशेव तथा इंजीनियर गिन्नादी स्त्रेकालोव के साथ यान "सोयूज-T-11" पर अतरिक्ष-यात्रा के लिए रवाना हुए। अंतर्राष्ट्रीय कर्मीदल के दोनों सोवियत सदस्यो ने इससे पूर्व भी "सोयूज-T" यान के नये नमूने का परीक्षण करते हुए उड़ान भरी। 1980 के ग्रीष्म में यू० मालिशेव तथा व्लादीमिर अक्स्योनोव ने नई श्रेणी के दूसरे यान "सोयूज-T" की परीक्षण-उड़ान में भाग लिया था, जिसके दौरान उन्होंने मानवचालित तथा स्वचलित, सभी प्रकार के संयंत्रों का परीक्षण किया तथा यान "सोयूज-T-2" का कक्षीय स्टेशन "साल्यूत-6" के साथ संयोजन किया। इसके कुछ महीनों पश्चात गिन्नादी स्त्रेकालोव भी यान "सोयूज-T-3" पर कक्षक में पहुँचे। पिछले तीन से अधिक वर्षों से अन्तरिक्ष में उड़ान भर रहे "साल्यूत-6" पर पहुँचकर लियोनिद किजीम, अलेग मकारोव तथा गिन्नादी स्त्रेकालोव ने स्टेशन के कुछ तंत्रों की मरम्मत की, जिससे वह आने वाली टोली के कार्य के लिए फिर तैयार हो गया। अप्रैल 1983 में गि० स्त्रेकालोव ने एक बार फिर अंतरिक्ष में उड़ान भरी। उस समय जब "सोयूज-T-8" तथा "साल्यूत-7" के आपस में निकट आने की क्रिया में कुछ विचलन हुआ, तब उनके संयोजन का कार्यक्रम रद्द करना पड़ा।

इस प्रकार राकेश शर्मा अनुभवी साथियों के साथ उड़ान के लिये रवाना हुए। स्टार्ट के 24 घंटे बाद यान "सोयूज-T-11"
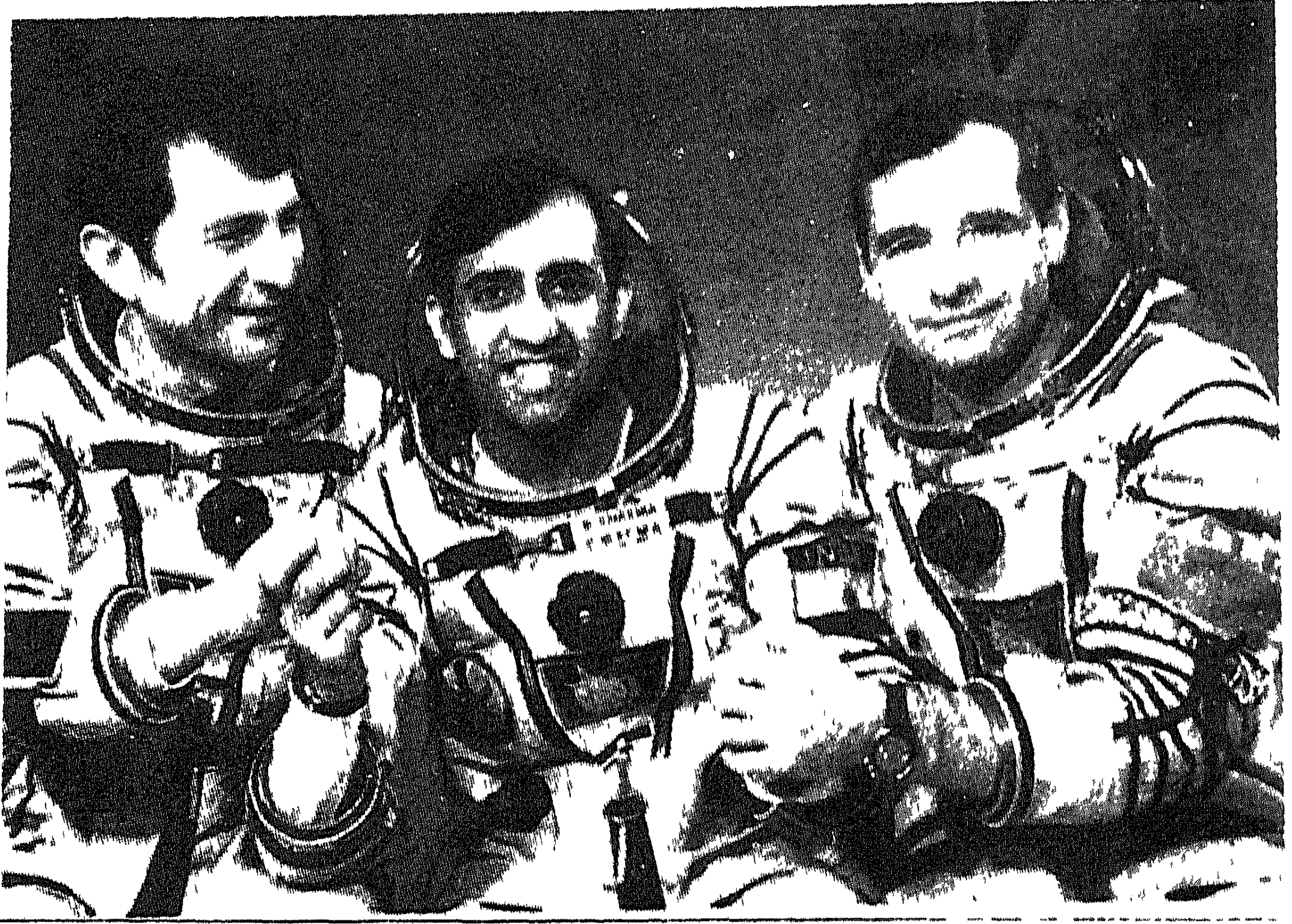
अंतरिक्ष यात्री यूरी मालिशेव, राकेश शर्मा तथा गिन्नादी स्त्रेकालोव

स्टेशन "साल्यूत-7" के पास पहुँचा और उनका संयोजन हुआ। इसके बाद संयोजित यानो ने पृथ्वी की और तीन परिक्रमाएं की जो अतिथि-यांत्रियो को शायद सबसे दीर्घकालीन लगी होंगी। स्टेशन के मालिकों और उनके बीच केवल धात्विक दीवारें थी, पर उनसे मिलने से पूर्व संयोजन-खंड की वायुद्धता की जांच करनी आवश्यक थी, जो एक लम्बी प्रक्रिया थी। अंत में, द्वार का ढक्कन एक ओर हट गया तथा सोवियत संघ व भारत के दूरदर्शकों को अपने टेलीविजनों के स्क्रीन पर राकेश शर्मा दिखाई दिये, जो तैरते से हुए विशाल स्टेशन के अन्दर प्रवेश कर रहे थे।

इस क्षण से यान पर छः व्यक्तियों ने एक साथ मिलकर कार्य आरम्भ कर दिया। इस छोटे से दल में एक पेशावर डाक्टर

की उपस्थिति ने यात्रा के अगले दिन से ही चिकित्सा-प्रयोगों को आरम्भ करने मे सहायता दी। इन प्रयोगों को अन्तर्राष्ट्रीय उडान के कार्यक्रम मे महत्वपूर्ण स्थान दिया गया।

डाक्टरो की गणनानुसार प्रत्येक तीसरा अतरिक्ष-यात्री यात्रा के प्रथम दिनो में अतरिक्ष यात्रा-रोग space sickness से पीड़ित होता है। अतरिक्ष-उडान से कोई भी वास्ता न रखने वाले बहुत से लोग भी इस प्रकार के रोग से परिचित है। समुद्री या हवाई यात्रा के दौरान उनको मतली आती है। कुछ लोग तो मोटरगाड़ी व रेल तक के सफर से भी घबराते है। खुद अंतरिक्ष-उड़ान तथा इससे संबंधित भारहीनता इस गति-रोग को नहीं उत्पन्न करती है। पर ऐसा तब होता है जब अंतरिक्ष-यात्री विश्राम कर रहा होता है। यह सब समझते हैं, कि काम करते हुए मनुष्य बहुत देर तक गतिहीन अवस्था में नही रह सकता। कक्षक में उसका सिर स्वाभाविक रूप से हिलता रहता है, जिसके कारण उसे मतली आती है।

कहना चाहिये, कि यह अंतरिक्ष-रोग इतना खतरनाक नहीं है, उड़ान के तीन दिन बाद मतली कम आती हैं तथा छटें, सातवें दिन आम तौर से बिल्कुल खत्म हो जाती है। परन्तु उन दिनों भारहीनता अंतरिक्ष-यात्रियों को काफी परेशानी देती है, और अगर उड़ान अल्पकालीन होती है, तो यात्रा के दौरान अन्तरिक्ष-यात्री की तबीयत खराब रहती है।

किसी भी बीमारी का इलाज शुरू करने से पूर्व उसके कारण जानना आवश्यक होता है। यह बात अंतरिक्ष के इस गति-रोग पर भी लागू है। हालांकि इस रोग की उत्पत्ति अभी तक पूर्णतः स्पष्ट नहीं हुई है। सोवियत-भारतीय कर्मीदल की उड़ान को इस रोग के आन्तरिक कारणों के अध्ययन में महत्वपूर्ण योग देना

था। इस उद्देश्य से कक्षीय स्टेशन "साल्यूत-7" पर "ओप्टोकिनेज" व "आन्केता" नामक प्रयोग किये गये।

प्रथम प्रयोग के आधार पर शरीर के प्रघाण (vestibular) तथा चाक्षुष (visual)-तत्रों के पारस्परिक सबधों का अध्ययन किया गया। इस विषय को हम यहा सविस्तार समझायेगे। मनुष्य के कान के अन्दर शरीर को एक निश्चित स्थिति मे स्थिर रखने के लिये एक विशेष अग है जिसको प्रघाण-तंत्र कहते है। इसके एक भाग की क्रिया गुरुत्व-बल तथा दूसरे भाग की क्रिया सम्पूर्ण शरीर या सिर के हिलने की तीव्रता पर निर्भर करती है। यह स्वाभाविक है कि भारहीनता की अवस्था मे गुरुत्वाकर्षण से सबधित प्रघाण-तत्र का भाग उस तरह कार्य नही करता है जैसाकि पृथ्वी पर, जिसके कारण वह मस्तिष्क मे विकृत सकेत भेजता है। एक तंत्र के दोनों भागो की इस असगति को ही अन्वेषक अतरिक्ष गति-रोग का कारण समझते है।

जब उडान के समय अंतरिक्ष-यात्री पृथ्वी की सतह का प्रेक्षण कर रहे होते है, तब उनकी स्थिति और भी बिगड़ जाती है, क्योकि उनकी आखो के सामने जो चित्र आता है, वह स्थिर न होकर गतिमान होता है। इसका अर्थ यह है कि आंखो को भी, जो अंतरिक्ष-यात्री को दिक् मे उसके शरीर की स्थिति निश्चित करने में सहायता देती, असामान्य सूचना मिलती है, जिससे यात्री को सहायता के बजाय मितली और अधिक आती है। इस प्रकार प्रघाण तथा चाक्षुष-तंत्रों के बीच भी असंगति उत्पन्न हो जाती है। इस प्रक्रिया के विकास के अध्ययन के लिये ही "ओप्टोकिनेज" नामक प्रयोग किया गया।

अतरिक्ष-यात्रियो को यान के वीडियो टेप-रिकार्डर के स्क्रीन

पर विभिन्न प्रकार की ज्यामितीय आकृतियां दिखाई दे रही थीं, जो कक्षीय स्टेशन की खिड़कियों से पृथ्वी की दौड़ती सतह के चित्रों की नकल कर रही थी। अंतरिक्ष-यात्री स्थिर रहते हुए या निश्चित ताल में सिर हिलाते हुए स्क्रीन को देख रहा था। इस समय प्रघाण तथा चाक्षुष-तंत्रों की कार्यविधि को अंकित किया जा रहा है।

अगर "ओप्टोकिनेज" प्रयोग का उद्देश्य था–अंतरिक्ष गति-रोग (मतली) के विकास के बारे में वस्तुगत तथ्यों को एकत्रित करना, तो उसको पूर्ण करने वाले प्रयोग "आन्केता" के अन्तर्गत अंतरिक्ष-यात्रियों को उड़ान से पूर्व, उड़ान के दौरान और इसके बाद अपनी हालत का खुद ही ठीक-ठीक अन्दाजा लगाना था। "आन्केता" (प्रश्नपत्र) के प्रश्नों के उत्तरों ने अन्तर्राष्ट्रीय कर्मीदल के सदस्यों को मतली आने की अनुभूति, उड़ान की परिस्थितियों तथा काम की विधि पर उनकी निर्भरता की ओर अपना ध्यान केंद्रित करने में सहायता दी।

इन शोधकार्यो के परिणाम अन्तरिक्ष-उड़ान के समय मतली रोग की उत्पत्ति के कारणों को समझने में, उससे बचाव के उपयुक्त साधन ढूढ़ने में अंतरिक्ष-यात्रियों के चाक्षुष प्रेक्षण में तथा उनको उचित परामर्श देने में बहुत महत्व रखेंगे। इसके अतिरिक्त ये परिणाम अंतरिक्ष-यात्रियों के चुनाव तथा प्रशिक्षण में भी अति सहायक सिद्ध होंगे।

अगर एक व्यक्ति घूमती हुई मेज पर लेट कर अपना सिर नीचे गिराये, उसके हृदय के धड़कन की गति बदल जायेगी, यहां तक कि वह बेहोश हो सकता है। पांच पूरी तरह स्वस्थ लोगों में से एक के साथ ऐसा अवश्य होता है। इसका कारण यह है कि उलटी अवस्था में व्यक्ति के रक्त-संचार में तीव्र

परिवर्तन आता है। जब हम सामान्य ऊर्ध्वाधर अवस्था में होते हैं, अर्थात् चल रहे होते है, या खड़े या बैठे होते है, हृदय की ओर वापस लौटने वाले रक्त को अपने निजी भार के कारण अतिरिक्त विरोध का सामना करना पड़ता है। जब सिर नीचे की ओर होता है तथा टांगें ऊपर की ओर, तब यह भार, विलोमतः, टांगों की शिराओं से रक्त की वापसी सरल कर देता है, जिससे हृदय से इसके बहाव मे कठिनाई उत्पन्न हो जाती है। इसी के कारण ऊपर ज़िक्र की गयी प्रक्रिया होती है।

भारहीनता की अवस्था मे रक्त भी भारहीन होता है जिसके कारण शरीर मे इसका प्रवाह सामान्य अवस्था से भिन्न होता है। इसकी मात्रा शरीर के ऊपरी भाग में बढ़ जाती है तथा यह सिर की ओर भी ज्यादा बहने लगता है। उड़ान के दौरान, विशेषतः प्रथम दिनों में अंतरिक्ष-यात्रियों को बुरी हालत से बचाने के लिये विभिन्न साधनों का प्रयोग किया जाता है। इनमें से कुछ साधनों के प्रभावों का अध्ययन अंतर्राष्ट्रीय कर्मीदल के सदस्यो ने "प्रोफिलाक्टिक" नामक प्रयोग के अन्तर्गत किया।

सोवियत अंतरिक्ष-चिकित्सा ने भारहीनता की अवस्था में रक्त-पुनः वितरण के विश्लेषण और इससे संघर्ष के प्रभावशाली ढंगों को प्रस्तुत किया है। प्रथम यान "साल्यूत" पर ही ड्रम के आकार का एक विशेष प्रस्थापन लगाया गया था, जिसमें से वायु को निकाला जा सकता था। अंतरिक्ष-यात्री इस प्रस्थापन में कमर तक घुस जाते थे, जिससे उनके शरीर में रक्त निम्न दाब वाले अंगों की ओर दौड़ने लगता था, अर्थात शरीर के ऊपरी भाग से निचले भाग की ओर।

"साल्यूत-7" भी विशेष प्रोफिलाक्टिक साधनों से सुसज्जित था। उड़ान के प्रथम दिनों में इस उद्देश्य के लिये पतली रबड़

से बनी हवा से फूलने वाली कफें इस्तेमाल की गयी थी। अतरिक्ष-यात्री समय-समय पर इन कफों को हवा से फुला कर अपने कूल्हों को दबाते रहते थे, जिससे उनकी टागों से रक्त प्रवाह में रुकावट आ जाती थी। इसके परिणामस्वरूप उनकी तबीयत संभलने लगती थी। विशेष औषधियो का प्रयोग उनकी तबीयत को और भी शीघ्रता से ठीक कर देता था। ये औषधिया शरीर वाहिकाओं की लोच-शक्ति बढा देती थी।

यह सिद्ध हो चुका है कि शारीरिक व्यायाम भारहीनता के दुष्प्रभावों को दूर करने का एक प्रमाणित व विश्वसनीय उपाय है। साइकिल के लोकप्रसिद्ध अन्वेषक ने शायद ही कभी यह सोचा होगा, कि उसके दिमाग की खोज अंतरिक्ष तक पहुँच जायेगी। निस्सन्देह, वेलोएरगोमीटर को साइकिल नहीं कहा जा सकता। यह एक प्रकार का विशेष व्यायाम-साधन है, जिसके आधार पर शारीरिक भार की ठीक-ठीक जांच की जा सकती है। व्यायाम के समय अंतरिक्ष-यात्री के शरीर के सभी महत्त्वपूर्ण तंत्रों की अवस्था पर पृथ्वी से नियंत्रण रखा जाता है। अंतरिक्ष-यात्री खुद भी इस प्रकार का नियंत्रण रखते है। सोवियत-भारतीय उड़ान के दौरान अंतरिक्ष-यात्री इस उद्देश्य से एक-दूसरे के ई० सी० जी० लेते थे। ये हृदय-लेख अस्पताल की तरह कागज पर नही, बल्कि चुम्बकीय टेप पर अकित किये जाते थे, जिसे अंतरिक्ष-यात्रियों का अंतर्राष्ट्रीय कर्मीदल तदन्तर अध्ययन के लिये पृथ्वी पर ले आया।

जिस समय कमांडर तथा अंतरिक्ष-इंजीनियर पैडल चला रहे थे, राकेश शर्मा योग अभ्यास में व्यस्त थे। आम तौर से अंतरिक्ष-यात्री काफी फुर्ती से व्यायाम करते हैं। हालांकि हमारी पेशियां न केवल इस प्रकार के फुर्तीले कार्य के लिये उपयुक्त

हैं बल्कि जब हम खड़े होते है, बैठे या लेटे तक होते है, हमारी बहुत सी पेशियां शरीर या उसके किसी अंग को एक निश्चित स्थिति मे रखते हुए अपना कार्य चालू रखती है। यह भी एक प्रकार की क्रिया है–प्रवेगिक नही, स्थैतिक। इस समय पेशियों की कार्यविधि सदा की भांति आतरिक अंगों की कार्यविधि से जुड़ी रहती है। नीचे दिये उदाहरणों से स्पष्ट होगा, कि यह संबंध शरीर के लिये कितना अधिक महत्वपूर्ण है।

स्थैतिक व्यायाम के समय मनुष्य के जठर रस की निम्न या उच्च अम्लता सामान्य हो जाती है, जिसके कारण रक्त स्कंदन तीव्र हो जाता है तथा उसमें श्वेताणुओं की संख्या बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त रक्त में कुछ अन्य परिवर्तन भी उत्पन्न होते हैं, जो रक्त की उच्च रोधक्षमता को सिद्ध करते है। स्थैतिक व्यायाम के इस गुण के कारण इसको चिकित्सा-व्यायाम में भी अपनाया जाता है।

योग-अभ्यास इसी प्रकार के स्थैतिक व्यायाम के अन्तर्गत आता है। राकेश शर्मा ने कक्षक में पांच प्रकार के आसनों का प्रयोग किया–कर्णवायाम, परिवृत त्रिकोण, पाद हस्त, प्राणायाम आदि। इन आसनों के कारण उनकी कमर, जांघ व घुटनों की अधिकांश पेशियां अच्छी तरह कसी गई। अंतरिक्ष-उड़ान के समय जब यह पेशियां या तो पूर्णतः या अंशतः निष्क्रिय रहती हैं, योग अभ्यास इस कमी को पूरा कर सकता है।

अगर सोवियत-भारतीय अनुसंधान-कार्यों के परिणामस्वरूप यह सिद्ध हो जायेगा कि अंतरिक्ष-यात्रियो को स्वस्थ व फुर्तीला रखने के लिये स्थैतिक व्यायाम कारगर है, तो अन्तरिक्ष यात्रियों के दूसरे कर्मीदलों को अन्य व्यायाम-क्रियाओं के साथ इसे भी अपनाने को कहा जायेगा। यहां यह कहना आवश्यक है कि टक

और गति मे भाग लेने वाले हमारे अगो के भलीभांति कार्य के लिये स्थैतिक तथा प्रवेगिक व्यायाम का मेल सर्वाधिक उपयुक्त है।

योग अभ्यास का प्रयोग भारहीनता-अवस्था के दुष्प्रभावो को दूर करने के अतिरिक्ति उडान के दौरान पेशियो की कार्य-विधि का अध्ययन करने मे भी किया गया। महान रूमी शरीरक्रिया-वैज्ञानिक इवान सेचेनोव ने मनुष्य के जीवन में पेशियो की कार्यविधि को अत्यधिक महत्वपूर्ण बताया। उन्होने इस सबंध में लिखा: "बच्चा खिलौना देख कर हंसता है, या ग्रीबाल्दी मुस्कराते हैं, जब उनको मातृभूमि से ज्यादा प्यार के कारण देश से जाने पर मज़बूर किया जाता है, या न्यूटन दुनिया भर के नियम खोज कर कागज पर लिखते हैं—हर जगह पेशियों की कार्यविधि का ही चमत्कार है।" इसका अर्थ यह है कि न केवल शारीरिक श्रम, चलना, दौड़ना आदि ही पेशियों की कार्यगति के बिना संभव नही है, बल्कि भावो की अभिव्यक्ति तथा मानसिक कार्य भी इनके बिना असंभव हैं।

अंतरिक्ष-उड़ान के समय योग-अभ्यास के दौरान पेशियों की कार्यगति को भलीभांति समझने के लिये भारतीय अंतरिक्ष-यात्री की पेशियों की गति व वैद्युत पैरामीटर को अंकित किया गया। इन आंकड़ों के आधार पर चिकित्सक न केवल अंतरिक्ष-यात्रियों के लिये व्यायाम का श्रेष्ठतम कार्यक्रम बना सकेंगे, बल्कि खिलाड़ियों के प्रशिक्षण व चिकित्सा-व्यायाम में भी आवश्यक सुधार लायेंगे।

अन्तर्राष्ट्रीय कर्मीदल की उड़ान के दौरान उनके हृदवाहिका-तंत्र की ओर विशेष ध्यान दिया गया। यह स्वाभाविक है। इसका प्रथम कारण यह है कि हृदवाहिका-तंत्र मानव के शरीर के सर्वाधिक उत्तरदायी तंत्रों मे से एक है। दूसरा कारण यह है

कि इसका अन्य तंत्रों के साथ इतना गहरा संबंध है, कि इसकी कार्यविधि में विचलन आने से पूरे शरीर के स्वास्थ्य का पता चल सकता है, तीसरा कारण यह है कि रक्तवाहिनी-तंत्र की अवस्था के बल पर बताया जा सकता है कि आगे चलकर अतरिक्ष-यात्री कैसा महसूस करेगा, पृथ्वी पर लौटने की कठिनाइयों का कैसे सामना करेगा, जब उतरने के अतिभार के स्थान पर सामान्य गुरूत्व-बल होगा।

सोवियत-भारतीय उड़ान के कार्यक्रम के अन्तर्गत हृदयवाहिका-तत्र के अध्ययन के लिये "वैक्टर" व "बाल्लीस्टो" नामक दो प्रयोग किये गये। प्रथम प्रयोग में हृदय की गतिविधियों का अध्ययन व इसके वैद्युत क्रियाकलाप में हुए परिवर्तनों का माप किया गया। इसके लिये अंतरिक्ष-यात्रियों ने सुवाह्य कार्डियोग्राफ का प्रयोग किया, जिसका निर्माण भारतीय कम्पनी हिन्दुस्तान एरोनाटिक्स लिमिटेड (HAL) ने किया है। विश्राम करते समय तथा वेलोएरगोमीटर चलाते समय यात्रियों के कार्डियोग्राफ लिये गये।

1957 में भारहीनता की अवस्था में सर्वप्रथम कार्डियोग्राफ कुत्तिया "लाइका" का लिया गया था। तब से अंतरिक्ष-यात्रियों के प्रशिक्षण और उनकी वापसी के बाद उनकी डाक्टरी जांच में इस विधि का व्यापक रूप से प्रयोग किया जा रहा है।

"वैक्टर" प्रयोग के अन्तर्गत ई० सी० जी० के अतिरिक्त अंतरिक्ष-यात्रियों की हृदय धड़कन के फलस्वरूप उनकी छाती में उत्पन्न कम्पन भी अंकित की गई, जिसके आधार पर हृदय की गतिविधि के बारे में नई जानकारी प्राप्त हुई।

"बाल्लीस्टो" प्रयोग की मदद से इस बात का अध्ययन भी किया गया कि भारहीनता की अवस्था में मानव-वक्ष में हृदय

की स्थिति में परिवर्तन उसकी गतिविधि को कैसे प्रभावित करता है। इसके लिये हृदय की गति के फलस्वरूप शरीर के विस्थापनो को अंकित किया गया। हमारे रोजमर्रा के जीवन में यह नगण्य विस्थापन हमें महसूस नही होता है, परन्तु भारहीनता की अवस्था मे अन्तरिक्ष-यात्रियों के शरीर के विभिन्न भागों में फिट विशेष संवेदको द्वारा इनको अनुभव तथा अंकित किया जा सकता है। इसके परिणामस्वरूप हृदय के सिकुड़ने की शक्ति के बारे मे नई सूचना प्राप्त होती है तथा भारहीनता की अवस्था मे इस जीवित मोटर के दायें तथा बायें भाग के कार्य के समन्वय का पता चलता है।

सोवियत-भारतीय उड़ान के दौरान शरीर के विभिन्न तंत्रों व अगों के अतिरिक्त अन्तरिक्ष-दल के सदस्यों की मानसिक अवस्था का भी अध्ययन किया गया। मनुष्य पृथ्वी पर रहता है। उसके चारों ओर रिश्तेदार, मित्र, साथी होते हैं। वह आफिस, सिनेमा, थियेटर जाता है, खेल-कूद मे भाग लेता है, हंसी-मज़ाक करता है तथा अपने ढंग से, अपने राष्ट्रीय रीति-रिवाजों से छुट्टियां मनाता है। लेकिन जैसे ही वह अंतरिक्ष-उड़ान पर रवाना होता है वह उन सब बातों से वंचित हो जाता है, जिनका वह बहुत समय से आदी बन चुका है। अब उसकी दुनिया कक्षक स्टेशन के वायुरुद्ध कक्षो तक सीमित हो जाती है, इसके चारों ओर केवल कर्मीदल के कुछ गिने-चुने सदस्य होते हैं, उसके कार्य व विश्राम पूर्णतः उड़ान के सख्त कार्यक्रम पर निर्भर करते हैं। इसके अतिरिक्त यह कार्य उसे भारहीनता की अवस्था में एक मछली की भाति तैर कर करना पड़ता है, उसके पैरों के नीचे कोई दृढ़ सहारा नही होता है, और उसके शरीर की स्थिति के अनुसार ऊपरी भाग नीचे व निचला भाग ऊपर हो जाता है।

यह स्वाभाविक है कि इस प्रकार के विशेष वातावरण का आदी होना या जैसाकि डाक्टर लोग कहते है मानसिक रूप से अभ्यस्त होना परम आवश्यक है। प्रत्येक अंतरिक्ष-यात्री के साथ यह प्रक्रिया अलग-अलग ढग से घटती है। अगर एक यात्री शीघ्रता से व बिना किसी तकलीफ के इसका अभ्यस्त हो जाता है तो दूसरा धीरे-धीरे तथा मुश्किलों के साथ। अन्तर्राष्ट्रीय कर्मीदलों के सदस्यो मे मानसिक रूप से एक दूसरे को समझने में प्रायः काफी कठिनाई होती है, क्योंकि ऊपर वर्णित परेशानियों के अतिरिक्त राष्ट्रीय भेद तथा खाने-पीने व रहने के ढंग में भी भेद होता है, भाषा की समस्या का समाधान भी आवश्यक होता है।

निस्सन्देह, अन्य लोगो की तुलना में, अतरिक्ष-यात्री स्वयं ही इस बात का बेहतर ज्ञान रखते है, कि उड़ान की विभिन्न परिस्थितियो का उनकी मानसिक अवस्था पर क्या प्रभाव पड़ रहा है। परन्तु वे हमेशा इस बात की ओर ध्यान नहीं दे पाते है। वे प्रायः अपनी दिन-चर्या में इतने अधिक व्यस्त रहते हैं, कि उन्हें ऐसा सोचने की फुरसत ही नही मिल पाती। अगर कोई कक्षक में जीवन के इस पहलू की ओर अपना ध्यान देता भी है, तो वह खुद के हाल को सदा ठीक-ठीक समझ नही पाता है।

इस समस्या के समाधान के लिये सोवियत संघ व पोलेंड के मनोवैज्ञानिकों ने वास्तविक आंकड़ों को एकत्रित करने के उद्देश्य से सोवियत-पोलेंड अंतरिक्ष-उड़ान से पूर्व एक विशेष प्रश्नावली तैयार की, जिसमें उन्होने भारहीनता की अवस्था में गति की विशेषता, नीद आने, भूख लगने आदि प्रश्नों को सम्मिलित किया। इसके अतिरिक्त प्रश्नावली मे अंतरिक्ष-यात्रियों की व्यक्तिगत इच्छाओं, अपने साथियों के व्यवहार के प्रति प्रतिक्रिया,

अपने ही व्यवहार के मूल्यांकन, कार्य-अभ्यास, जुबान या इशारों द्वारा एक-दूसरे से बातचीत आदि सबधित प्रश्नों को भी स्थान दिया गया।

पोलेंड व सोवियत संघ के अंतरिक्ष-यात्रियों की संयुक्त उड़ान के पश्चात अन्य अन्तर्राष्ट्रीय कर्मीदलों ने भी इस चिकित्सा-मनोविज्ञानी प्रश्नावली का लाभ उठाया। आगे चलकर उड़ानों में भाग लेने वाले देशों के वैज्ञानिकों ने इस प्रश्नावली में कुछ नये प्रश्न जोड़ कर इसे और भी श्रेष्ठ बनाया। भारतीय मनोवैज्ञानिकों ने भी इस प्रश्नावली में अपना योग दिया। राकेश शर्मा ने अपने साथियों के साथ रोज अपने हाल व मिजाज का अध्ययन 92 लक्षणों के आधार पर किया, जैसे मनोभाव को प्रकट करने की अवस्था, चिंता का स्तर आदि। प्रश्नों के उत्तरों का मूल्यांकन अंतरिक्ष-यात्रियों ने 5 नम्बरों वाली परीक्षा-विधि के आधार पर किया। उन्होंने अध्ययन के समय अपनी अवस्था को ध्यान में रख कर प्रत्येक उत्तर को उचित नम्बर दिये तथा इन नम्बरों को लॉग-बुक में लिख लिया।

इन प्रयोगों के परिणाम कक्षीय प्लेटफार्मों पर कार्य व विश्राम करने की प्रणाली को परिशुद्ध करने में सहायक सिद्ध होंगे। इसके साथ-साथ वे परिणाम भावी अल्पकालीन व दीर्घकालीन अंतरिक्ष-उड़ानों के समय खाने-पीने व रहने के लिये आवश्यक परिस्थितियों के बारे में दिये सुझावों को सुपरिष्कृत करने में भी लाभदायक सिद्ध होंगे।

अंतरिक्ष से पृथ्वी के अध्ययन संबंधी प्रयोग को राकेश शर्मा व उनके सोवियत साथियों ने "टेर्रा" नाम दिया। इसके अन्तर्गत उन्होंने पृथ्वी के 1500 से अधिक चित्र खींचे। उन्होंने अंडमान, निकोबार द्वीप व लक्षाद्वीप के चित्र लिये। इन द्वीपों के तटों पर

कम गहराई पर तेल के भडार मिलने की आशा है। उन्होंने भारतीय प्रायद्वीप के मध्यवर्ती इलाको मे गोल आकृतियो, जंगलों, गंगा की डेल्टा तथा हिमालय की पर्वतमाला, जहां से देश की विभिन्न नदिया निकलती है, के चित्र खीचे। भारत के रेगिस्तानी इलाके का तथा वहा पानी के अस्थायी स्रोतों का अध्ययन किया गया, हिन्द महासागर के एक्यूटेरियम का भी अध्ययन किया गया, जिसके आधार पर विभिन्न क्षेत्रों में जीवविज्ञानी उत्पादकता को निश्चित किया गया।

अतरिक्ष से चित्र खीचने के अतिरिक्त इन सब क्षेत्रों का इसी से मिलता-जुलता अध्ययन व फोटोग्राफी विशेष उपकरणों से युक्त हवाई जहाजों-प्रयोगशालाओं द्वारा की गयी। पृथ्वी के रास्ते इन स्थानों पर सामान्य अभियान दल भी भेजे गये। इन मिश्रित शोधकार्यो के परिणाम शुद्ध भौगोलिक मानचित्रों को बनाने मे तथा भारत की भूमि का सही लाभ उठाने में उपयोगी सिद्ध होंगे। कक्षक से प्राप्त चित्र महासागर तथा सागर तट के क्षेत्र के अध्ययन में, नदियों की गति के आधार पर जलविद्युत स्टेशन बनाने में तथा शुष्क भूमि की सिंचाई के लिये नये उपाय ढूंढ़ने में लाभदायक होंगे।

कक्षक से राकेश शर्मा ने भारत का वर्णन इन शब्दों में किया – "जब अंतरिक्षी ऊंचाई से पृथ्वी की ओर देखते हैं तो भारतवर्ष को बड़ी सरलता से पहचाना जा सकता है, क्योंकि अंतरिक्ष से पृथ्वी की आकृति उसके भौगोलिक मानचित्र से काफी मिलती-जुलती है। कुछ मिनटों के अन्दर उत्तर से दक्षिण तक पूरे देश के ऊपर से उड़ते हुए हमने नीले महासागर को इसके तटों को धोते देखा, मध्यवर्ती इलाकों की पन्नी हरियाली तथा हिमालय की चमकीली बर्फ का हमने अवलोकन किया। हमारा

देश अति सुन्दर है।" परतु इसका मतलब यह नही हुआ कि केवल मातृभूमि की सुन्दरता से ही गदगद होकर राकेश शर्मा ने अपने वैज्ञानिक कार्यक्रम में "टेर्रा" प्रयोग पर विशेष ध्यान दिया। प्राकृतिक स्रोतो का अध्ययन करते हुए उन्होंने अनुभव किया कि अंतरिक्ष-खोज उनके देशवासियों के लिये कितनी अधिक लाभदायक है। महान भारतीय विचारक-लोकोपकारी स्वामी विवेकानन्द का कथन राकेश शर्मा के विचारों से कितना अधिक मिलता-जुलता है – "भारतवर्ष की भूमि मेरे लिये सबसे ऊंचा आकाश है।"

सोवियत-भारतीय संयुक्त उड़ान के वैज्ञानिक कार्यक्रम का तीसरा चरण था – अंतरिक्ष तकनीक। "साल्यूत-7" विभिन्न प्रकार के तकनीकी उपकरणों से सुसज्जित था। इनमें से एक "इस्पारीतेल" (evaporator – वाष्पक) का प्रयोग अंतरिक्ष में विभिन्न सतहो को धात्विक तथा अन्य पदार्थो की परतों से ढकने के लिये किया गया। भविष्य में मरम्मत के कार्य में इस बात की आवश्यकता उत्पन्न हो सकती है, जब उड़ते हुए अंतरिक्ष स्टेशनों की बाहरी सतह को नया रूप देना होगा। दीर्घकालीन अंतरिक्ष उड़ानों के समय सूक्ष्म उत्कापिंडों की बमबारी से, अंतरिक्ष विकिरण तथा तापमान में तीव्र परिवर्तन से स्टेशन की बाहरी सतह का नाश हो जाता है। भावी अंतरिक्ष-विद्युत स्टेशनों तथा रात्रि में पृथ्वी का प्रदीपन करने के लिये विशाल परावर्तकों के निर्माण हेतू अंतरिक्ष में कई किलोमीटर लम्बे परावर्ती समतलों की आवश्यकता होगी तथा विशाल कक्षीय दूरदर्शकों के दर्पणों पर बारीक धात्विक परत चढ़ानी पड़ेगी।

अंतरिक्ष में काफी समय से "वाष्पक" उपकरण का प्रयोग प्रचलित है क्योंकि इसने बहुत उपयोगी परिणाम दिये हैं। सोवियत-

भारतीय कर्मीदल की उड़ान में इसका प्रयोग एक विशेष प्रकार की प्रगलन भट्ठी के रूप में किया गया। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये इसके निर्माणकर्ताओं, कीव के पातोन नाम के विद्युत वेल्डन संस्थान के कर्मियों ने एक विशेष युनिट बनायी। कार्यस्थिति में यह यूनिट बाहर की तरफ से खुले गेट-वाल्व चैम्बर में स्थित रहती थी तथा इस प्रकार प्रगलन क्रिया वाह्य अंतरिक्ष दिक के निर्वात में घटित हुई।

भारतीय वैज्ञानिकों ने अंतरिक्ष में तापन व शीतन की विशेष अवस्थाओं के अध्ययन की एक नई विधि प्रस्तुत की, जिसके परिणामस्वरूप धात्विक ऐलॉय एक असामान्य आकृति में परिवर्तित हो जाते हैं, उनकी दृढ़ता तथा अन्य यांत्रिक गुण श्रेष्ठ हो जाते हैं तथा विकिरण व उच्च ताप के प्रति उनकी रोधता उच्च हो जाती है। पृथ्वी पर ऐलॉय से इस प्रकार की आकृति को प्राप्त करना बहुत कठिन होता है, अगर यह संभव है भी तो केवल धातु की महीन परतों की सतह के ऊपर। भारहीनता की अवस्था में ऐलायों की सम्पूर्ण मात्रा विशेषज्ञों को उसी रूप में दिखाई दी, जिसकी उन्हें आशा थी। भारतीय धातुकर्मियों के प्रस्ताव पर वैज्ञानिकों ने प्रयोग के लिये अपने जाने-पहचाने रजत तथा जर्मेनियम के ऐलॉय को चुना। अंतरिक्ष से वापस आते समय राकेश शर्मा व उनके साथी पृथ्वी पर कक्षक में वेल्डन कार्य द्वारा प्राप्त क्वार्ट्ज कैप्स्यूल लाये। वैज्ञानिक इन कैप्स्यूलों का अध्ययन प्रयोगशालाओं में कर रहे हैं, जिसके आधार पर वे इस नये पदार्थ की संरचना व गुणों की व्याख्या कर सकेंगे।

11 अप्रैल 1984 की सुबह को अंतरिक्ष-यान "सोयूज-T-11" कजाखस्तान के मैदानों में उतरा। भारतीय लोगों के लिये इस महान कार्य का अंतरिक्ष-दिवस के पूर्वदिन घटित होना एक

अतिविशेष घटना थी। इसके ठीक 23 वर्ष पूर्व यूरी गगारिन ने अंतरिक्ष में सर्वप्रथम ऐतिहासिक उड़ान की थी। भारत की अपनी यात्रा के दौरान विश्व के प्रथम अंतरिक्ष-यात्री ने कहा था कि एक दिन एशिया की इस महान शक्ति का प्रतिनिधि भी अंतरिक्ष यात्रा के लिये रवाना होगा। आज वह दिन आ गया है। सोवियत लोग इस बात से अति प्रसन्न हैं कि यह उड़ान सोवियत-भारतीय मित्रता की दृढ़ता का एक सुन्दर प्रमाण है। भारत के अंतरिक्ष अनुसंधान-संस्थान के निर्देशक प्रोफेसर यू० आर० राव के निम्न शब्द इस बात की पुष्टि करते है कि भारतीय लोगों के विचार सोवियत लोगों के विचार से कितने मिलते-जुलते हैं – "राकेश शर्मा की यात्रा हमारे लिये एक प्रशिक्षण उड़ान है, जैसे कि किसी समय भारत के प्रथम स्पुत्निक "आर्यभट्ट" की उड़ान थी। हम अंतरिक्ष-अन्वेषण में सोवियत सहायता के लिये हार्दिक आभारी है। हमारा देश इस महान कार्य में भाग लेने के लिये सदा तत्पर रहेगा।"